संग्राम

(एक सामाजिक नाटक)

लेखक

प्रेमचन्द

प्रकाशक

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी

ज्ञानवापी काशी

द्वितीय बार] १९३९ [मूल्य [illegible])

शाखा

२०३ हरिसनरोड कलकत्ता
गनपतरोड लाहौर
दरीबा कलाँ, दिल्ली
बाँकीपुर, पटना

मुद्रक – रामशरण सिंह यादव
बालीक प्रेस
साक्षीविनायक, काशी

भूमिका

आजकल नाटक लिखनेके लिये संगीतका जानना जरूरी है। कुछ कवित्व शक्ति भी होनी चाहिये। मैं इन दोनों गुणोंसे असाधारणतः वंचित हूँ। पर इस कथाका ढंग ही कुछ ऐसा था कि मैं उसे उपन्यासका रूप न दे सकता था। यही इस अन-धिकार चेष्टाका मुख्य कारण है। आशा है सहृदय पाठक मुझे क्षमा प्रदान करेंगे। मुझसे कदाचित् फिर ऐसी भूल न होगी। साहित्यके इस क्षेत्रमें यह मेरा पहला और अन्तिम दुस्साहस-पूर्ण पदाक्षेप है।

मुझे विश्वास है यह नाटक रंगभूमिपर खेला जा सकता है। हां रसज्ञ "स्टेज मैनेजर" को कहीं-कहीं कुछ काट-छांट करनी पड़ेगी। मेरे लिये नाटक लिखना ही कम दुस्साहसका काम न था। उसे स्टेजके योग्य बनानेकी धृष्टता अक्षम्य होती।

मगर मेरी खताओंका अन्त अभी नहीं हुआ। मैंने एक तीसरी खता भी की है। संगीतसे सर्वथा अनभिज्ञ होते हुए भी मैंने जहां कहीं जीमें आया है गाने दे दिये हैं। दो खताएँ माफ करनेकी प्रार्थना तो मैंने की। पर तीसरी खता किस मुंहसे मुआफ़ कराऊं। इसके लिये पाठकवृन्द और समालोचक महो-दय जो दण्ड दें शिरोधार्य्य है।

विनीत—

प्रेमचन्द

निवेदन

आज हम पाठकोंके सामने हिन्दी पुस्तक एजेन्सीमालाकी २६ वीं संख्या "संग्राम नाटक" लेकर उपस्थित होते हैं। आज हिन्दी संसारमें नाटककी पुस्तकें धड़ाधड़ निकल रही हैं पर पढ़ने योग्य नाटक कितने हैं यह विज्ञ पाठक और चतुर समालोचक ही बता सकते हैं।

नाटक लिखनेके लिये कितनी योग्यताकी आवश्यकता है और नाटककारमें क्या-क्या गुण होने चाहिये यह प्रकाशकके निवेदनका आलोच्य विषय नहीं है। पर प्रसङ्गवश इतना लिख देना आवश्यक समझते हैं कि जिसने मनुष्यके चित्तके विविध प्रकारके भावोंके मनन तथा अध्ययन करनेका श्रम नहीं उठाया, जो प्रकृतिका सच्चा पर्यवेक्षण नहीं कर सकता, जिसकी वर्णन-पटुतामें इतनी योग्यता नहीं कि वह मनुष्यके हृदयस्थ प्रत्येक भावोंको कागजपर अपनी लेखनी द्वारा मूर्तिकी भांति लाकर खड़ा कर दे वह सच्चा नाटककार नहीं हो सकता और न उसके लिखे नाटक, नाटककी श्रेणीमें गिने जाने योग्य हो सकते हैं। प्रस्तुत नाटक हिन्दीके प्रसिद्ध लेखक श्रीयुत प्रेमचन्दजीकी रचना है। प्रेमचन्द्रजीसे हिन्दी संसार भली-भांति परिचित है। जिन्होंने उनके रचे उपन्यास पढ़े हैं। वे सहजमें ही समझ सकेंगे कि

उनकी कलमसे अङ्कित यह नाटक कैसा होगा। इससे अधिक लिखना अपने मुँहसे अपनी प्रशंसा करना होगा।

हमारी इच्छा थी कि चित्र आदिसे युक्त करके इस नाटकको बड़े सज-धजके साथ निकाला जाय पर लेखक महाशयने चाहा कि इस पुस्तककी जांच इसके चित्ताकर्षक चित्रों और अन्य सजानेकी सामग्रियों द्वारा न होकर इसके रोचक और मनोहारी विषय और वर्णनपटुता द्वारा ही होनी चाहिये। इसीलिये इसे इसी रूपमें निकालनेके लिये हम बाध्य हुए यानी यही उचित और यही परीक्षा वास्तविक परीक्षा होगी।

जो कुछ है उदार पाठकोंके सामने है। इसे चखकर वे ही हिन्दी संसारको बतलावेंगे कि प्रेमचन्दजीने उपन्यासके बाद नाटकमें भी कितना रस भर दिया है।

विनीत—

—प्रकाशक

नाटकके पात्र

हलधर	मधुबनका किसान—नायक
फत्तू	” ”
मंगरू	” ”
हरदास	” ”
राजेश्वरी	हलधरकी पत्नी
सलोनी	एक वृद्धा स्त्री
सबल सिंह	मधुबनका जमींदार
कञ्चन सिंह	सबलका भाई
अचल सिंह	सबलका पुत्र
ज्ञानी	सबलकी पत्नी
चेतनदास	एक संन्यासी
गुलाबी	सबल सिंहकी महराजिन
भृगुनाथ	गुलाबीका पुत्र
चम्पा	भृगुनाथकी पत्नी

इन्सपेक्टर, थानेदार, सिपाही, डाकू आदि ।

———

प्रथम अङ्क

पहला दृश्य

(प्रभातका समय, सूर्यकी सुनहरी किरणें खेतों और वृक्षोंपर पड़ रही हैं। वृक्षपुंजोंमें पक्षियोंका कलरव हो रहा है। वसंत ऋतु है। नई-नई कोपलें निकल रही हैं। खेतोंमें हरियाली छाई हुई है। कहीं-कहीं सरसों भी फूल रही हैं। शीतबिंदु पौधोंपर चमक रहे हैं।)

हलधर—अब और कोई बाधा न पड़े तो अबकी उपज अच्छी होगी। कैसी मोटी-मोटी बालें निकल रही हैं।

राजेश्वरी—यह तुम्हारी कठिन तपस्याका फल है।

हलधर—मेरी तपस्या कभी इतनी सफल न हुई थी। यह सब तुम्हारे पौरेकी बरकत है।

राजे०—अबकीसे तुम एक मजूर रख लेना। अकेले हैरान हो जाते हो।

हलधर—खेत ही नहीं हैं। मिलें तो अकेले इसके दुगुने जोत सकता हूँ।

राजे०—मैं तो गाय जरूर लूंगी। गऊके बिना घर सूना मालूम होता है।

हलधर—मैं पहले तुम्हारे लिये कंगन बनवाकर तब दूसरी बात करूँगा। महाजनसे रुपये ले लूंगा। अनाज तौल दूंगा।

राजे०—कंगनकी इतनी क्या जल्दी है कि महाजनसे उधार लो। अभी पहलेका भी तो कुछ देना है।

हलधर—जल्दी क्यों नहीं है। तुम्हारे मैकेसे बुलावा आयेगा ही। किसी नये गहने बिना जाओगी तो तुम्हारे गांव घरके लोग मुझे हँसेंगे कि नहीं।

राजे०—तो तुम बुलावा फेर देना। मैं करजा लेकर कंगन न बनवाऊँगी। हाँ, गाय पालना जरूरी है। किसानके घर गोरस न हो तो किसान कैसा! तुम्हारे लिये दूध रोटी कलेवा लाया करूंगी। बड़ी गाय लेना, चाहे दाम कुछ बेशी देना पड़ जाय।

हलधर—तुम्हें और हलका न होना पड़ेगा। अभी कुछ दिन आराम कर लो, फिर तो यह चक्की पीसनी ही है।

राजे०—खेलना खाना भाग्यमें लिखा होता तो सास-ससुर क्यों सिधार जाते? मैं अभागिनी हूँ। आते ही आते उन्हें चट कर गई। नारायण दें तो उनकी बरसी धूमसे करना।

हलधर—हां, यह तो मैं पहले ही सोच चुका हूँ, पर तुम्हारा

कंगन बनना भी जरूरी है। चार आदमी ताने देने लगेंगे तो क्या करोगी ?

राजे०—इसकी चिन्ता मत करो, मैं उनका जवाब दे लूंगी। लेकिन मेरी तो जानेकी इच्छा हो नहीं है। न जाने और बहुएँ कैसे मैके जानेको व्याकुल होती हैं, मेरा तो अब वहाँ एक दिन भी जी न लगेगा। अपना घर सबसे अच्छा लगता है। अबकी तुलसीका चौतरा जरूर बनवा देना, उसके आस-पास बेला, चमेली, गेंदा और गुलाबके फूल लगा दूँगी तो आँगनकी शोभा कैसी बढ़ जायगी !

हलधर—वह देखो तोतोंका झुण्ड मटरपर टूट पड़ा।

राजे०—मेरा भी जी एक तोता पालनेको चाहता है। उसे पढ़ाया करूँगी।

(*हलधर गुलेल उठाकर तोतोंकी ओर चलाता है*)

राजे०—छोड़ना मत, बस दिखाकर उड़ा दो।

हलधर—वह मारा ! एक गिर गया।

राजे०—राम राम, यह तुमने क्या किया ? चार दानोंके पीछे उसकी जान ही ले ली। यह कौन सी भलमनसी है ?

हलधर—(लज्जित होकर) मैंने जानकर नहीं मारा।

राजे०—अच्छा तो इसी दम गुलेल तोड़कर फेंक दो। मुझसे यह पाप नहीं देखा जाता। किसी पशु-पंछीको तड़पते देखकर

मेरे रोएं खड़े हो जाते हैं। मैंने तो दादाको एक बार बैलकी पूँछ मरोड़ते देखा था। रोने लगी। जब दादाने वचन दिया कि अब कभी बैलोंको न मारूंगा तब जाके चुप हुई। मेरे गांवमें सब लोग औंगीसे बैलोंको हांकते हैं। मेरे घर कोई मजूर भी औंगी नहीं चला सकता।

हलधर—आजसे परन करता हूँ कि कभी किसी जानवरको न मारूंगा।

(फत्तू मियाँका प्रवेश)

फत्तू—हलधर, नजर नहीं लगाता पर अबकी तुम्हारी खेती गांवभरसे ऊपर है। तुमने जो आम लगाये हैं वह भी खूब बौरे हैं।

हलधर—दादा, यह सब तुम्हारा आसीरवाद है। खेती न लगती तो काकाकी बरसी कैसे होती ?

फत्तू—हाँ बेटा, भैयाका काम दिल खोलकर करना।

हलधर—तुम्हें मालूम है दादा, चांदीका क्या भाव है ? एक कङ्गन बनवाना था।

फत्तू—सुनता हूँ अब रुपयेकी रुपये भर हो गई है। कितनेकी चाँदी लोगे ?

हलधर—यही कोई ४०—५०) रुपयेकी।

फत्तू—जब कहना चलकर ले दूंगा। हां, मेरा इरादा कटरे

जानेका है। तुम भी चलो तो अच्छा। एक अच्छी भैंस लाना। गुड़के रुपये तो अभी रखे होंगे न ?

हलधर—कहाँ दादा, वह सब तो कञ्चनसिंहको दे दिये। बीघे भर भी तो न थी, कमाई भी अच्छी न हुई थी, नहीं तो क्या इतनी जल्द पेल-पालकर छुट्टी पा जाता ?

फत्तू—महाजनसे तो कभी गला ही नहीं छूटता।

हलधर—दो साल भी तो लगातार खेती नहीं जमती, गला कैसे छूटे !

फत्तू—वह घोड़ेपर कौन आ रहा है ? कोई अफसर है क्या?

हलधर—नहीं, ठाकुर साहब तो हैं। घोड़ा नहीं पहचानते। ऐसे सच्चे पानीका घोड़ा इधर दस-पांच कोसतक नहीं है।

फत्तू—सुना एक हजार दाम लगते थे पर नहीं दिया।

हलधर—अच्छा जानवर बड़े भागोंसे मिलता है। कोई कहता था अबकी घुड़-दौड़में बाजी जीत गया। बड़ी-बड़ी दूरसे घोड़े आये थे पर कोई इसके सामने न ठहरा। कैसा शेरकी तरह गरदन उठाके चलता है।

फत्तू—ऐसे सरदारको ऐसा ही घोड़ा चाहिये। आदमी हो तो ऐसा हो। अल्लाहने इतना कुछ दिया है पर घमण्ड छू तक नहीं गया। एक बच्चा भी जाय तो उससे प्यारसे बातें करते हैं। अबकी ताऊनके दिनोंमें इन्होंने दौड़-धूप न की होती तो

सैकड़ों जानें जातीं।

हलधर—अपनी जानको तो डरते ही नहीं। इधर ही आ रहे हैं। सवेरे-सवेरे भले आदमीके दर्शन हुए।

फत्तू—इस जन्मके कोई महात्मा हैं, नहीं तो देखता हूं जिसके पास चार पैसे हो गये वह यही सोचने लगता है कि किसे पीसके पी जाऊं। एक बेगार भी नहीं लगती, नहीं तो पहले बेगार देते-देते धुर्रे उड़ जाते थे। इसी गरीबपरवरकी बरकत है कि गांवमें न कोई कारिन्दा है, न चपरासी पर लगान नहीं रुकता। लोग मीयादके पहले ही दे आते हैं। बहुत गांव घूमा पर ऐसा ठाकुर नहीं देखा।

(सबलसिंह घोड़पर आकर खड़ा हो जाता है। दोनों आदमी झुक-झुककर सलाम करते हैं। राजेश्वरी घूंघट निकाल लेती है।)

सबल—कहो बड़े मियां, गांवमें सब खैरियत है न ?

फत्तू—हजूरके अकबालसे सब खैरियत है।

सबल—फिर वही बात। मेरे अकबालको क्यों सराहते हो। यह क्यों नहीं कहते कि ईश्वरकी दयासे या अल्लाहके फज्ल-से खैरियत है। अबकी खेती तो अच्छी दिखाई देती है ?

फत्तू—हां सरकार, अभीतक तो खुदाका फज्ल है।

सबल—बस इसी तरह बातें किया करो। किसी आदमीकी खुशामद मत करो चाहे वह जिलेका हाकिम ही क्यों न हो।

यहां अभी किसी अफसरका दौरा तो नहीं हुआ?

फत्तू—नहीं सरकार, अभीतक तो कोई नहीं आया।

सबल—और न शायद आयेगा। लेकिन कोई आ भी जाय तो याद रखना, गांवसे किसी तरहकी बेगार न मिले। साफ कह देना बिना जमींदारके हुक्मके हमलोग कुछ नहीं दे सकते। मुझसे जब कोई पूछेगा तो देख लूंगा। (मुस्कुराकर) हलधर! क्या गौना लाये हो? हमारे घर बैना नहीं भेजा?

हलधर—हजूर मैं किस लायक हूं।

सबल—यह तो तुम तब कहते जब मैं तुमसे मोतीचूरके लड्डू या घीके खाजे मांगता। प्रेमसे शीरे और सत्तूके लड्डू भेज देते तो मैं उसीको धन्य भाग कहता। यह न समझो कि हम लोग सदा घी और मैदे खाया करते हैं। मुझे बाजरेकी रोटियां और तिलके लड्डू और मटरका चबैना कभी-कभी हलवे और मुरब्बेसे भी अच्छे लगते हैं। एक दिन मेरी दावत करो, मैं तुम्हारी नई दुलहिनके हाथका बनाया हुआ भोजन करना चाहता हूं। देखें यह मैकेसे क्या गुन सीखकर आई है। मगर खाना बिलकुल किसानोंकासा हो। अमीरोंका खाना बनवानेकी फिक्र मत करना।

हलधर—हमलोगोंके लिए सरकारको पसन्द आयेगे?

सबल—हां, बहुत पसन्द आयेंगे।

हलधर—जब हुकुम हो।

सबल—मेहमानके हुकुमसे दावत नहीं होती। खिलानेवाला अपनी मरजीसे तारीख और वक्त ठीक करता है। जिस दिन कहो आऊँ। फत्तू, तुम बतलाओ इसकी बहू काम-काजमें चतुर है न? जबानकी तेज तो नहीं है?

फत्तू—हजूर मुँहपर क्या बखान करूँ, ऐसी मेहनतिन औरत गाँवमें और नहीं है। खेतीका तार तौर जितना यह समझती है उतना हलधर भी नहीं समझता। सुशील ऐसी है कि यहाँ आये आठवां महीना होता है किसी पड़ोसीने आवाज नहीं सुनी।

सबल—अच्छा तो अब मैं चलूंगा, जरा मुझे सीधे रास्तेपर लगा दो नहीं तो यह जानवर खेतोंको रौंद डालेगा। तुम्हारे गाँवसे मुझे सालमें १५००) मिलते हैं। इसने एक महीनेमें २०००) की बाजी मारी। हलधर, दावतकी बात भूल न जाना।

(फत्तू और सबलसिंह जाते हैं।)

राजे०—आदमी काहेको हैं, देवता हैं। मेरा तो जी चाहता था उनकी बातें सुना करूँ। जी ही नहीं भरता था। एक हमारे गाँवका जमींदार है कि प्रजाको चैन नहीं लेने देता। नित्य एक न एक बेगार, कभी बेदखली, कभी जाफा, कभी कुड़की, उसके सिपाहियोंके मारे छप्परपर कुम्हड़े कद्दूतक नहीं बचने पाते। औरतोंको राह चलते छेड़ते हैं। लोग रात-दिन मनाया करते

हैं कि इसकी मिट्टी उठे। अपनी सवारीके लिये हाथी लाता है, उसका दाम असामियोंसे वसूल करता है। हाकिमोंकी दावत करता है, सामान गांववालोंसे लेता है।

हलधर—दावत सचमुच करूं कि दिल्लगी करते थे?

राजे०—दिल्लगी नहीं करते थे, दावत करनी होगी। देखा नहीं चलते-चलते कह गये। खायेंगे तो क्या, बड़े आदमी छोटोंका मन रखनेके लिये ऐसी बातें किया करते हैं, पर आयेंगे जरूर।

हलधर—उनके खाने लायक भला हमारे यहाँ क्या बनेगा?

राजे०—तुम्हारे घर वह अमीरी खाना खाने थोड़े ही आयेंगे। पूरी-मिठाई तो नित्य ही खाते हैं। मैं तो कुटे हुए जवकी रोटी, सावांकी महेर, बथुवेका साग, मटरकी मसालेदार दाल और दो तीन तरहकी तरकारी बनाऊंगी। लेकिन मेरा बनाया खायेंगे? ठाकुर हैं न?

हलधर—खाने-पीनेका इनको कोई विचार नहीं है। जो चाहे बना दे। यही बात इनमें बुरी है। सुना है अंग्रेजोंके साथ कलपघरमें बैठकर खाते हैं।

राजे०—ईसाईमतमें आ गये हैं?

हलधर—नहीं, असनान, ध्यान सब करते हैं। गऊको कौरा दिये बिना कौर नहीं उठाते। कथा-पुराण सुनते हैं। लेकिन

खाने पीनेमें भ्रष्ट हो गये हैं।

राजे०—उँह, होगा, हमें कौन उनके साथ बैठ कर खाना है। किसी दिन बुलावा भेज देना। उनके मनकी बात रह जायगी।

हलधर—खूब मन लगाके बनाना।

राजे०—जितना सहूर है उतना करूंगी। जब वह इतने प्रेमसे भोजन करने आयेंगे तो कोई बात उठा थोड़े ही रखूंगी। बस इसी एकादशीको बुला भेजो, अभी पाँच दिन हैं।

हलधर—चलो, पहले घरकी सफ़ाई तो कर डालें।

(सबलसिंह अपने सजे हुए दीवानखानेमें उदास बैठे हैं। हाथमें एक समाचारपत्र है, पर उनकी आँखें दरवाज़ेके सामने बाग़की तरफ लगी हुई हैं।)

सबलसिंह—(आप ही आप) देहातमें पंचायतोंका होना ज़रूरी है। सरकारी अदालतोंका ख़र्च इतना बढ़ गया है कि कोई गरीब आदमी वहाँ न्यायके लिये जा ही नहीं सकता। ज़रासी भी कोई बात कहनी हो तो स्टाम्पके बग़ैर काम नहीं चल सकता।······उसका कितना सुडौल शरीर है, ऐसा जान पड़ता है कि एक-एक अंग साँचेमें ढला है। रंग कितना प्यारा है, न इतना गोरा कि आँखोंको बुरा लगे, न इतना साँवला··· ······होगा मुझे इससे क्या मतलब। वह पराई स्त्री है, मुझे उसके रूपलावण्यसे क्या वास्ता। संसारमें एकसे एक सुन्दर स्त्रियाँ हैं, कुछ यही एक थोड़ी है! ज्ञानी उससे किसी बातमें

कम नहीं, कितनी सरलहृदया, कितनी मधुरभाषिणी रमणी है। अगर मेरा जरासा इशारा हो तो आगमें कूद पड़े। मुझपर उसकी कितनी भक्ति, कितना प्रेम है। कभी सिरमें दर्द भी होता है तो बावली हो जाती है। अब उधर मनको जाने ही न दूँगा।

(कुर्सीसे उठकर अलमारीसे एक ग्रन्थ निकालते हैं, उसके दो चार पन्ने इधर-उधरसे उलटकर पुस्तकको मेज़पर रख देते हैं और फिर कुर्सीपर जा बैठते हैं। अचलसिंह हाथमें एक हवाई बन्दूक लिये दौड़ा आता है।)

अचल—दादाजी, शाम हो गई। आज घूमने न चलियेगा?

सबल—नहीं बेटा! आज तो जानेका जी नहीं चाहता। तुम गाड़ी जुतवा लो। यह बन्दूक कहाँ पाई?

अचल—इनाममें। मैं दौड़नेमें सबसे अव्वल निकला। मेरे साथ कोई २५ लड़के दौड़े थे। कोई कहता था मैं बाजी मारूँगा, कोई अपनी डींग मार रहा था। जब दौड़ हुई तो मैं सबसे आगे निकला, कोई मेरे गर्दको भी न पहुँचा, अपनासा मुँह लेकर रह गये। इस बन्दूकसे चाहूँ तो चिड़िया मार लूँ।

सबल—मगर चिड़ियोंका शिकार न खेलना।

अचल—जी नहीं, योंही बात कहता था। बिचारी चिड़ियोंने मेरा क्या बिगाड़ा है कि उनकी जान लेता फिरूँ। मगर जो

चिड़ियां दूसरी चिड़ियोंका शिकार करती हैं उनके मारनेमें तो कोई पाप नहीं है।

सबल—(असमञ्जसमें पड़कर) मेरी समझमें तो तुम्हें शिकारी चिड़ियोंको भी न मारना चाहिये। चिड़ियोंमें कर्म अकर्मका ज्ञान नहीं होता। वह जो कुछ करती हैं केवल स्वभाव वश करती हैं, इसलिये वह दण्डकी भागी नहीं हो सकतीं।

अचल—कुत्ता कोई चीज़ चुरा ले जाता है तो क्या जानता नहीं कि मैं बुरा कर रहा हूं। चुपके-चुपके, पैर दबाकर, इधर उधर चौकन्नी आंखोंसे ताकता हुआ जाता है,और किसी आद-मीकी आहट पाते ही भाग खड़ा होता है। कौवेका भी यही हाल है। इससे तो मालूम होता है कि पशु-पक्षियोंको भी भले बुरेका ज्ञान होता है; तो फिर उनको दण्ड क्यों न दिया जाय ?

सबल—अगर ऐसा ही हो तो हमें उनको दण्ड देनेका क्या अधिकार है ? हालांकि इस विषयमें हम कुछ नहीं कह सकते कि शिकारी चिड़ियोंमें वह ज्ञान होता है जो कुत्ते या कौवेमें है या नहीं।

अचल—अगर हमें पशु-पक्षी चोरोंको दण्ड देनेका अधिकार नहीं है तो मनुष्यमें चोरोंको क्यों ताड़ना दी जाती है। वह जैसा करेंगे उसका फल आप पायेंगे, हम क्यों उन्हें दण्ड दें ?

सबल—(मनमें) लड़का है तो नन्हासा बालक मगर तर्क

खूब करता है। (प्रगट) बेटा ! इस विषयमें हमारे प्राचीन ऋषियोंने बड़ो मार्मिक व्यवस्थाएं की हैं, अभी तुम न समझ सकोगे। जाओ सैर कर आओ, ओवरकोट पहन लेना, नहीं तो सरदी लग जायगी।

अचल—मुझे वहां कब ले चलियेगा जहां आप कल भोजन करने गये थे। मैं भी राजेश्वराके हाथका बनाया हुआ खाना खाना चाहता हूँ। आप चुपकेसे चले गये, मुझे बुलायातक नहीं। मेरा तो जी चाहता है कि नित्य गांव हीमें रहता। खेतोंमें घूमा करता।

सबल—अच्छा अब जब वहां जाऊंगा तो तुम्हें भी साथ ले लूंगा।

(अचलसिंह चला जाता है।)

सबल—(आप ही आप) लेखका दूसरा *Point* क्या होगा? अदालतें सबलोंके अन्यायकी पोषक हैं। जहां रुपयोंके द्वारा फरियाद की जाती हो, जहां वकीलों, बारिस्टरोंके मुंहसे बात की जाती हो, वहां गरीबोंकी कहां पैठ। यह अदालत नहीं, न्यायकी बलिवेदी है। जिस किसी राज्यकी अदालतोंका यह हाल हो……जब वह थाली परसकर मेरे सामने लाई तो मुझे ऐसा मालूम होता था जैसे कोई मेरे हृदयको खींच रहा हो। अगर उससे मेरा स्पर्श हो जाता तो शायद मैं मूर्च्छित हो जाता।

किसी उर्दू कविके शब्दोंमें "यौवन फटा पड़ता था।" कितना कोमल गात है, न जाने खेतोंमें कैसे इतनी मिहनत करती है। नहीं यह बात नहीं। खेतोंमें काम करनेही से उसका चम्पई रंग निखरकर कुन्दन हो गया है। वायु और प्रकाशने उसके सौन्दर्यको चमका दिया है। सच कहा है हुस्नके लिये गहनोंकी आवश्यकता नहीं। उसके शरीरपर कोई आभूषण न था, किन्तु सादगी आभूषणोंसे कहीं ज्यादा मनोहारिणी थी। गहने सौन्दर्यकी शोभा क्या बढ़ायेंगे, स्वयं अपनी शोभा बढ़ाते हैं। उस सादे व्यंजनमें कितना स्वाद था? रूपलावण्यने भोजनको भी स्वादिष्ट बना दिया था। मन फिर उधर गया, यह मुझे हो क्या गया है। यह मेरी युवावस्था नहीं है कि किसी सुन्दरीको देखकर लट्टू हो जाऊँ, अपना प्रेम हथेलीपर लिये प्रत्येक सुन्दरी स्त्रीकी भेंट करता फिरूं। मेरी प्रौढ़ावस्था है, ३५ वें वर्ष में हूँ। एक लड़केका बाप हूँ जो ६, ७, वर्षोंमें जवान होगा। ईश्वरने दिये होते तो ४, ५, सन्तानोंका पिता हो सकता था। यह लोलुपता है, छिछोरापन है। इस अवस्थामें, इतना विचार-शील होकर भी मैं इतना मलिन-हृदय हो रहा हूं। किशोरा-वस्थामें तो मैं आत्मशुद्धिपर जान देता था, फूँक फूँककर क़दम रखता था, आदर्श जीवन व्यतीत करता था और इस अवस्थामें जब मुझे आत्मचिन्तनमें मग्न होना चाहिये, मेरे सिरपर यह

भूत सवार हुआ है। क्या यह मुझसे उस समयके संयमका बदला लिया जा रहा है, अब मेरी परीक्षा की जा रही है!

(*ज्ञानीका प्रवेश*)

ज्ञानी—तुम्हारी यह सब किताबें कहीं छुपा दूँ। जब देखो तब एक न एक पोथा खोले बैठे रहते हो। दर्शनतक नहीं होते।

सबल—तुम्हारा अपराधी मैं हूँ, जो दण्ड चाहे दो। यह बिचारी पुस्तकें बेक़सूर हैं।

ज्ञानी—गुलबिया आज बग़ीचेकी तरफ़ गई थी। कहती थी, आज वहाँ कोई महात्मा आये हैं। सैकड़ों आदमी उनके दर्शनोंको जा रहे हैं। मेरी भी इच्छा हो रही है कि जाकर दर्शन कर आऊँ।

सबल—पहले मैं जाकर ज़रा उनके रंग-ढंग देख लूँ तो फिर तुम जाना। गेरुए कपड़े पहनकर महात्मा कहलानेवाले बहुत हैं।

ज्ञानी—तुम तो आकर यही कह दोगे कि वह बना हुआ है, पाखण्डी है, धूर्त्त है, उसके पास न जाना। तुम्हें न जाने क्यों महात्माओंसे चिढ़ है।

सबल—इसीलिये चिढ़ है कि मुझे कोई सच्चा साधु नहीं दिखाई देता।

ज्ञानी—इनकी मैंने बड़ी प्रशंसा सुनी है। गुलाबी कहती

थी कि उनका मुंह दीपककी तरह दमक रहा था। सैकड़ों आदमी घेरे हुए थे पर वह किसीसे बाततक न करते थे।

सबल—इससे यह तो साबित नहीं होता कि वह कोई सिद्ध पुरुष हैं। अशिष्टता महात्माओंका लक्षण नहीं है।

ज्ञानी—खोजमें रहनेवालेको कभी-कभी सिद्धपुरुष भी मिल जाते हैं। जिसमें श्रद्धा नहीं है उसे कभी किसी महात्मासे साक्षात् नहीं हो सकता। तुम्हें सन्तानकी लालसा न हो पर मुझे तो है। दूध-पूतसे किसीका मन भरते आजतक नहीं सुना।

सबल—अगर साधुओंके आशीर्वादसे सन्तान मिल सकती तो आज संसारमें कोई निस्सन्तान प्राणी खोजनेसे भी न मिलता। तुम्हें भगवानने एक पुत्र दिया है। उनसे यही याचना करो कि उसे कुशलसे रखें। हमें अपना जीवन अब सेवा और परोपकारकी भेंट करना चाहिये।

ज्ञानी—(चिढ़कर) तुम ऐसी निर्दयतासे बातें करने लगते हो इसीसे कभी इच्छा नहीं होती कि तुमसे अपने मनकी कोई बात कहूँ। लो, अपनी किताबें पढ़ो जिनमें तुम्हारी जान बसती है, जाती हूँ।

सबल—बस रुठ गईं। चित्रकारोंने क्रोधकी बड़ी भयंकर कल्पना की है पर मेरे अनुभवसे यह सिद्ध होता है कि सौन्दर्य क्रोधहीका रूपान्तर है। कितना अनर्थ है कि ऐसी मोहिनी

मूर्त्तिको इतना विकराल स्वरूप दे दिया जाय ?

ज्ञानी—(मुसकुराकर) नमक-मिर्च लगाना कोई तुमसे सीख ले। मुझे भोली पाकर बातोंमें उड़ा देते हो। लेकिन आज मैं न मानूंगी।

सबल—ऐसी जल्दी क्या है ? मैं स्वामीजीको यहीं बुला लाऊँगा, खूब जी भरकर दर्शन कर लेना। वहां बहुतसे आदमी जमा होंगे, उनसे बातें करनेका भी अवसर न मिलेगा। देखनेवाले हंसी उड़ायेंगे कि पति तो साहब बना फिरता है और स्त्री साधुओंके पीछे दौड़ा करती है।

ज्ञानी—अच्छा तो कब बुला दोगे ?

सबल—कलपर रखो।

(ज्ञानी चली जाती है)

सबलसिंह—(आपही आप) सन्तानकी क्यों इतनी लालसा होती है ? जिसके सन्तान नहीं है वह अपनेको अभागा समझता है, अहर्निश इसी क्षोभ और चिन्तामें डूबा रहता है। यदि यह लालसा इतनी व्यापक न होती तो आज हमारा धार्मिक जीवन कितना शिथिल, कितना नीरव होता। न तीर्थ-यात्राओंकी इतनी धूम होती, न मन्दिरोंकी इतनी रौनक, न देवताओंमें इतनी भक्ति, न साधु-महात्माओंपर इतनी श्रद्धा, न दान और व्रतकी इतनी धूम। यह सब कुछ सन्तान-लालसाका ही

चमत्कार है। खैर, कल चलूँगा, देखूँ इन स्वामीजीके क्या रंग ढंग हैं।·····अदालतोंकी बात सोच रहा था। यह आक्षेप किया जाता है कि पंचायतें यथार्थ न्याय न कर सकेंगी, पंच लोग मुँहदेखी करेंगे और वहाँ भी सबलोंकी ही जीत होगी। इसका निवारण यों हो सकता है कि स्थायी पंच न रखे जायँ। जब जरूरत हो दोनों पक्षोंके लोग अपने-अपने पंचोंको नियत कर दें।······किसानोंमें भी ऐसी कामिनियां होती हैं, यह मुझे न मालूम था। यह निस्सन्देह किसी उच्च कुलकी लड़की है। किसी कारणवश इस दुरावस्थामें आ फँसी है। विधाताने इस अवस्थामें रखकर उसके साथ अत्याचार किया है। उसके कोमल हाथ खेतोंमें कुदाल चलानेके लिये नहीं बनाये गये हैं, उसकी मधुरवाणी खेतोंमें कौवे हाँकनेके लिये उपयुक्त नहीं है, जिन केशोंसे झूमरका भार भी न सहा जाय उसपर उपले और अनाजके टोकरे रखना महान अनर्थ है, मायाकी विषम लीला है, भाग्यका क्रूर रहस्य है। वह अबला है, विवश है, किसीसे अपने हृदयकी व्यथा कह नहीं सकती। अगर मुझे मालूम हो जाय कि वह इस हालतमें सुखी है, तो मुझे संतोष हो जायगा। पर यह कैसे मालूम हो। कुलवती स्त्रियां अपनी विपत्ति-कथा नहीं कहतीं, भीतर ही भीतर जलती हैं पर जबानसे हाय नहीं करतीं।········मैं फिर उसी उधेड़-बुनमें पड़ गया। समझमें

नहीं आता मेरे चित्तकी यह दशा क्यों हो रही है। अबतक मेर मन कभी इतना चंचल नहीं हुआ था। मेरे युवाकालके सह वासीतक मेरी अरसिकतापर आश्चर्य करते थे। अगर मेरी इस लोलुपताकी जरा भी भनक उनके कानमें पड़ जाय तो मैं कहीं मुँह दिखाने लायक न रहूँ। यह आग मेरे हृदयमें ही जले, और चाहे हृदय जलकर राख हो जाय पर उसकी कराह किसीके कानमें न पड़ेगी। ईश्वरकी इच्छाके बिना कुछ नहीं होता। यह प्रेमज्योति उद्दीप्त करनेमें भी उसकी कोई न कोई मसलहत जरूर होगी।

(घंटी बजाता है)

एक नौकर—हजूर हुकुम ?

सबल—घोड़ा खींचो।

नौकर—बहुत अच्छा।

तृतीय दृश्य

समय-८ बजे दिन, स्थान-सबलसिंहका मकान-कंचनसिंह अपनी सजी हुई बैठकमें दुशाला ओढ़े, आखोंपर सुनहरी ऐनक चढ़ाये मसनद लगाये बैठे है, मुनीमजी बहीमें कुछ लिख रहे हैं।

कञ्चन—"समस्या यह है कि सूदका दर कैसे घटाया जाय। भाई साहब मुझसे नित्य ताकीद किया करते हैं कि सूद कम लिया करो। किसानोंकी ही सहायताके लिये उन्होंने मुझे इस कारोबारमें लगाया। उनका मुख्य उद्देश्य यही है। पर तुम जानते हो धनके बिना धर्म नहीं होता। इलाकेकी आमदनी घरके जरूरी खर्चके लिये भी काफी नहीं होती। भाई साहबने किफ़ायतका पाठ नहीं पढ़ा। उनके हजारों रुपये साल तो केवल अधिकारियोंके सत्कारकी भेंट हो जाते हैं। घुड़दौड़ और पोलो और क्लबके लिये धन चाहिये। अगर उनके आसरे रहूँ तो सैकड़ों रुपये जो मैं स्वयं साधुजनोंके अतिथि-सेवामें

खर्च करता हूँ कहांसे आये।"

मुनीम—वे बुद्धिमान पुरुष हैं पर न जाने वे फजूल खर्ची क्यों करते हैं?

कञ्चन—मुझे बड़ी लालसा है कि एक विशाल धर्मशाला बनवाऊँ। उसके लिये धन कहांसे आयेगा? भाई साहबके आज्ञानुसार नाममात्रके लिये ब्याज लूँ तो मेरी यह सब कामनाएं धरी ही रह जायें। मैं अपने भोग विलासके लिये धन नहीं बटोरना चाहता, केवल परोपकारके लिये चाहता हूँ। कितने दिनोंसे इरादा कर रहा हूँ कि एक सुन्दर वाचनालय खोल दूँ। पर पर्य्याप्त धन नहीं। यूरोपमें केवल एक दानवीरने हजारों वाचनालय खोल दिये हैं। मेरा हौसला इतना बड़ा तो नहीं पर कमसे कम एक उत्तम वाचनालय खोलनेकी अवश्य इच्छा है। सूद न लूँ तो मनोरथ पूरे होनेके और क्या साधन हैं? इसके अतिरिक्त यह भी तो देखना चाहिये कि मेरे कितने रुपये मारे जाते हैं। जब असामीके पास कुछ जायदाद ही न हो तो रुपये कहांसे वसूल हों। यदि यह नियम कर लूँ कि बिना अच्छी जमानतके किसीको रुपये ही न दूँगा तो गरीबोंका काम कैसे चलेगा। अगर गरीबोंसे व्यवहार न करूँ तो अपना काम नहीं चलता। वह बिचारे रुपये चुका तो देते हैं। मोटे आदमियोंसे लेन-देन कीजिये तो अदालत गये बिना कौड़ी नहीं

वसूल होती।

(हलधरका प्रवेश)

कञ्चन—कहो हलधर, कैसे चले ?

हलधर—कुछ नहीं सरकार, सलाम करने चला आया।

कञ्चन—किसान लोग बिना किसी प्रयोजनके सलाम करने नहीं चलते। फ़ारसी कहावत है-सलामे दोस्ताई बेग़रज़ नेस्त।

हलधर-आप तो जानते ही हैं फिर पूछते क्यों हैं ? कुछ रुपयोंका काम था।

कंचन—तुम्हें किसी पण्डितसे साइत पूछकर चलना चाहिये था। यहां आजकल रुपयोंका डौल नहीं है। क्या करोगे रुपये लेकर ?

हलधर—काकाकी बरसी होनेवाली है। और भी कई काम हैं।

कंचन—स्त्रीके लिये गहने भी बनवाने होंगे ?

हलधर—(हंसकर) सरकार आप तो मनकी बात ताड़ लेते हैं।

कंचन—तुम लोगोंके मनकी बात जान लेना ऐसा कोई कठिन काम नहीं, केवल खेती अच्छी होनी चाहिये। यह फस्ल अच्छी है, तुम लोगोंको रुपयेकी जरूरत होनी स्वाभाविक है। किसानने खेतमें पौधे लहराते हुए देखे और उसके पेटमें चूहे

कूदन लगे, नहीं तो ऋण लेकर बरसी करने या गहने बनवाने का क्या काम, इतना सब्र नहीं होता कि अनाज घरमें आ जाय तो यह सब मंसूबे बांधे। मुझे रुपयोंका सूद दोगे, लिखाई दोगे, नजराना दोगे, मुनीमजीकी दस्तूरी दोगे, दसके आठ लेकर घर जाओगे, लेकिन यह नहीं होता कि महीने दो महीने रुक जायं। तुम्हें तो इस घड़ी रुपयेकी धुन है, कितना ही समझाऊँ, ऊंच-नीच सुझाऊं मगर कभी न मानोगे। रुपये न दूं तो मनमें गालियां दोगे और किसी दूसरे महाजनकी चिरौरी करोगे।

हलधर—नहीं सरकार यह बात नहीं है, मुझे सचमुच ही बड़ी जरूरत है।

कंचन—हां हां तुम्हारी जरूरतमें किसे सन्देह है, जरूरत न होती तो यहां आते ही क्यों, लेकिन यह ऐसी जरूरत है जो टल सकती है, मैं इसे जरूरत नहीं कहता, इसका नाम ताव है जो खेतीका रंग देखकर सिरपर सवार हो गया है।

हलधर—आप मालिक हैं जो चाहें कहें। रुपयोंके बिना मेरा काम न चलेगा। बरसीमें भोज-भात देना ही पड़ेगा, गहना पाती बनवाये बिना बिरादरीमें बदनामी होती है, नहीं तो क्या इतना मैं नहीं जानता कि करज लेनेसे भरम उठ जाता है। करज करेजेकी चीर है। आप तो मेरी भलाईके लिये इतना

समझा रहे हैं, पर मैं बड़ा संकटमें हूं।

कंचन—मेरी रोकड़ उससे भी ज्यादा संकटमें है। तुम्हारे लिये बङ्कघरसे रुपये निकालने पड़ेंगे। कोई और होता तो मैं उसे सूखा जवाब देता लेकिन तुम मेरे पुराने असामी हो तुम्हारे बापसे भी मेरा व्यवहार था, इसलिये तुम्हें निराश नहीं करना चाहता। मगर अभीसे जताये देता हूं कि जेठीमें सब रुपया सूद समेत चुकाना पड़ेगा। कितने रुपये चाहते हो?

हलधर—सरकार २००) दिला दें।

कंचन—अच्छी बात है, मुनीमजी लिखा-पढ़ी करके रुपये दे दीजिये। मैं पूजा करने जाता हूं।

(जाता है।)

मुनीम—तो तुम्हें २००) चाहिये न। पहले ५) सैकड़े नजराना लगता था। अब १०) सैकड़े हो गया है।

हलधर—जैसी मरजी।

मुनीम—पहले २) सैकड़े लिखाई पड़ती थी, अब ४) सैकड़े हो गई है।

हलधर—जैसा सरकारका हुकुम।

मुनीम—स्टाम्पके ५) लगेंगे।

हलधर—सही है।

मुनीम—चपरासियोंका हक़ २) होगा।

हलधर—जो हुकुम।

मुनीम—मेरी दस्तूरी भी ५) होती है, लेकिन तुम गरीब आदमी हो, तुमसे ४) ले लूँगा! जानते ही हो मुझे यहाँसे कोई तलब तो मिलती नहीं, बस इसी दस्तूरीका भरोसा है।

हलधर—बड़ी दया है।

मुनीम—१) ठाकुरजीको चढ़ाना होगा।

हलधर—चढ़ा दीजिये। ठाकुर तो सभीके हैं।

मुनीम—और १) ठकुराइनके पानका खर्च।

हलधर—ले लीजिये। सुना है गरीबोंपर बड़ी दया करती हैं।

मुनीम—कुछ पढ़े हो?

हलधर—नहीं महाराज; करिया अच्छर भैंस बराबर है।

मुनीम—तो इस इस्टामपर बायें अंगूठेका निशान करो।

(सादे स्टाम्पपर निशान बनवाता है।)

मुनीम—(सन्दूकसे रुपये निकालकर) गिन लो।

हलधर—ठीक ही होगा।

मुनीम—चौखटपर जाकर तीन बार सलाम करो और घरकी राह लो।

(हलधर रुपये अंगोछेमें बाधता हुआ जाता है। कञ्चनसिंहका प्रवेश।)

मुनीम—ज़रा भी कान-पूछ नहीं हिलाई।

कंजन—इन मूर्खोंपर ताव सवार होता है तो इन्हें कुछ नहीं सूझता, आँखोंपर परदा पड़ जाता है। इनपर दया आती है पर करूं क्या? धनके बिना धर्म भी तो नहीं होता।

चतुर्थ दृश्य

—❀:❀—

(स्थान--मधुबन । सबलसिंहका चौपाल । समय--८ बजे रात । फाल्गुनका आरम्भ)

चपरासी--हुजूर गांवमें सबसे कह आया। लोग जादूके तमाशेकी खबर सुनकर बहुत उत्सुक हो रहे हैं।

सबल—स्त्रियोंको भी बुलावा दे दिया है न ?

चप०--जी हां, अभी सबकी सब घरवालोंको खाना खिलाकर आई जाती हैं।

सबल—तो इस बरामदेमें एक परदा डाल दो। स्त्रियोंको परदेके अन्दर बिठाना। घास चारे, दूध लकड़ी आदिका प्रबंध हो गया न ?

चप०—हुजूर सभी चीजोंका ढेर लगा हुआ है। जब यह चीजें बेगारमें ली जाती थीं तब एक २ मुट्ठी घासके लिये गाली और मारसे काम लेना पड़ता था। हुजूरने बेगार बन्द करके सारे गांवको बिन दामों गुलाम बना लिया है। किसीने भी दाम

लेना मंजूर नहीं किया। सब यही कहते हैं कि सरकार हमारे मेहमान हैं। धन्यभाग ! जबतक चाहें सिर और आंखोंपर रहें। हम खिदमतके लिये दिलोजानसे हाजिर हैं। दूध तो इतना आ गया है कि शहरमें ४) को भी न मिलता।

सबल—यह सब एहसानकी बरकत है। जब मैंने बेगार बन्द करनेका प्रस्ताव किया तो तुम लोग, यहांतक कि कञ्चन-सिंह भी, सभी मुझे डराते थे। सबको भय था कि असामी शोख़ हो जायँगे, सिरपर चढ़ जायँगे। लेकिन मैं जानता था कि एहसानका नतीजा कभी बुरा नहीं होता। अच्छा महराजसे कहो कि मेरा भोजन भी जल्द बना दें।

(चपरासी चला जाता है।)

सबल—(मनमें) बेगार बन्द करके मैंने गांववालोंको अपना भक्त बना लिया। बेगार खुली रहती तो कभी न कभी राजेश्वरीको भी बेगार करनी ही पड़ती, मेरे आदमी जाकर उसे दिक़ करते। अब यह नौबत कभी न आयेगी। शोक यही है कि यह काम मैंने नेक इरादोंसे नहीं किया, इसमें मेरा स्वार्थ छिपा हुआ है। लेकिन अभीतक मैं निश्चय नहीं कर सका कि इसका अंत क्या होगा ? राजेश्वरीके उद्धार करनेका विचार तो केवल भ्रान्ति है। मैं उसके अनुपम रूप-छटा, उसके सरल व्यवहार और उसके निर्दोष अंगविन्यासपर आसक्त हूँ। इसमें रत्तीभर भी

सन्देह नहीं है। मैं कामवासनाकी चपेटमें आ गया हूँ और किसी तरह मुक्त नहीं हो सकता। खूब जानता हूं कि यह महाघोर पाप है! आश्चर्य्य होता है कि इतना संयमशील होकर भी मैं इसके दांवमें कैसे आ पड़ा। ज्ञानीको अगर ज़रा भी सन्देह हो जाय तो वह तो तुरत विष खा ले। लेकिन अब परिस्थितिपर हाथ मलना व्यर्थ है। यह विचार करना चाहिये कि इसका अन्त क्या होगा। मान लिया कि मेरी चाहें सीधी पड़ती गईं और वह मेरा कलमा पढ़ने लगी तो? कलुषित प्रेम? पापाभिनय! भगवन्! उस घोर नारकीय अग्निकुण्डमें मुझे मत डालना। मैं अपने मुखको और उस सरलहृदया बालिकाकी आत्माको इस कालिमासे वेष्ठित नहीं करना चाहता। मैं उससे केवल पवित्र प्रेम करना चाहता हूँ, उसकी मीठी-मीठी बातें सुनना चाहता हूं, उसके मधुर मुस्कानकी छटा देखना चाहता हूँ, और कलुषित प्रेम क्या है.........जो हो, अब तो नाव नदीमें डाल दी है, कहीं न कहीं पार लगेगी ही। कहाँ ठिकाने लगेगी? सर्वनाशके घाटपर! हां मेरा सर्वनाश इसी बहाने होगा। यह पाप पिशाच मेरे कुलको भक्षण कर जायगा। ओह!

यह निर्मूल शंकाएं हैं। संसारमें एकसे एक कुकर्मी व्यभिचारी पड़े हुए हैं, उनका सर्वनाश नहीं होता। कितनों हीको मैं जानता हूँ जो विषयभोगमें लिप्त हो रहे हैं। ज्यादासे ज्यादा उन्हें

यह दण्ड मिलता है कि जनता कहती है बिगड़ गया, कुलमें दाग़ लगा दिया। लेकिन उनकी मान-प्रतिष्ठामें जरा भी अन्तर नहीं पड़ता। यह पाप मुझे करना पड़ेगा। कदाचित् मेरे भाग्यमें यह बदा हुआ है। हरिइच्छा। हां इसका प्रायश्चित्त करनेमें कोई कसर न रखूँगा, दान, व्रत, धर्म, सेवा, इनके परदेमें मेरा अभिनय होगा। प्रदान, व्रत, परोपकार सेवा यह सब मिलकर कपट प्रेमकी कालिमाको नहीं धो सकते। अरे, लोग अभी से तमाशा देखने आने लगे। खैर आने दूँ भोजनमें देर हो जायगी। कोई चिन्ता नहीं। १२ बजें सब (*Film*) खतम हो जायंगे। चलूँ सबको बैठाऊँ (प्रगट) तुम लोग यहाँ आकर फर्शपर बैठो, स्त्रियाँ परदेमें चली जायँ (मनमें) हैं वह भी है! कैसा सुन्दर अङ्ग विन्यास है। आज गुलाबी साड़ी पहने हुए है। अच्छा अबकी तो कई आभूषण भो हैं। गहनोंसे उसके शरीरकी शोभा ऐसी बढ़ गई है मानों वृक्षमें फूल लगे हों।

(दर्शक यथास्थान बैठ जाते हैं, सबलसिंह चित्रोंको दिखाना शुरू करते हैं।)

(पहला चित्र—कई किसानोंका रेलगाड़ीमें सवार होनेके लिये धक्कमधक्का करना, बैठनेका स्थान न मिलना, गाड़ीमें खड़े रहना, एक चपरासीको जगहके लिये घूस देना, उसका इनको एक माल गाड़ीमें बैठा देना। एक स्त्रीका छूट जाना और

रोना। गार्डका गाड़ीको न रोकना।)

हलधर—बिचारोंको कैसी दुर्गति हो रही है। हो लो, लात घूंसे चलने लगे। सब मार खा रहे हैं।

फत्तू—यहां भी घूस दिये बिना नहीं चलता, किराया दिया, घूस ऊपरसे, लात घूंसे खाये उसकी कोई गिनती नहीं। बड़ा अंधेर है। रुपये बड़े जतनसे रखे हुए हैं। कैसा जल्दी निकाल रहा है कि कहीं गाड़ी न खुल जाय।

राजेश्वरी (सलोनीसे)—हाय हाय, बिचारी छूट गई, गोदमें लड़का भी है। गाड़ी नहीं रुकी। सब बड़े निर्दयी हैं। हाय भगवन् उसका क्या हाल होगा।

सलोनी—एक बेर इसी तरह मैं भी छूट गई थी। हरदुआर जाती थी।

राजेश्वरी—ऐसी गाड़ीपर कभी न सवार हो, पुण्य तो आगे पीछे मिलेगा; यह विपत्ति अभीसे सिरपर आ पड़ी।

(दूसरा चित्र-गांवका पटवारी खाटपर बस्ता खोले बैठा है। कई किसान आस-पास खड़े हैं। पटवारी सभोंसे सालाना नजर वसूल कर रहा है।)

हलधर—लालाका पेट तो फूलके कुप्पा हो गया है। चुटिया इतनी बड़ी है जैसे बैलकी पगहिया।

फत्तू—इतने आदमी खड़े गिड़गिड़ा रहे हैं पर सिर नहीं

चढ़ावे मानों कहींके राजा हैं ! अच्छा, पेटपर हाथ धरकर लोट गया। पेट अफर रहा है, बैठा नहीं जाता। चुटकी बजाकर दिखाता है कि भेंट लाओ। देखो एक किसान कमरसे रुपया निकालता है। मालूम होता है, बीमार रहा है, बदनपर मिरजई भी नहीं है। चाहे तो छातीके हाड़ गिन लो। वाह मुंशीजी। रुपया फेंक दिया, मुंह फेर लिया, अब बात न करेंगे। जैसे बंद-रिया रूठ जाती है और बन्दरकी ओर पीठ फेरकर बैठ जाती है, बिचारा किसान कैसा हाथ जोड़कर मना रहा है, पेट दिखा-कर कहता है, भोजनका ठिकाना नहीं, लेकिन लाला साहब कब सुनते हैं।

हलधर—बड़ा गलाकाटू जात है।

फत्तू—जानता है कि चाहे बना दूं, चाहे बिगाड़ दूं। यह सब हमारी ही दशा तो दिखाई जा रही है।

(तीसरा चित्र—थानेदार साहब गांवमें एक खाटपर बैठे हैं। चोरीके मालकी तफ़तीश कर रहे हैं। कई कान्स्टेबल वर्दी पहने हुए खड़े हैं। घरोंमें खानातलाशी हो रही है। घरकी सब चीजें देखी जा रही हैं। जो चीज जिसको पसन्द आती है उठा लेता है। औरतोंके बदनपरके गहने भी उतरवा लिये जाते हैं।)

फत्तू—इन जालिमोंसे खुदा बचाये।

एक किसान—आये हैं अपने पेट भरने। बहाना कर दिया

कि चोरीके मालका पता लगाने आये हैं।

फत्तू—अल्लाह मियांका कहर भी इनपर नहीं गिरता। देखो विचारोंकी खानातलाशी हो रही है।

हलधर—खानातलाशी काहेकी, लूट है। उसपर लोग कहते हैं कि पुलुस तुम्हारे जान मालकी रच्छा करती है।

फत्तू—इसके घरमें कुछ नहीं निकला।

हलधर—यह दूसरा घर किसी मालदार किसानका है। देखो हांड़ीमें सोनेका कण्ठा रखा हुआ है। गोप भी हैं। महतो इसे पहनकर नेवता खाने जाते होंगे। चौकीदारने उड़ा लिया। देखो औरतें आंगनमें खड़ी की गई है। उनके गहने उतारनेको कह रहा है।

फत्त—बिचारा महतो थानेदारके पैरोंपर गिर रहा है और अंजुलीभर रुपये लिये खड़ा है।

राजेश्वरी—(सलोनीसे) पुलुस वाले जिसकी इज्जत चाहे ले लें।

सलोनी—हां, देखते तो साठ बरस हो गये। इनके ऊपर तो जैसे कोई है ही नहीं।

राजे०—रुपये ले लिये, बिचारियोंकी जान बची। मैं तो इन सभोंके सामने कभी न खड़ी हो सकूं चाहे कोई मार ही डाले।

सलोनी—तसवीरें न जाने कैसे चलती हैं।

राजे०—कोई कल होगी और क्या।

हलधर—अब तमाशा बन्द हो रहा है।

एक किसान-आधी रात भी हो गई। सवेरे ऊख काटनी है।

सबल—आज तमाशा बन्द होता है। कल तुम लोगोंको और भी अच्छे २ चित्र दिखाये जायंगे जिससे तुम्हें मालूम होगा कि बीमारीसे अपनी रक्षा कैसे की जा सकती है। घरोंकी और गाँवकी सफाई कैसी होनी चाहिये, कोई बीमार पड़ जाय तो उसकी देख-रेख कैसे करनी चाहिये। किसीके घरमें आग लग जाय तो उसे कैसे बुझाना चाहिये। मुझे आशा है कि आजकी तरह तुम लोग कल भी आओगे।

(सब लोग जाते हैं)

—०—

पांचवां दृश्य

(प्रातःकालका समय राजेश्वरी अपनी गायको रेवड़में ले जा रही है । सबलसिंहसे मुठभेड़)

सबल—आज तीन दिनसे मेरे चन्द्रमा बहुत बलवान हैं। रोज एक बार तुम्हारे दर्शन हो जाते हैं। मगर आज मैं केवल देवीके दर्शनोंहीसे संतुष्ट न हूँगा। कुछ बरदान भी लूंगा।

(राजेश्वरी असमञ्जसमें पड़कर इधर उधर ताकती है और सिर झुकाकर खड़ी हो जाती है ।)

सबल—देवी, अपने उपासकोंसे यों नहीं लजाया करतीं। उन्हें धीरज देती हैं, उनकी दुःख कथा सुनती हैं, उनपर दयाकी दृष्टि फेरती हैं। राजेश्वरी, मैं भगवानको साची देकर कहता हूँ कि मुझे तुमसे जितनी श्रद्धा और प्रेम है उतना किसी उपासकको अपनी इष्ट देवीसे भी न होगा। मैंने जिस दिनसे तुम्हें देखा है उसी दिनसे अपने हृदय-मन्दिरमें तुम्हारी पूजा करने लगा हूं। क्या मुझपर जरा भी दया न करोगी ?

राजेश्वरी—दया आपकी चाहिये आप हमारे ठाकुर हैं। मैं तो आपकी चेरी हूँ। अब मैं जाती हूँ। गाय किसीके खेतमें पैठ जायगी। कोई देख लेगा तो अपने मनमें न जाने क्या कहेगा।

सबल—तीनों तरफ अरहर और ऊखके खेत हैं, कोई नहीं देख सकता। मैं इतनी जल्द तुम्हें न जाने दूंगा। आज महीनोंके बाद मुझे वह सुअवसर मिला है, बिना बरदान लिये न छोड़ूंगा। पहले यह बतलाओ कि इस काक मण्डलीमें तुम जैसी हंसनी क्यों कर आ पड़ी ? तुम्हारे माता पिता क्या करते हैं ?

राजे०—यह कहानी कहने लगूंगी तो बड़ी देर हो जायगी। मुझे यहां कोई देख लेगा तो अनर्थ हो जायगा।

सबल—तुम्हारे पिता भी खेती करते हैं ?

राजे०—पहले बहुत दिनोंतक टापूमें रहे। वहीं मेरा जन्म हुआ। जब वहांके सरकारने उनकी जमीन छीन ली तो यहां चले आये। तबसे खेती बारी करते हैं। माताका वहीं देहान्त हो गया। मुझे याद आता है कुन्दनकासा रंग था। बहुत सुन्दर थीं।

सबल—समझ गया। (तृष्णापूर्ण नेत्रोंसे देखकर) तुम्हारा तो इन गवांरोंमें रहनेसे जी घबराता होगा। खेतीबारीकी मेहनत भी तुम जैसी कोमलांगी सुन्दरीको बहुत अखरती होगी।

राजेश्वरी—(मनमें) ऐसे तो बड़े दयालु और सज्जन आदमी हैं लेकिन निगाह अच्छी नहीं जान पड़ती। इनके साथ कुछ कपट-व्योहार करना चाहिये। देखूं किस रंगपर चलते हैं। (प्रगट) क्या करूँ भाग्यमें जो लिखा था वह हुआ।

सबल- भाग्य तो अपने हाथका खेल है। जैसे चाहो वैसा बन सकता है। जब मैं तुम्हारा भक्त हूँ तो तुम्हें किसी बातकी चिंता न करनी चाहिये। तुम चाहो तो कोई नौकर रख लो। उसकी तलब मैं दे दूँगा, गाँवमें रहनेकी इच्छा न हो तो शहर चलो, हलधरको अपने यहां रख लूँगा, तुम आरामसे रहना। तुम्हारे लिये मैं सब कुछ करनेको तैयार हूँ, केवल तुम्हारी दया-दृष्टि चाहता हूँ। राजेश्वरी, मेरी इतनी उम्र गुजर गई लेकिन परमात्मा जानते हैं कि आजतक मुझे न मालूम हुआ कि प्रेम क्या वस्तु है। मैं इस रसके स्वादको जानता ही न था, लेकिन जिस दिनसे तुमको देखा है प्रेमानन्दका अनुपम सुख भोग रहा हूँ। तुम्हारी सूरत एक क्षणके लिये भी आंखोंसे नहीं उतरती। किसी काममें जी नहीं लगता, तुम्हीं चित्तमें बसी रहती हो। बगीचेमें जाता हूं तो मालूम होता है कि फूलमें तुम्हारी ही सुगंधि है, श्यामाकी चहक सुनता हूँ तो मालूम होता है कि तुम्हारी ही मधुर ध्वनि है। चन्द्रमाको देखता हूँ तो जान पड़ता है कि वह तुम्हारी ही मूर्त्ति है। प्रबल उत्कण्ठा होती है कि चलकर तुम्हारे

चरणोंपर सिर झुका दूँ। ईश्वरके लिये यह मत समझो कि मैं तुम्हें कलङ्कित करना चाहता हूँ। कदापि नहीं! जिस दिन यह कुभाव, यह कुचेष्टा, मनमें उत्पन्न होगी उस दिन हृदयको चीर कर बाहर फेंक दूँगा। मैं केवल तुम्हारे दर्शनोंसे अपनी आंखों को तृप्त करना, तुम्हारी सुललित वाणीसे अपने श्रवणको मुग्ध करना चाहता हूँ। मेरी यही परमाकांक्षा है कि तुम्हारे निकट रहूं, तुम मुझे अपना प्रेमी और भक्त समझो और मुझसे किसी प्रकारका परदा या सङ्कोच न करो। जैसे किसी सागरके निकटके वृक्ष उससे रस खींचकर हरे भरे रहते हैं उसी प्रकार तुम्हारे समीप रहनेसे मेरा जीवन आनन्दमय हो जायगा।

(चेतनदास एक भजन गाते हुए दोनो प्राणियोंको देखते चले जाते हैं।)

राजेश्वरी—(मनमें) मैं इनसे कौशल करना चाहती थी पर न जाने इनकी बातें सुनकर क्यों हृदय पुलकित हो रहा है। एक एक शब्द मेरे हृदयमें चुभा जाता है। (प्रगट) ठाकुर साहेब, एक दीन मजूरी करनेवाली स्त्रीसे ऐसी बातें करके उसका सिर आसमानपर न चढ़ाइये। मेरा जीवन नष्ट हो जायगा। आप धर्मात्मा हैं, जसी हैं, दयावान हैं। आज घर-घर आपके जसका बखान हो रहा है, आपने अपनी प्रजापर जो दया की है उसकी महिमा मैं नहीं गा सकती। लेकिन यह बातें अगर

किसीके कानमें पड़ गई तो यही परजा जो आपके पैरोंकी धूल माथेपर चढ़ानेको तरसती है आपकी बैरी हो जायगी, आपके पीछे पड़ जायगी। अभी कुछ नहीं बिगड़ा है। मुझे भूल जाइये। संसारमें एकसे एक सुन्दर औरतें हैं। मैं गँवारिन हूँ। मजूरी करना मेरा काम है। इन प्रेमकी बातोंको सुनकर मेरा चित्त ठिकाने न रहेगा। मैं उसे अपने वशमें न रख सकूंगी। वह चञ्चल हो जायगा और न जाने उस अचेत दशामें क्या कर बैठे। उसे फिर नामकी, कुलकी, निन्दा की लाज न रहेगी। प्रेम बढ़ती हुई नदी है। उसे आप यह नहीं कह सकते कि यहांतक चढ़ना, इसके आगे नहीं। चढ़ाव होगा तो वह किसीके रोके न रुकेगी। इसलिये मैं आपसे विनती करती हूँ कि यहीं तक रहने दीजिये। मैं अभीतक अपनी दशामें सन्तुष्ट हूं। मुझे इसी दशा-में रहने दीजिये। अब मुझे देर हो रही है, जाने दीजिये।

सबल-राजेश्वरी, प्रेमके मदसे मतवाला आदमी उपदेश नहीं सुन सकता। क्या तुम समझती हो कि मैंने बिना सोचे-समझे इस पथपर पग रखा है। मैं दो महीनोंसे इसी रैन बैसमें हूँ। मैंने नीतिका, सदाचरणका, धर्मका, लोकनिन्दाका, आश्रय लेकर देख लिया, कहीं संतोष न हुआ तब मैंने यह पथ पकड़ा। मेरे जीवनका बनाना बिगाड़ना अब तुम्हारे ही हाथ है। अगर तुमने मुझपर तरस न खाया तो अन्त यही होगा कि मुझे आत्महत्या

जैसा भीषण पाप करना पड़ेगा। क्योंकि मेरी दशा असह्य हो गई है। मैं इसी गाँवमें घर बना लूँगा, यहीं रहूँगा, तुम्हारे लिये भी मकान, धन सम्पत्ति, जगह ज़मीन; किसी पदार्थकी कमी न रहेगी। केवल तुम्हारी स्नेह-दृष्टि चाहता हूँ।

राजेश्वरी—(मनमें) इनकी बातें सुनकर मेरा चित्त चंचल हुआ जाता है। आप ही आप मेरा हृदय इनकी ओर खिंचा जाता है,पर यह तो सर्वनाशका मार्ग है। इससे मैं इन्हें कटु वचन सुना कर यहीं रोक देती हूँ। (प्रगट) आप विद्वान हैं, सज्जन हैं, धर्मात्मा हैं, परोपकारी हैं, और मेरे मनमें आपका जितना मान है वह मैं कह नहीं सकती। मैं अबसे थोड़ी देर पहले आपको देवता समझती थी। पर आपके मुँहसे ऐसी बातें सुनकर दुःख होता है। मैंने आपसे अपना हाल साफ-साफ कह दिया। उस-पर भी आप वही बातें करते जाते हैं। क्या आप समझते हैं कि मैं अहीर जात और किसान हूँ तो मुझे अपने धरम-करम-का कुछ विचार नहीं है और मैं धन और सम्पत्तिपर अपने धरमको बेच दूँगी। आपका यह भरम है। अगर आपको मैं इतनी सिरिद्धासे न देखती होती तो इस समय आप यहाँ इस तरह बेधड़क मेरे धरमको सत्यानास करनेकी बातचीत न करते। एक पुकारपर सारा गाँव यहाँ आजाता और आपको मालूम हो जाता कि देहातके गँवार अपनी औरतोंकी लाज

कैसे रखते हैं। मैं जिस दशामें भी हूँ, संतुष्ट हूँ, मुझे किसी वस्तुकी तृषना नहीं है। आपका धन आपको मुबारक रहे। आपका कुशल इसीमें है कि अभी आप यहाँसे चले जाइये। अगर गाँववालोंके कानोंमें इन बातोंकी ज़रा भी भनक पड़ी तो वह मुझे तो किसी तरह जीता न छोड़ेंगे पर आपके भी जानके दुश्मन हो जायँगे। आपकी दया, उपकार-सेवा एक भी आपको उनके कोपसे न बचा सकेगा।

(*चली जाती है*)

सबल—(आप ही आप) इसकी संगति मेरे चित्तको हटानेकी जगह और भी बलके साथ अपनी ओर खींचती है। ग्रामीण स्त्रियां भी इतनी दृढ़ और आत्माभिमानी होती हैं, इसका मुझे ज्ञान न था। अबोध बालकको जिस कामके लिये मना करो वही अदबदा कर करता है। मेरे चित्तकी दशा उसी बालकके समान है। वह अवहेलनासे हतोत्साह नहीं, वरन् और भी उत्तेजित होता है।

(*प्रस्थान*)

छठा दृश्य

स्थान—मधुबन गांव, समय—फागुनका अंत, तीसरा पहर, गांवके लोग बैठे बातें कर रहे हैं।

एक किसान—बेगार तो सब बन्द हो गई थी। अब यह दलहाईकी बेगार क्यों मांगी जाती है ?

फत्तू—जमींदारकी मरजी। उसीने अपने हुकुमसे बेगार बन्द की थी। वही अपने हुकुमसे जारी करता है।

हलधर—यह किस बातपर चिढ़ गये? अभी तो चार ही पाँच दिन होते हैं तमाशा दिखाकर गये हैं। हमलोगोंने उनकी सेवा सत्कारमें तो कोई बात उठा नहीं रखी।

फत्तू—भाई राजाठाकुर हैं, उनका मिजाज बदलता रहता है। आज किसीपर खुश हो गये तो उसे निहाल कर दिया, कल नाखुश हो गये तो हाथीके पैरोंतले कुचलवा दिया। मनकी बात है।

हलधर—अकारन ही थोड़े किसीका मिजाज बदलता है!

वह तो कहते थे अब तुम लोग हाकिम हुक्काम किसीको भी बेगार मत देना। जो कुछ होगा मैं देख लूंगा। कहां आज यह हुकुम निकाल दिया। जरूर कोई बात मरजीके खिलाफ हुई है।

फत्तू—हुई होगी। कौन जाने घर हीमें किसीने कहा हो असामी अब सेर हो गये, तुम्हें बात भी न पूछेंगे। इन्होंने कहा हो कि सेर कैसे हो जायंगे, देखो अभी बेगार लेकर दिखा देते हैं। या कौन जाने कोई काम काज आ पड़ा हो। अरहर भरी रखी हो दलवाकर बेच देना चाहते हों।

कई आदमी—हां ऐसी ही कोई बात होगी। जो हुकुम देंगे वह बजाना ही पड़ेगा नहीं तो रहेंगे कहां।

एक किसान—और जो बेगार न दें तो क्या करें?

फत्तू—करनेकी एक ही कही। नाकमें दम कर दें, रहना मुसकिल हो जाय। अरे और कुछ न करें लगानकी रसीद ही न दें तो उनका क्या बना लोगे। कहाँ फिरियाद ले जावोगे और कौन सुनेगा। कचहरी कहां तक दौड़ोगे। फिर वहां भी उनके सामने तुम्हारी कौन सुनेगा!

कई आदमी—आजकल मरनेकी छुट्टी ही नहीं है, कचहरी कौन दौड़ेगा। खेती तैयार खड़ी है, इधर ऊख बोना है, फिर अनाज माड़ना पड़ेगा। कचहरीके धक्के खानेसे तो यही अच्छा है कि जमींदार जो कहे वही बजावें।

फत्तू—घर पीछे एक औरत जानी चाहिये। बुढ़ियोंको छांट कर भेजा जाय।

हलधर—सबके घर बुढ़िया कहां हैं?

फत्तू—तो बहू-बेटियोंको भेजनेकी सलाह मैं न दूंगा।

हलधर—वहां इसका कौन खटका है।

फत्तू—तुम क्या जानो, सिपाही हैं, चपरासी हैं, क्या वहाँ सबके सब देवता ही बैठे हैं। पहलेकी दूसरी बात थी।

एक किसान—हां, यह बात ठीक है। मैं तो अम्मांको भेज दूंगा।

हलधर—मैं कहांसे अम्मां लाऊं?

फत्तू—गांवमें जितने घर हैं क्या उतनी बुढ़ियां न होंगी। गिनो-१-२-३-राजाकी मां चार...उस टोलेमें पांच, पच्छिम ओर सात, मेरी तरफ ९—कुल पचीस बुढ़ियां हैं।

हलधर—घर कितने होंगे?

फत्तू—घर तो अबको मरदुम सुमारीमें ३० थे। कह दिया जायगा पांच घरोंमें कोई औरत ही नहीं है, हुकुम हो तो मर्द ही जा हों।

हलधर—मेरी ओरसे कौन बुढ़िया जायगी?

फत्तू—सलोनी काकीको भेज दो। लो वह आप ही आ गई।

(*सलोनी आती है*)

अरे सलोनी काकी, तुझे जमींदारकी दलहाईमें जाना पड़ेगा।

सलोनी—जाय नौज, जमींदारके मुंहमें लूका लगे, मैं उसका क्या चाहती हूँ कि बेगार लेगा। एक धुर जमीन भी तो नहीं है। और बेगार तो उसने बन्द कर दी थी?

फत्तू—जाना पड़ेगा, उसके गांवमें रहती हो कि नहीं?

सलोनी—गांव उसके पुरखोंका नहीं है, हां नहीं तो। फतुआ मुझे चिढ़ा मत, नहीं कुछ कह बैठूंगी।

फत्तू—जैसे गा गा कर चक्की पीसती हो उसी तरह गा गा कर दाल दलना। बता कौन गीत गावोगी?

सलोनी—डाढ़ी जार मुझे चिढ़ा मत, नहीं गाली दे दूंगी। मेरी गोदका खेला लौंडा मुझे चिढ़ाता है।

फत्तू—कुछ तूही थोड़ी जायगी। गांवकी सभी बुढ़िया जायंगी।

सलोनी—गंगा असनान है क्या? पहले तो बूढ़ियां छांट कर न जाती थीं। मैं उमिर भर कभी नहीं गई। अब क्या बहुओंको परदा लगा है। गहने गढ़ा-गढ़ा तो वह पहनें, बेगार करने बूढ़ियां जायं!

फत्त—अबकी कुछ ऐसी ही बात आ पड़ी है। हलधरके

घर कोई बुढ़िया नहीं है। उसकी घरवाली कलकी बहुरिया है जा नहीं सकती। उसकी ओरसे चली जा।

सलोनी—हाँ उसकी जगहपर चली जाऊंगी। बिचारी मेरी बड़ी सेवा करती है। जब जाती हूँ तो बिना सिरमें तेल डाले और हाथ पैर दबाये नहीं आने देती। लेकिन बहली जुता-देगा न ?

फत्तू—बेगार करने रथपर बैठ कर जायगी।

हलधर—नहीं काकी, मैं बहली जुता दूंगा। सबसे अच्छी बहलीमें तुम बैठना।

सलोनी—बेटा, तेरी बड़ी उम्मिर हो, जुग जुग जी। बह-लीमें ढोल मजीरा रख देना। गाती-बजाती जाऊंगी।

सातवां दृश्य

(समय—सन्ध्या, स्थान—मधुबन ।

ओले पड़ गये हैं, गांवके स्त्री-पुरुष खेतोंमें जमा हैं ।)

फत्तू—अल्लाहने परसी परसाई थाली छीन ली ।

हलधर—बना बनाया खेल बिगड़ गया ।

फत्तू—छावत लागत ६ बरस और छिनमें होत उजाड़ । कई सालके बाद तो अबकी खेती जरा रङ्गपर आई थी । कल इन खेतोंको देखकर कैसी गज भरकी छाती हो जाती थी । ऐसा जान पड़ता था सोना बिछा दिया गया है । बित्ते-बित्ते भरकी बालें लहराती थीं, पर अल्लाहने मारा सब सत्यानास कर दिया । बागमें निकल जाते थे तो बौरकी महँकसे चित्त खिल उठता था । पर आज बौरकी कौन कहे पत्तोतक झड़ गये ।

एक वृद्ध किसान—मेरी यादमें इतने बड़े-बड़े ओले कभी न पड़े थे ।

हलधर—मैंने इतने बड़े ओले देखे ही न थे, जैसे चट्टान

काट-काटकर लुढ़का दिया गया हो।

फत्तू—तुम अभी हो कै दिनके। मैंने भी इतने बड़े ओले नहीं देखे।

एक वृद्ध किसान—एक बेर मेरी जवानीमें इतने बड़े ओले गिरे थे कि सैकड़ों ढोर मर गये। जिधर देखो मरी हुई चिड़ियां गिरी मिलती थीं। कितने ही पेड़ गिर पड़े। पक्की छतेंतक फट गई थीं। बखारोंमें अनाज सड़ गये, रसोईमें बरतन चकनाचूर हो गये। मुदा हाँ अनाजकी मड़ाई हो चुकी थी। इतना नकसान नहीं हुआ था।

सलोनी—मुझे तो मालूम होता है जमींदारकी नीयत बिगड़ गई है, तभी ऐसी तबाही हुई है।

राजे०—काकी, भगवान न जाने क्या करनेवाले हैं। बार-बार मने करती थी कि अभी महाजनसे रुपये न लो। लेकिन मेरी कौन सुनता है। दौड़े२ गये २००) उठा लाये जैसे अपनी धरोहर हो। देखें अब कहांसे देते हैं। लगान ऊपरसे देना है। पेट तो मजूरी करके भर जायगा लेकिन महाजनसे कैसे गला छूटेगा।

हलधर—भला पूछो तो काकी कौन जानता था कि क्या सुदनी है। आगम देखके तब रुपये लिये थे। यह आफत न आ जाती तो १००) का तो अकेले तेलहन निकल आता। छाती भर गेहूँ खड़ा था।

फत्तू—अब तो जो होना था वह हो गया। पछतानेसे क्या हाथ आयेगा।

राजे०—आदमी ऐसा काम ही क्यों करे कि पीछेसे पछताना पड़े।

सलोनी—मेरी सलाह मानो। सब जने जाकर ठाकुरसे फिरियाद करो कि लगानकी माफी हो जाय। दयावान आदमी हैं। मुझे तो बिस्सास है कि माफ कर देंगे। दलहाईकी बेगारमें हम लोगोंसे बड़े प्रेमसे बातें करते रहे। किसीको छटाँक भर भी दाल न दलने दी। पछताते रहे कि नाहक तुम लोगोंको दिक किया। मुझसे बड़ी भूल हुई। मैं तो फिर कहूँगी कि आदमी नहीं देवता हैं।

फत्तू—जमींदारके माफ करनेसे थोड़े माफी होती है; जब सरकार माफ करे तब न? नहीं तो जमींदारको मालगुजारी घरसे चुकानी पड़ेगी। तो सरकारसे इसकी कोई आसा नहीं। अमले लोग तहकिकात करनेको भेजे जायँगे। वह असामियोंसे खूब रिसवत पायेंगे तो नकसान दिखायेंगे नहीं तो लिख देंगे ज्यादा नकसान नहीं हुआ। सरकार बहुत करेगी।) की छूट कर देगी। जब ।।।) देने ही पड़ेंगे तो।) और सही। रिसवत और कचहरीकी दौड़से तो बच जायेंगे। सरकारको अपना खजाना भरनेसे मतलब है कि परजाको पालनेसे। सोचती होगी यह

सब न रहेंगे तो इनके और भाई तो रहेंगे ही। जमीन परती थोड़े पड़ी रहेगी।

एक वृद्ध किसान—सरकार एक पैसा भी न छोड़ेगी। इस साल कुछ छोड़ भी देगी तो अगले साल सूद समेत वसूल कर लेगी।

फत्तू—बहुत निगाह करेगी तो तकावी मंजूर कर देगी। उसकी भी सूद लेगी। हर बहानेसे रुपया खींचती है। कचहरीमें झूठो कोई दरखास देने जावो तो बिना टके खर्च किये सुनाई नहीं होती। अफ़ीम सरकार बेचे, दारू, गाँजा, भांग, मदक, चरस सरकार बेचे। और तो और नोनतक बेचती है। इस तरह रुपया न खींचे तो अफ़सरोंकी बड़ी २ तलब कहाँसे दे। कोई १ लाख पाता है, कोई दो लाख, कोई तीन लाख। हमारे यहाँ जिसके पास लाख रुपये होते हैं वह लखपती कहलाता है, मारे घमंडके सीधे ताकता नहीं। सरकारके नौकरोंकी एक एक सालकी तलब दो दो लाख होती है। भला वह लगानकी एक पाई भी छोड़ेगी।

हलधर—बिना सुराज मिले हमारी दसा न सुधरेगी। अपना राजा होता तो इस कठिन समयमें अपनी मदद करता।

फत्तू—मदद करेंगे! देखते हो जबसे दारू, अफीमकी बिक्री बन्द हो गई है अमले लोग नसेका कैसा बखान करते फिरते

हैं। कुरान शरीफमें नसा हराम लिखा है, और सरकार चाहती है कि देस नसेबाज हो जाय। सुना है साहबने आजकल हुकुम दे दिया है कि जो लोग खुद अफीम सराब पीते हों और दूसरोंको पीनेकी सलाह देते हों उनका नाम खैरखाहोंमें लिख लिया जाय। जो लोग पहले पीते थे और अब छोड़ बैठे हैं, या दूसरोंको पीना मना करते हैं उनका नाम बागियोंमें लिखा जाता है।

हलधर—इतने सारे रुपये क्या तलबोंमें ही उठ जाता है?

राजे०--गहने बनवाते हैं।

ठीक तो कहती है क्या सरकारके जोरू बच्चे नहीं हैं। इतनी बड़ी फौज बिना रुपयेके ही रखी है। एक-एक तोप लाखोंमें आती है। हवाई जहाज कई-कई लाखके होते हैं। सिपाहियोंको कूचके लिये हवा गाड़ी चाहिये। जो खाना यहां रईसोंको मयस्सर नहीं होता वह सिपाहियोंको खिलाया जाता है। सालमें ६ महीने सब बड़े २ हाकिम पहाड़ोंकी सैर करते हैं। देखते तो हो छोटे-छोटे हाकिम भी बादसाहोंकी तरह ठाटसे रहते हैं, अकेली जानपर १०—१५ नौकर रखते हैं, एक पूरा बङ्गला रहनेको चाहिये। जितना बड़ा हमारा गांव है उससे ज्यादा जमीन एक बंगलेके हातेमें होती है। सुनते हैं सब १०—२०) बोतलकी सराब पीते हैं। हमको तुमको भर पेट रोटियां नहीं नसीब होतीं, वहां रात दिन दंग चढ़ा रहता है। हम तुम रेल-

गाड़ीमें धक्के खाते हैं। एक-एक डब्बेमें जहां दसकी जगह है वहां २०--२५—३०—४० ठूंस दिये जाते हैं। हाकिमोंके वास्ते सभी सजी-सजाई गाड़ियां रहती हैं, आरामसे गद्दीपर लेटे हुए चले जाते हैं। रेलगाड़ीको जितना हम किसानोंसे मिलता है उसका एक हिस्सा भी उन लोगोंसे न मिलता होगा। मगर तिसपर भी हमारी कहीं पूछ नहीं। जमानेकी खूबी है !

हलधर—सुना है मेमें अपने बच्चोंको दूध नहीं पिलातीं।

फत्तू—सो ठीक है, दूध पिलानेसे औरतका शरीर ढीला हो जाता है, वह फुरती नहीं रहती। दाइयां रख लेते हैं। वही बच्चोंको पालती पोसती हैं। मां खाली देख भाल करती रहती हैं। लूट है लूट !

सलोनी—दरखास दो मेरा मन कहता है छूट हो जायगी।

फत्तू—कह तो दिया दो चार आनेकी छूट हुई भी तो बरसों लग जायंगे। पहले पटवारी कागद बनायेगा उसको पूजो, तब कानूगो जांच करेगा, उसको पूजो, तब तहसीलदार नजर सानी करेगा, उसको पूजो, तब डिप्टीके सामने कागद पेस होगा, उसको पूजो, वहांसे तब बड़े साहबके इजलासमें जायगा, वहां अहलमद और अरदली और नाजिर सभीको पूजना पड़ेगा। बड़े साहब कमसनरको रपोट देंगे, वहां भी कुछ न कुछ पूजा करनी पड़ेगी। इस तरह मनजूरी होते-होते एक जुग बीत

जायगा। इन सब झंझटोंसे तो यही अच्छा है कि

रहिमन चुप ह्वै बैठिये देखि दिननको फेर।
जब नीके दिन आइहैं बनत न लगिहैं देर॥

हलधर—मुझे तो ६०) लगान देने हैं। बैल बधिया बिक जायंगे तब भी पूरा न पड़ेगा।

एक किसान—बचेंगे किसके। अभी साल भर खानेको चाहिये। देखो गेहूंके दाने कैसे बिखड़े पड़े हैं जैसे किसीने मसल दिये हों।

हलधर—क्या करना होगा?

राजे०—होगा क्या जैसी करनी है वैसी भरनी होगी। तुम तो खेतमें बाल लगते ही बावले हो गये। लगान तो था ही ऊपरसे महाजनका बोझ भी सिर पर लाद लिया।

फत्तू—तुम मैके चली जाना। हम दोनों जाकर कहीं मजूरी करेंगे। अच्छा काम मिल गया तो साल भरमें डोंगा पार है।

राजे०- हां और क्या, गहने तो मैंने पहने हैं, गायका दूध मैंने खाया है, बरसी मेरे ससुरकी हुई है, अब तो भरौतीके दिन आये तो मैं मैके भाग जाऊँ। यह मेरा किया न होगा। तुम लोग जहां जाना वहीं मुझे भी लेते चलना। और कुछ न होगा तो पकी-पकाई रोटियां तो मिल जायँगी।

सलोनी—बेटी, तूने यह बात मेरे मनकी कही। कुलवन्ती

नारीके यही लच्छन हैं। मुझे भी अपने साथ लेती चलना।

(*गाती है*)

चलो पटनेकी देखो बहार, सहर गुलजार रे।

फत्तू—हां दाई खूब गा, गानेका यही अवसर है। सुखम तो सभी गाते हैं।

सलोनी—और क्या बेटा अब तो जो होना था हो गया। रोनेसे लौट थोड़े ही आयेगा।

(*गाती है*)

उसी पटनेमें तमोलिया बसत है।
बीड़ोंकी अजब बहार रे।
पटना सहर गुलजार रे॥

फत्तू—काकीका गाना तानसेन सुनता तो कानोंपर हाथ रखता। हां दाई।

(*गाती है*)

उसी पटनेमें बजजवा बसत है।
कैसी सुन्दर लगी है बाजार रे।
पटना सहर गुलजार रे।

फत्तू—बस एक कड़ी और गा दे काकी। तेरे हाथ जोड़ता हूं। जी बहल गया।

सलोनी—जिसे देखो गानेको ही कहता है, कोई यह नहीं

पूछता कि बुढ़िया कुछ खाती पीती भी है या आसीरबादोंसे ही जीती है।

राजे०—चलो मेरे घर काकी क्या खावोगी?

सलोनी—हलधर, तू इस हीरेको डिबियामें बन्द कर ले, ऐसा न हो किसीकी नजर लग जाय। हां बेटी, क्या खिलायेगी?

राजे०—जो तुम्हारी इच्छा हो।

सलोनी—भरपेट?

राजे०—हाँ और क्या?

सलोनी—बेटी तुम्हारे खिलानेसे अब मेरा पेट न भरेगा। मेरा पेट भरता था जब रुपयेका पसेरी भर घी मिलता था। अब तो पेट ही नहीं भरता। चार पसेरी अनाज पीसकर जांतपरसे उठती थी। चार पसेरीकी रोटियां पकाकर चौकेसे निकलती थी। अब बहुएं आती हैं तो चूल्हेके सामने जाते उनको ताप चढ़ आती है, चक्कीपर बैठते ही सिरमें पीड़ा होने लगती है। खानेको तो मिलता नहीं बल-बूता कहांसे आये। न जाने उपज ही नहीं होती कि कोई ढो ले जाता है। बीस मनका बीघा उतरता था। २०) भी हाथमें आ जाते थे, तो पछाईं बैलोंकी जोड़ी द्वारपर बँध जाती थी। अब देखनेको रुपये तो बहुत मिलते हैं, पर ओलेकी तरह देखते-देखते गल जाते हैं। अब तो

भिखारीको भीख देना भी लोगोंको अखरता है।

फत्तू—सच कहना काकी, तुम काकाको मुट्ठीमें दबा लेती थी कि नहीं ?

सलोनी—चल, उनका जोड़ दस बीस गांवमें न था। तुझे तो होस आता होगा, कैसा डील-डौल था। चुटकीसे सुपारी फोड़ देते थे।

(*गाती है।*)

चलो चलो सखी अब जाना,
पिया भेज दिया परवाना। (टेक)
एक दूत जबर चल आया, सब लश्कर संग सजायारी।
किया बीच नगरके ठाना
गढ़ कोट किले गिरवाये, सब द्वार बन्द करवायेरी।
... ...
अब किस विधि होय रहाना।
जब दूत महलमें आवे, तुझे तुरत पकड़े ले जावेरी।
तेरा चले न एक बहाना॥
पिया भेज दिया परवाना॥

द्वितीय अङ्क

पहला दृश्य

स्थान—चेतनदासकी कुटी, गंगातट समय—संध्या।

सबल०—महाराज, मनोवृत्तियोंके दमन करनेका सबसे सरल उपाय क्या है?

चेतन—उपाय बहुत हैं, किन्तु मैं मनोवृत्तियोंके दमन करनेका उपदेश नहीं करता। उनको दमन करनेसे आत्मा संकुचित हो जाती है। आत्माको ज्ञानेन्द्रियों द्वारा ही ज्ञान प्राप्त होता है। यदि इन्द्रियोंको दमन कर दिया जाय तो मनुष्यकी चेतना शक्ति लुप्त हो जायगी। योगियोंने इच्छाओंको रोकनेके लिये कितने ही यत्न लिखे हैं। हमारे योगग्रन्थ उन उपदेशोंसे परिपूर्ण हैं। मैं इन्द्रियोंको दमन करना अस्वाभाविक, हानिकर और आपत्तिजनक समझता हूँ।

सबल—(मनमें) आदमी तो विचारशील जान पड़ता है। मैं इसे रंगा हुआ समझता था। (प्रगट) यूरोपके तत्वज्ञानियोंने कहीं-कहीं इस विचारका पुष्टीकरण किया है, पर अबतक मैं उन

विचारोंको भ्रांतिकारक समझता था। आज आपके श्रीमुखसे उनका समर्थन सुनकर मेरे कितने ही निश्चित सिद्धान्तोंको आघात पहुंच रहा है।

चेतन—इन्द्रियों द्वारा ही हमको जगत्का ज्ञान प्राप्त होता है। वृत्तियोंको दमन कर देनेसे ज्ञानका एक मात्र द्वार ही बन्द हो जाता है। अनुभवहीन आत्मा कदापि उच्च पद नहीं प्राप्त कर सकती। अनुभवका द्वार बन्द करना विकासका मार्गबन्द, करना है, प्रकृतिके सब नियमोंके कार्य्यमें बाधा डालना है। वही आत्मा मोक्षपद प्राप्त कर सकती है जिसने अपने ज्ञान द्वारा, इन्द्रियोंको मुक्त रखा हो। त्यागका महत्व आह्वानमें नहीं है। जिसने मधुर सङ्गीत सुनी ही न हो उसे सङ्गीतकी रुचि न हो तो कोई आश्चर्य नहीं। आश्चर्य तो तब है कि जब वह सङ्गीत कलाका भली-भाँति आस्वादन करने, उसमें लिप्त होनेके पीछे वृत्तियोंको उधरसे हटा ले। वृत्तियोंको दमन करना वैसा ही है जैसे बालकको खड़े होने या दौड़नेसे रोकना। ऐसे बालक-को चोट चाहे न लगे पर वह अवश्य ही अपंग हो जायगा।

सबल—(मनमें) कितने स्वाधीन और मौलिक विचार हैं। (प्रगट) तब तो आपके विचारमें हमें अपनी इच्छाओंको अबाध्य कर देना चाहिये।

चेतन—मैं तो यहांतक कहता हूं कि आत्माके विकासमें

पापोंका भी मूल्य है। उज्वल प्रकाश सात रंगोंके सम्मिश्रणसे बनता है। उसमें लाल रंगका महत्व उतना ही है जितना नीले या पीले रंगका। उत्तम भोजन वही है जिसमें षट्-रसों-का सम्मिश्रण हो। इच्छाओंको दमन करो, मनोवृत्तियोंको रोको, यह मिथ्या तत्त्ववादियोंके ढकोसले हैं। यह सब अबोध बालकोंको डरानेके जू जू हैं। नदीके तटपर न जाओ, नहीं तो डूब जाओगे, यह मूर्ख माता-पिताकी शिक्षा है। विचारशील प्राणी अपने बालकको नदीके तटपर केवल ले ही नहीं जाते वरन् उसे नदीमें प्रविष्ट कराते हैं, उसे तैरना सिखाते हैं।

सबल—(मनमें) कितनी मधुर वाणी है। वास्तवमें प्रेम चाहे कलुषित ही क्यों न हो चरित्र-निर्माणमें अवश्य अपना स्थान रखता है। (प्रगट) तो पाप कोई घृणित वस्तु नहीं ?

चेतन—कदापि नहीं। संसारमें कोई वस्तु घृणित नहीं है, कोई वस्तु त्याज्य नहीं है। मनुष्य अहंकारके वश होकर अपनेको दूसरोंसे श्रेष्ठ समझने लगता है। वास्तवमें धर्म और अधर्म, सुविचार और कुविचार, पाप और पुण्य, यह सब मानवजीवन-की मध्यवर्ती अवस्थाएं मात्र हैं।

सबल—(मनमें) कितना उदार हृदय है। (प्रगट) महाराज आपके उपदेशसे मेरे सन्तप्त हृदयको बड़ी शांति प्राप्त हुई।

(*प्रस्थान*)

चेतन—(आपही आप) इस जिज्ञासाका आशय खूब समझता हूँ। तुम्हारी अशान्तिका रहस्य खूब जानता हूँ। तुम फिसल रहे थे, मैंने एक धक्का और दे दिया। अब तुम नहीं संभल सकते।

समय—संध्या, स्थान—सबलसिंहकी बैठक।

सबल—(आपही आप) मैं चेतनदासको धूर्त समझता था, पर वह तो ज्ञानी महात्मा निकले। कितना तेज और शौर्य्य है। ज्ञानी उनके दर्शनोंको लालायित हैं। क्या हर्ज है। ऐसे आत्म-ज्ञानी पुरुषोंके दर्शनसे कुछ उपदेश ही मिलेगा।

(*कंचनसिंहका प्रवेश*)

कंचन—(तार दिखाकर) दोनों जगह हार हुई। पूनामें घोड़ा कट गया। लखनऊमें जाकी घोड़ेसे गिर पड़ा।

सबल—यह तो तुमने बुरी खबर सुनाई। कोई पांच हजा-रका नुकसान हो गया।

कंचन—गल्लेका बाजार चढ़ गया। अगर अपना गेहूँ दस दिन और न बेचता तो दो हज़ार साफ़ निकल आते।

सबल—पर आगम कौन जानता था।

कंचन—असामियोंसे एक कौड़ी वसूल होनेकी आशा नहीं।

सुना है कई असामी घर छोड़कर भागनेकी तैयारी कर रहे हैं। बैल बधिया बेचकर जायँगे। कबतक लौटेंगे कौन जानता है। मरें, जियें न जाने क्या हो। यत्न न किया गया तो ये सब रुपये भी मारे जायँगे। पांच हज़ारके माथे जायगी। मेरी राय है कि उनपर डिगरी कराके जायदाद नीलाम करा ली जाय। असामी सबके सब मोतबर हैं लेकिन ओलोंने तबाह कर दिया।

सबल—उनके नाम याद हैं?

कंचन—सबके नाम तो नहीं लेकिन दस पांच नाम छाँट लिये हैं। जगरांवका लल्लू, तुलसी भूफोर, मधुबनका सीता, नब्बी, हलधर, चिरौंजी.........

सबल—(चौंककर) हलधरके जिम्मे कितने रुपये हैं?

कंचन—सूद मिलाकर कोई २५०) होंगे।

सबल—(मनमें) बड़ी विकट समस्या है। मेरे ही हाथों उसे यह कष्ट पहुँचे! इसके पहले मैं इन हाथोंको ही काट डालूंगा। उसकी एक दया-दृष्टिपर ऐसे २ कई ढाई सौ न्यौछावर हैं। वह मेरी है, उसे ईश्वरने मेरे लिये बनाया है नहीं तो मेरे मनमें उसकी लगन क्यों होती। समाजके अनर्गल नियमोंने उसके और मेरे बीच यह लोहेकी दीवार खड़ी कर दी है। मैं इस दीवारको खोद डालूंगा। इस कांटेको निकालकर फूलको

गलेमें डाल लूंगा। साँपको हटाकर मणिको अपने हृदयमें रख लूंगा। (प्रगट) और असामियोंकी जायदाद नीलाम करा सकते हो पर हलधरकी जायदाद नीलाम करानेके बदले मैं उसे कुछ दिनों हिरासतकी हवा खिलाना चाहता हूं। वह बदमाश आदमी है, गांववालोंको भड़काता है। कुछ दिन जेलमें रहेगा तो उसका मिजाज ठंढा हो जायगा।

कंचन—हलधर देखनेमें तो बड़ा सीधा और भोला आदमी मालुम होता है।

सबल—बना हुआ है। तुम अभी उसके हथकण्डोंको नहीं जानते। मुनीमसे कह देना, वह सब कार्रवाई कर देगा। तुम्हें अदालतमें जानेकी जरूरत नहीं।

(कञ्चन सिंहका प्रस्थान)

सबल—(आप ही आप) ज्ञानियोंने सत्य ही कहा है कि कामके वशमें पड़कर मनुष्यकी विद्या, बुद्धि, विवेक सब नष्ट हो जाते हैं। यह वह नीच प्रकृति है तो मनमाना अत्याचार करके अपनी तृष्णाको पूरी करता है। यदि विचारशील है तो कपट नीतिसे अपना मनोरथ सिद्ध करता है। इसे प्रेम नहीं कहते, यह है कामलिप्सा। प्रेम पवित्र, उज्वल, स्वार्थ रहित, सेवामय, वासना रहित वस्तु है। प्रेम वास्तवमें ज्ञान है। प्रेमसे संसारकी सृष्टि हुई, प्रेमसे ही उसका पालन होता है। यह ईश्वरीय प्रेम है। मानव-

प्रेम वह है जो जीवमात्रको एक समझे, जो आत्माकी व्यापकता-को चरितार्थ करे, जो प्रत्येक अणुमें परमात्माका स्वरूप देखे, जिसे अनुभूत हो कि प्राणीमात्र एक ही प्रकाशकी ज्योति हैं। प्रेम इसे कहते हैं। प्रेमके शेष जितने रूप हैं सब स्वार्थमय, पापमय हैं। ऐसे कोढ़ीको देखकर जिसके शरीरमें कीड़े पड़ गये हों अगर हम विह्वल हो जायं और उसे तुरत गले लगा लें तो वह प्रेम है। सुन्दर, मनोहर, स्वरूपको देखकर सभीका चित्त आकर्षित होता है, किसीका कम, किसीका ज्यादा। जो साधनहीन हैं, क्रियाहीन हैं या पौरुषहीन हैं वह कलेजेपर हाथ रखकर रह जाते हैं और दो-एक दिनमें भूल जाते हैं। जो सम्पन्न हैं, चतुर हैं, साहसी हैं, उद्योगशील हैं, वह पीछे पड़ जाते हैं और अभीष्ट लाभ करके ही दम लेते हैं। यही कारण है कि प्रेमवृत्ति अपने सामर्थ्यके बाहर बहुत कम जाती है। जारकी लड़की कितनी ही सर्व गुण पूर्ण हो पर मेरी वृत्ति उधर जानेका नाम न लेगी। वह जानती है कि वहाँ मेरी दाल न गलेगी। राजेश्वरीके विष-यमें मुझे संशय न था। वहाँ भय, प्रलोभन, नृशंसता, किसी युक्तिका प्रयोग किया जा सकता था। अंतमें, यदि यह सब युक्तियाँ विफल होतीं तो...

(*अचल सिंहका प्रवेश*)

अचल—दादाजी, देखिये नौकर बड़ी गुस्ताखी करता है।

अभी मैं फुटबाल देखकर आया हूं, कहता हूं जूता उतार दे, लेकिन वह लालटेन साफ कर रहा है, सुनता ही नहीं। आप मुझे कोई अलग एक नौकर दे दीजिये, जो मेरे कामके सिवा और किसीका काम न करे।

सबल—(मुस्कुराकर) मैं भी एक ग्लास पानी माँगूँ तो न दे?

अचल—आप हँसकर टाल देते हैं, मुझे तकलीफ़ होती है। मैं जाता हूँ इसे खूब पीटता हूं।

सबल—बेटा, वह काम भी तो तुम्हारा ही है। कमरेमें रोशनी न होती तो उसके सिर होते कि अबतक लालटेन क्यों नहीं जलाई। क्या हर्ज है आज अपने ही हाथसे जूते उतार लो। तुमने देखा होगा जरूरत पड़नेपर लेडियाँतक अपने बक्स उठा लेती हैं। जब बम्बे मेल आती है तो जरा स्टेशनपर जाकर देखो।

अचल—आज अपने जूते उतार लूँ, कलको जूतोंमें रोगन भी आप ही लगा लूँ, वह भी तो मेरा ही काम है, फिर खुद ही कमरेकी सफ़ाई भी करने लगूं, अपने हाथों टब भी भरने लगूँ, धोती भी छाँटने लगूँ।

सबल—नहीं यह सब करनेको मैं नहीं कहता, लेकिन अगर किसी दिन नौकर न मौजूद हो तो जूता उतार लेनेमें

कोई हानि नहीं है।

अचल—जी हाँ, मुझे यह मालूम है; मैं तो यहाँतक मानता हूं कि एक मनुष्यको अपने दूसरे भाईसे सेवा टहल करानेका कोई अधिकार ही नहीं है। यहाँतक कि साबरमती आश्रममें लोग अपने हाथों अपना चौका लगाते हैं, अपने बर्तन माँजते हैं और अपने कपड़ेतक धो लेते हैं। मुझे इसमें कोई उज्र या इनकार नहीं है, मगर तब आप ही कहने लगेंगे बदनामी होती है, शर्मकी बात है, और अम्मांजीकी तो नाक ही कटने लगेगी। मैं जानता हूँ नौकरोंके अधीन होना अच्छी आदत नहीं है। अभी कल ही हम लोग कण्व स्थान गये थे। हमारे मास्टर थे और १५ लड़के। ११ बजे दिनको धूपमें चले। छतरी किसीके पास नहीं रहने दी गई। हाँ, लोटा-डोर साथ था। कोई १ बजे वहां पहुंचे। कुछ देर पेड़के नीचे दम लिया। तब तालाबमें स्नान किया। भोजन बनानेकी ठहरी। घरसे कोई भोजन करके नहीं गया था। फिर क्या था, कोई गांवसे जिंस लाने दौड़ा, कोई उपले बटोरने लगा, दो तीन लड़के पेड़ोंपर चढ़-कर लकड़ी तोड़ लाये, कुम्हारके घरसे हांडियां और घड़े आये। पत्तोंके पत्तल हमने खुद बनाये। आलूका भर्ता और बाटियाँ बनाई गईं। खाते पकाते चार बज गये। घर लौटनेकी ठहरी। ६ बजते-बजते यहाँ आ पहुँचे। मैंने खुद पानी खींचा, खुद उपले

बटोरे। एक प्रकारका आनन्द और उत्साह मालूम हो रहा था। यह ट्रिप (क्षमा कीजियेगा अँग्रेजी शब्द निकल गया) चक्कर, इसी लिये तो लगाया गया था जिसमें हम जरूरत पड़नेपर सब काम अपने हाथोंसे कर सकें, नौकरोंके मुहताज न रहें।

सबल—इस चक्करका हाल सुनकर मुझे बड़ी खुशी हुई। अब ऐसे गस्तकी ठहरे तो मुझसे भी कहना, मैं भी चलूंगा। तुम्हारे अध्यापक महाशयको मेरे चलनेमें कोई आपत्ति तो न होगी?

अचल—(हँसकर) वहाँ आप क्या कीजियेगा, पानी खींचियेगा?

सबल—क्यों, कोई ऐसा मुशकिल काम नहीं है।

अचल—इन नौकरोंमें दो चार अलग कर दिये जायँ तो अच्छा हो। इन्हें देखकर खामखाम कुछ न कुछ काम लेनेका जी चाहता है। कोई आदमी सामने न हो तो आलमारीमेंसे खुद किताब निकाल लाता हूं। लेकिन कोई रहता है तो खुद नहीं उठता उसीको उठाता हूँ। आदमी कम हो जायंगे तो यह आदत छुट जायगी।

सबल-हाँ, तुम्हारा यह प्रस्ताव बहुत अच्छा है। इसपर विचार करूँगा। देखो नौकर खाली हो गया जावो जूते खुलवा लो।

अचल—जी नहीं अब मैं कभी नौकरसे जूता उतरवाऊंगा ही नहीं और न पहनूंगा। खुद ही पहन लंगा, उतार लूंगा।

आपने इशारा कर दिया वह काफी है।

(*चला जाता है*)

सबल—(मनमें) ईश्वर तुम्हें चिरायु करें, तुम होनहार देख पड़ते हो। लेकिन कौन जानता है आगे चलकर क्या रंग पकड़ोगे। मैं आजके तीन महीने पहले अपनी सच्चरित्रतापर घमण्ड करता था। वह घमण्ड एक क्षणमें चूर-चूर हो गया। खैर होगा।......अगर और सब देनदारोंपर दावा न हो केवल हलधर ही पर किया जाय तो घोर अन्याय होगा। मैं तो चाहता हूँ दावे सभोंपर किये जायें लेकिन जायदाद किसीकी नीलाम न कराई जाय। असामियोंको जब मालूम हो जायगा कि हमने घर छोड़ा और जायदाद गई तो वह कभी न जायँगे। उनके भागनेका एक कारण यह भी होगा कि लगान कहाँसे दें गे। मैं लगान मुआफ कर दूं तो कैसा हो। मेरा ऐसा ज्यादा नुकसान न होगा। इलाकेमें सब जगह तो ओले गिरे नहीं हैं। सिर्फ २-३ गाँवोंमें गिरे हैं, ५०००) का मुआमला है। मुमकिन है इस मुआफ़ीकी ख़बर गवर्मेंएटको भी हो जाय और वह मुआफ़ीका हुक्म दे दे, तो मुझे मुफ्तमें यश मिल जायगा। और अगर सरकार न मुआफ़ करे तो इतने आदमियोंका भला हो जाना ही कौन छोटी बात है। रहा हलधर, उसे कुछ दिनोंके लिये अलग कर देनेसे मेरी मुशकिल आसान हो जायगी

यह काम ऐसे गुप्त रीतिसे होना चाहिये कि किसीको कानों कान खबर न हो। लोग यही समझें कि कहीं परदेश निकल गया होगा। तब मैं एक बार फिर राजेश्वरीसे मिलूं और तक-दीरका फ़ैसला कर लूं। तब उसे मेरे यहां आकर रहनेमें कोई आपत्ति न होगी। गांवमें निरावलम्ब रहनेसे तो उसका चित्त स्वयं घबरा जायगा। मुझे तो विश्वास है कि वह यहां सहर्ष चली आवेगी। यही मेरा अभीष्ट है। मैं केवल उसके समीप रहना, उसके मृदु मुसक्यान, उसकी मनोहर वाणी......

(*ज्ञानीका प्रवेश*)

ज्ञानी—स्वामीजीसे आपकी भेंट हुई ?

सबल—हां।

ज्ञानी—तो उनके दर्शन करने जाऊं ?

सबल—नहीं।

ज्ञानी—पाखंडी हैं न ? यह तो मैं पहले ही समझ गई थी।

सबल—नहीं, पाखण्डी नहीं हैं, विद्वान हैं, लेकिन मुझे किसी कारणसे उनमें श्रद्धा नहीं हुई। पवित्रात्माका यही लक्षण है कि वह दूसरोंके हृदयमें श्रद्धा उत्पन्न कर दे। अभी थोड़ी देर पहले मैं उनका भक्त था। पर इतनी देरमें उनके उपदेशोंपर विचार करनेसे ज्ञात हुआ कि उनसे तुम्हें ज्ञानोपदेश नहीं मिल सकता और न वह आशीर्वाद ही मिल सकता है जिससे तुम्हारी मनोकामना पूरी हो।

तृतीय दृश्य

—※:※—

स्थान—मधुबन गांव, समय—बैसाख प्रातःकाल।

फत्तू—पांचों आदमियोंपर डिगरी हो गई। अब ठाकुर साहब जब चाहें उनके बैल बधिये नीलाम करा लें।

एक किसान—ऐसे निर्दयी तो नहीं हैं। इसका मतलब कुछ और ही है।

फत्तू—इसका मतलब मैं समझता हूं। दिखाना चाहते हैं कि हम जब चाहें असामियोंको बिगाड़ सकते हैं। असामियोंको घमण्ड न हो। फिर गांवमें हम जो चाहें करें कोई मुंह न खोले।

(सबल सिंहके चपरासीका प्रवेश)

चपरासी—सरकारने हुकम दिया है कि असामी लोग जरा भी चिन्ता न करें। हम उनकी हर तरह मदद करनेको तैयार हैं। जिन लोगोंने अभी तक लगान नहीं दिया है उनकी माफी हो गई। अब सरकार किसीसे लगान न लेंगे। अगले सालके

लगानके साथ यह बकाया न वसूल की जायगी। यह छूट सरकारकी ओरसे नहीं हुई है। ठाकुर साहबने तुम लोगोंकी परवरिशके ख्यालसे यह रिआयत की है। लेकिन जो असामी परदेस चला जायगा उसके साथ यह रिआयत न होगी। छोटे ठाकुरसाहबने देनदारोंपर डिगरी कराई है। मगर उनका हुक्म भी यही है कि डिगरी जारी न की जायगी। हां, जो लोग भागेंगे उनकी जायदाद नीलाम करा ली जायगी। तुम लोग दोनों ठाकुरोंको आशीर्वाद दो।

एक किसान—भगवान दोनों भाइयोंकी जुगुल जोड़ी सलामत रखे।

दूसरा—नारायन उनका कल्यान करें। हमको जिला लिया नहीं तो इस विपत्तिमें कुछ न सूझता था।

तीसरा—धन्य है उनकी उदारताको। राजा हो तो ऐसा दीनपालक हो। परमात्मा उनकी बढ़ती करे।

चौथा—ऐसा दानी देशमें और कौन है। नामके लिये सरकारको लाखों रुपये चन्दा दे आते हैं, हमको कौन पूछता है। बल्कि वह चन्दा भी हमींसे डण्डे मार-मारकर वसूल कर लिया जाता है।

पहला—चलो, कल सब जने डेवढ़ीको जय मना आवें।

दूसरा—हां कल भोरे चलो।

तीसरा—चलो देवीजीके चौरेपर चलकर जय जयकार मनाएं।

चौथा—कहाँ है कलधर, कहो ढोल मजीरा लेता चले।

(फत्तू हलधरके घर जाकर खाली हाथ लौट आता है)

पहला किसान—क्या हुआ। खाली हाथ क्यों आये?

फत्तू—हलधर तो आज दो दिनसे घर ही नहीं आया।

दूसरा किसान—उसकी घरवालीसे पूछा, कहीं नातेदारीमें तो नहीं गया?

फत्तू—वह तो कहती है कि कल सवेरे खांचा लेकर आम तोड़ने गये थे। तबसे लौटकर नहीं आये।

(सबके सब हलधरके द्वारपर आकर जमा हो जाते हैं। सलोनी और फत्तू घरमें जाते हैं)

सलोनी—बेटी, तूने उसे कुछ कहा सुना तो नहीं। उसे बात बहुत लगती है, लड़कपनसे जानती हूँ। गुड़के लिये रोवे, लेकिन मां झमककर गुड़का पिण्डा सामने फेंक दे तो कभी न उठावे। तब वह गोदमें प्यारसे बैठाकर गुड़ तोड़-तोड़ खिलाये तभी चुप हो।

फत्तू—यह बिचारी गऊ है, कुछ नहीं कहती-सुनती।

सलोनी—जरूर कोई न कोई बात हुई होगी, नहीं तो घर क्यों न आता। इसने गहनोंके लिये ताना दिया होगा, चाहे

महीन साड़ी मांगी हो। भले घरकी बेटी है न, इसे महीन साड़ी अच्छी लगती है।

राजे०—काकी, क्या मैं ऐसी निकम्मी हूं कि देशमें जिस बातकी मनाही है वही करूंगी।

(फत्तू बाहर आता है)

मंगरू—मेरे जानमें तो उसे थानेवाले पकड़ ले गये।

फत्तू—ऐसा कुमारगी तो नहीं है कि थानेवालोंकी आंखपर चढ़ जाय।

हरदास—थानेवालोंकी भली कहते हो। राह चलते लोगों-को पकड़ा करते हैं। आम लिये देखा होगा कहा होगा चट थाने पहुंचा आ।

फत्तू—ऐसा दुबैल तो नहीं है, लेकिन थाने ही पर जाता तो अबतक लौट आना चाहिये था।

मंगरू—किसीके रुपये पैसे तो नहीं आते थे ?

फत्तू—और किसीको तो नहीं, ठाकुर कंचनसिंहके २००) आते हैं।

मंगरू—कहीं उन्होंने गिरफ्तार करा लिया हो।

फत्तू—सम्मन तो आया नहीं, नालिस कब हुई, डिग्री कब हुई। औरोंपर नालिस हुई तो सम्मन आया, पेशी हुई, तजवीज सुनाई गई।

हरदास—बड़े आदमियोंके हाथमें सब कुछ है, जो चाहें करा दें। राज उन्हींका है, नहीं तो भला कोई बात है कि सौ पचास रुपयेके लिये आदमी गिरफ्तार कर लिया जाय, बाल बच्चोंसे अलग कर दिया जाय, उसका सब खेती बारीका काम रोक दिया जाय।

मंगरू—आदमी चोरी या और कोई कुन्याय करता है तब उसे कैदकी सजा मिलती है। यहां महाजन बेकसूर हमें थोड़ेसे रुपयोंके लिये जेहल भेज सकता है। यह कोई न्याय थोड़े ही है।

हरदास—सरकार न जाने ऐसे कानून क्यों बनाती है। महाजनके रुपये आते हैं, जायदादसे ले, गिरफ्तार क्यों करे।

मँगरू—कहीं डमरा टापूवाले न बहका ले गये हों।

फत्तू—ऐसा भोला नहीं है कि उनकी बातोंमें आ जाय।

मंगरू—कोई जान-बूझकर उनकी बातोंमें थोड़े ही आता है। सब ऐसी-ऐसी पट्टी पढ़ाते हैं कि अच्छे-अच्छे धोखेमें आ जाते हैं। कहते हैं इतना तलब मिलेगा, रहनेको बंगला मिलेगा, खानेको वह मिलेगा जो यहां रईसोंको भी नसीब नहीं, पहननेको रेशमी कपड़े मिलेंगे, और काम कुछ नहीं, बस खेतमें जाकर ठण्ढे-ठण्ढे देख भाल आये।

फत्तू—हां, यह तो सच है। ऐसी-ऐसी बातें सुनकर वह

आदमी क्यों न धोखेमें आ जाय जिसे कभी पेट भर भोजन न मिलता हो। घास भूसेसे पेट भर लेना कोई खाना है। किसान पहर रातसे पहर राततक छाती फाड़ता है तब भी रोटी कपड़े-को नहीं होता, उसपर कहीं महाजनका डर, कहीं जमींदारकी धौंस, कहीं पुलिसकी डाँट डपट, कहीं अमलोंकी नजर भेंट, कही हाकिमोंकी रसद बेगार। सुना है जो लोग टापूमें भरती हो जाते हैं उनकी बड़ी दुर्गत होती है। भोपड़ी रहनेको मिलती है और रात-दिन काम करना पड़ता है। जरा भी देर हुई तो अपसर कोड़ोंसे मारता है। पांच साल तक आनेका हुकुम नहीं है, उसपर तरह-तरहकी सखती होती रहती है। औरतों-की बड़ी बेइज्जती होती है, किसीकी आबरू बचने नहीं पाती। अपसर सब गोरे हैं, यह औरतोंको पकड़ ले जाते हैं। अल्लाह न करे कि कोई उन दलालोंके फन्देमें फंसे। पांच छ सालमें कुछ रुपये जरूर हो जाते हैं, पर उस लतखोरीसे तो अपने देसकी रूखी ही अच्छी। मुझे तो विस्सास ही नहीं आता कि हलधर उनके फांसेमें आ जाय।

हरदास—साधु लोग भी आदमियोंको बहका ले जाते हैं।

फत्तू—हां सुना तो है मगर हलधर कभी साधुओंकी संग-तमें नहीं बैठा। गाँजे-चरसकी भी चाट नहीं कि इसी लालचसे जा बैठता हो।

मंगरू—साधु आदमियोंको बहकाकर क्या करते हैं ?

फत्तू—भीख मगवाते हैं और क्या करते हैं। अपना टहल करवाते हैं, बर्तन मंजवाते हैं, गांजा भरवाते हैं। भोले आदमी समझते हैं बाबाजी सिद्ध हैं, प्रसन्न हो जायंगे तो एक चुटकी राखमें मेरा भला हो जायगा, मुकुत बन जायगी वह घातेमें। कुछ कामचोर निखट्टू ऐसे भी हैं जो केवल मीठे पदार्थोंके लालचमें साधुओंके साथ पड़े रहते हैं। कुछ दिनोंमें यही टहलुवे सन्त बन बैठते हैं और अपने टहलके लिये किसी दूसरेको मूंड़ते हैं। लेकिन हलधर न तो पेटू ही है, न कामचोर ही है।

हरदास—कुछ तुम्हारा मन कहता है वह किधर गया होगा। तुम्हारा उसके साथ आठों पहरका उठना-बैठना है।

फत्तू—मेरी समझमें तो वह परदेश चला गया। २००)कंचन सिंहके आते थे। ब्याज समेत २५०) हुए होंगे। लगानकी धौंस अलग। अभी दुधमुहा बालक है, संसारका रंग ढङ्ग नहीं देखा, थोड़ेमें ही फूल उठता है और थोड़ेमें ही हिम्मत हार बैठता है। सोचा होगा कहीं परदेश चलूं और मेहनत मजूरी करके सौ दो-सौ ले आऊं। दो चार दिनमें चिट्ठी पत्तरी आयेगी।

मंगरू—और तो कोई चिन्ता नहीं, मर्द है जहां रहेगा वहीं कमा खायगा, चिन्ता तो उसके घरवालीकी है। अकेले कैसे रहेगी ?

हरदास—मैके भेज दिया जाय।

मंगरू—पूछो, जायगी ?

फत्तू—पूछना क्या है कभी न जायगी। हलधर होता तो जाती। उसके पीछे कभी नहीं जा सकती।

राजे०—(द्वारपर खड़ी होकर) हां काका ठीक कहते हो। अभी मैके चली जाऊं तो घर और गांववाले यही न कहेंगे कि उनके पीछे गांवमें दस पांच दिन भी कोई देख-भाल करनेवाला नहीं रहा तभी तो चली आई। तुम लोग मेरी कुछ चिन्ता न करो। सलोनी काकीको घरमें सुला लिया करूंगी। और डर ही क्या है। तुम लोग तो हो ही।

चतुर्थ दृश्य

—:o:—

स्थान—हलधरका घर, राजेश्वरी और सलोनी आंगनमें लेटी हुई हैं, समय—आधा रात।

राजेश्वरी—(मनमें) आज उन्हें गये दस दिन हो गये। मंगल मङ्गल आठ, बुद्ध नौ, बृहस्पत दस। कुछ खबर नहीं मिली, न कोई चिट्ठी न पत्तर। मेरा मन बार-बार यही कहता है कि यह सब सबलसिंहकी करतूत है। ऐसे दानी धर्मात्मा पुरुष कम होंगे। लेकिन मुझ नसीबों जलीके कारन उनका दान धर्म सब मिट्टीमें मिला जाता है। न जाने किस मनहूस घड़ीमें मेरा जनम हुआ! मुझमें ऐसा कौनसा गुन है? न मैं ऐसी सुन्दरी हूँ, न इतने बनाव सिंगारसे रहती हूँ। माना इस गाँवमें मुझसे सुन्दर और कोई स्त्री नहीं है। लेकिन शहरमें तो एकसे एक पड़ी हुई हैं। यह सब मेरे अभागका फल है। मैं अभागिनी हूं। हिरन कस्तूरीके लिये मारा जाता है। मैना अपनी बोलीके लिये पकड़ी जाती है। फूल अपनी सुगन्धके लिये तोड़ा जाता है।

मैं भी अपने रूप-रङ्गके हाथों मारी जा रही हूँ।

सलोनी—क्या नींद नहीं आती बेटी।

राजे०—नहीं, काकी मन बड़ी चिन्तामें पड़ा हुआ है। भला क्यों काकी, अब कोई मेरे सिरपर तो रहा नहीं, अगर कोई पुरुष मेरा धर्म बिगाड़ना चाहे तो क्या करूँ?

सलोनी—बेटी गाँवके लोग उसे पीसकर पी जायँगे।

राजे०—गांववालोंपर बात खुल गई तब तो मेरे माथेपर कलङ्क लग ही जायगा।

सलोनी—उसे दण्ड देना होगा। उससे कपट-प्रेम करके उसे विष पिला देना होगा। विष भी ऐसा कि फिर वह आँखें न खोले। भगवानको, चन्द्रमाको, इन्द्रको, जिस अपराधका दंड मिला था क्या हम उसका बदला न लेंगी। यही हमारा धरम है। मुँहसे मीठी-मीठी बातें करो पर मनमें कटार छिपाये रखो।

राजे०—(मनमें) हां अब यही मेरा धरम है। अब छल और कपटसे ही मेरी रक्षा होगी। वह धर्मात्मा सही, दानी सही, विद्वान सही। यह भी जानती हूं कि उन्हें मुझ से प्रेम है, सच्चा प्रेम है। वह मुझे पाकर मुग्ध हो जायँगे, मेरे इसारोंपर नाचेंगे, मुझपर अपने प्राण न्यौछावर करेंगे। क्या मैं इस प्रेमके बदले कपट कर सकूँगी। जो मुझपर जान देगा, मैं उसके साथ कैसे दगा करूंगी। यह बात मरदोंमें ही है कि जब वह किसी दूसरी

स्त्रीपर मोहित हो जाते हैं तो पहली स्त्रीके प्राण लेनेसे भी नहीं हिचकते। भगवान यह मुझसे कैसे होगा? (प्रगट) क्यों काकी, तुम अपनी जवानीमें तो बडी सुन्दर रहीं होंगी?

सलोनी—यह तो नहीं जानती बेटी, पर इतना जानती हूं कि तुम्हारे काकाकी आँखोंमें मेरे सिवा और कोई स्त्री जँचती ही न थी। जबतक चार-पाँच लड़कोंकी माँ न हो गई पनघटपर न जाने दिया।

राजेश्वरी—बुरा न मानना काकी, योंही पूछती हूं, उन दिनों कोई दूसरा आदमी तुमपर मोहित हो जाता और काकाको जेहल भिजवा देता तो तुम क्या करतीं?

सलोनी—करती क्या, एक कटारी अंचलके नीचे छिपा लेती। जब वह मेरे ऊपर प्रेमके फूलोंकी वर्षा करने लगता, मेरे सुख विलासके लिये संसारके अच्छे अच्छे पदार्थ जमा कर देता, मेरे एक कटाक्षपर, मेरे एक मुस्क्यानपर, एक भावपर फूला न समाता, तो मैं उससे प्रेमकी बातें करने लगती। जब उसपर नसा छा जाता, वह मतवाला हो जाता तो कटार निकालकर उसकी छातीमें भोंक देती।

राजे०—तुम्हें उसपर तनिक भी दया न आती?

सलोनी—बेटी, दया दीनोंपर की जाती है कि अत्याचारियों-पर। धर्म प्रेमके ऊपर है, उसी भांति जैसे चन्द्रमा सूरजके ऊपर

है। चन्द्रमाकी जोति देखनेमें अच्छी लगती है, लेकिन सूरजकी जोतिसे संसारका पालन होता है।

राजे०--(मनमें) भगवान, मुझसे यह कपट व्यवहार कैसे निभेगा। अगर कोई दुष्ट, दुराचारी आदमी होता तो मेरा काम सहज था। उसकी दुष्टता मेरे क्रोधको भड़का देती। भय तो इस पुरुषकी सज्जनतासे है। इससे बड़ा भय उसके निष्कपट प्रेमसे है। कहीं प्रेमकी तरङ्गोंमें बह तो न जाऊँगी, कहीं विलासमें तो मतवाला न हो जाऊँगी। कहीं ऐसा तो न होगा कि महलोंको देखकर मनमें इस झोपड़ेका निरादर होने लगे, तकियों पर सोकर यह टूटी खाट गड़ने लगे, अच्छे-अच्छे भोजनके सामने इस रुखे-सूखे भोजनसे मन फिर जाय, लौंडियोंके हाथों पानकी तरह फेरे जानेसे यह मेहनत मजूरी अखरने लगे। सोचने लगूं ऐसा सुख पाकर क्यों उसपर लात मारूं। चार दिनकी जिन्दगानी है, उसे छल कपट, मरने मारनेमें क्यों गंवाऊं। भगवानकी जो इच्छा थी वह हुआ और हो रहा है। (प्रगट) काकी, कटार भोंकते हुए तुम्हें डर न लगता?

सलोनी—डर किस बातका? क्या मैं पंछीसे भी गई बीती हूँ। चिड़ियाको सोनेके पिंजरेमें रखो, मेवे और मिठाई खिलाओ, लेकिन वह पिंजरेका द्वार खुला पाकर तुरन्त उड़ जाती है। अब बेटी सोओ, आधी रातसे ऊपर हो गई। मैं तुम्हें गीत सुनाती हूँ।

(*गाती है*)

मुझे लगन लगी प्रभु पावनकी।

राजे०—(मनमें) इन्हें गानेकी पड़ी है। कंगाल होकर जैसे आदमीको चोरका भय नहीं रहता, न आगमकी कोई चिन्ता, उसी भांति जब कोई आगे पीछे नहीं रहता तो आदमी निश्चिन्त हो जाता है। (प्रगट) काकी, मुझे भी अपनी भांति प्रसन्न-चित्त रहना सिखा दो।

सलोनी—ऐ, नौज बेटी, चिन्ता धन और जनसे होती है। जिसे चिन्ता न हो वह भी कोई आदमी है। वह अभागा है, उसका मुंह देखना पाप है। चिन्ता बड़े भागोंसे होती है। तुम समझती होगी बुढ़िया हरदम प्रसन्न रहती है तभी तो गाया करती है। सच्ची बात यह है कि मैं गाती नहीं रोती हूँ। आदमीको बड़ा आनन्द मिलता है तो रोने लगता है उसी भांति जब दुःख अथाह हो जाता है तो गाने लगता है। इसे हंसी मत समझो, यह पागलपन है। मैं पगली हूँ। पचास आदमियोंका परिवार आंखोंके सामनेसे उठ गया। देखें भगवान इस मिट्टीकी कौन गत करते हैं।

(*गातीहै*)

मुझे लगन लगी प्रभु पावनकी।

एजी पावनकी, घर लावनकी ॥

छोड़ काज अरु लाज जगतको
निश दिन ध्यान लगावनकी ॥मुझे लगन०॥
सुरत उजाली खुल गई ताली
गगन महलमें जावनकी ॥ मुझे० ॥
झिल मिल कारी जोति निहारी
जैसे बिजली सावनकी
मुझे लगन लगी प्रभु पावनकी ।

बेटी! तुम हलधरका सपना तो नहीं देखती हो?

राजे०—बहुत बुरे-बुरे सपने देखती हूँ। इसी डरके मारे तो मैं और नहीं सोती। आंख झपकी और सपने दिखाई देने लगे।

सलोनी—कलसे तुलसा माताको दिया चढ़ा दिया करो। एतवार मंगलको पीपलमें पानी दे दिया करो। महाबीर सामीको लड्डूकी मनौती कर दो। कौन जाने देवताओंके प्रतापसे लौट आवे। अच्छा अब महाबीरजीका नाम लेकर सो जाव। रात बहुत गई है। दो घरीमें भोर जो जायगा।

(सलोनी करवट बदलकर सोती है और खर्राटे भरने लगती है।)

राजे०—(आप ही आप) बुढ़िया सो रही है, अब मैं चलनेकी तैयारी करूं। छत्री लोग रनपर जाते थे तो खूब सज कर जाते थे। मैं भी कपड़े लत्ते से लैस हो जाऊं। वह पांचों हथियार लगाते थे। मेरे हथियार मेरे गहने हैं। वही पहन लेती

हूँ। वह केसरका तिलक लगाते थे। मैं सिन्दूरका टीका लगा लेती हूँ। वह मलिच्छोंका संहार करने जाते थे मुझे देवताका संहार करना है। भगवती तुम मेरी सहाय हो।..........
लेकिन छत्री लोग तो हँसते हुए घरसे विदा होते थे। मेरी आँखोंमें आंसू भरे आते हैं। आज यह घर छूटता है! इसे सातवें दिन लीपती थी, त्यौहारोंपर पोतनी मिट्टीसे पोतती थी। वैसी उमंगसे आँगनमें फुलवारी लगाती थी। अब कौन इनकी इतनी सेवा करेगा। दो ही चार दिनोंमें यहां भूतोंका डेरा हो जायगा। हो जाय! जब घरका प्राणी ही नहीं रहा तो घर लेकर क्या करूँ? आह, पैर बाहर नहीं निकलते; जैसे दीवारें खींच रही हों। इनसे गले मिल लूँ।

गाय भैंस कितने साधसे ली थी। अब इनसे भी नाता टूटता है। दोनों गाभिन हैं। इनके बच्चोंको भी न खेलाने पाई। बिचारी हुड़क-हुड़क कर मर जायगीं। कौन इन्हें मुँह अँधेरे भूसा खली देगा, कौन इन्हें तालाबमें नहलायेगा। दोनों मुझे देखते ही खड़ी हो गईं। मेरी ओर मुँह बढ़ा रही हैं, पूछ रही हैं कि आज कहांकी तैयारी है। हाय! कैसे प्रेमसे मेरे हाथोंको चाट रही हैं! इनकी आँखोंमें कितना प्यार है! आओ आज चलते चलाते तुम्हें अपने हाथोंसे दाना खिला दूँ! हा भगवान, दाना नहीं खातीं, मेरी ओर मुँह करके ताकती हैं। समझ रही हैं कि यह इस

तरह बहला कर हमें छोड़े जाती है। इनके पाससे कैसे जाऊँ? रस्सी तुड़ा रही हैं, हुँकार मार रही हैं। वह देखो, बैल भी उठ बैठे। वह गये, इन बिचारोंकी सेवा न हो सकी। वह इन्हें घंटों सुहलाया करते थे। लोग कहते हैं तुम्हें आनेवाली बातें मालूम हो जाती हैं। कुछ तुम ही बताओ वह कहाँ हैं, कैसे हैं, कब आयँगे? क्या अब कभी उनकी सूरत देखनी न नसीब होगी। ऐसा जान पड़ता है इनकी आँखोंमें आँसू भरे हैं। जाओ, अब तुम सभोंको भगवानके भरोसे छोड़ती हूँ। गांव-वालोंको दया आवेगी तुम्हारी सुधि लेंगे, नहीं तो यहीं भूखे खड़ी रहोगी। फत्तू मियाँ तुम्हारी सेवा करेंगे। उनके रहते तुम्हें कोई कष्ट न होगा। वह दो आँखें भी न करेंगे कि अपने बैलों-को दाना और खली दें, तुम्हारे सामने सूखा भूसा डाल दें। लो अब बिदा होती हूँ। भोर हो रहा है, तारे मद्धिम पड़ने लगे। चलो मन, इस रोने बिसूरनेसे काम न चलेगा। अब तो मैं हूँ और प्रेम-कौशलका रणक्षेत्र है। भगवतीका और उनसे भी अधिक अपनी दृढ़ताका भरोसा है।

पांचवां दृश्य

*(स्थान—सबलसिंहका दीवानखाना, खसकी टट्टियाँ लगी हुई हैं, पंखा चल रहा है । सबल शीतलपाटीपर लेटे हुए **Democracy** नामक ग्रंथ पढ़ रहे हैं, द्वारपर एक दरबान बैठा झपकियाँ ले रहा है ।*

समय--दो पहर, मध्याह्नकी प्रचंड धूप ।)

समय—"हम अभी जन सत्तात्मक राज्यके योग्य नहीं है, कदापि नहीं है। ऐसे राज्यके लिये सर्वसाधारणमें शिक्षाकी प्रचुर मात्रा होनी चाहिये। हम अभी उस आदर्शसे कोसों दूर हैं। इसके लिये महान स्वार्थत्यागकी आवश्यकता है। जब तक प्रजामात्र स्वार्थको राष्ट्रपर बलिदान करना नहीं सीखते इसका स्वप्न देखना मनकी मिठाई खाना है। अमरीका, फ्रान्स, दक्षिणी अमरीका आदि देशोंने बड़े समारोहसे इसकी व्यवस्था की पर उनमेसे किसीको भी सफलता नहीं हुई। वहाँ अब भी धन और सम्पत्तिवालोंके ही हाथोंमें अधिकार है। प्रजा

अपने प्रतिनिधि कितनी ही सावधानीसे क्यों न चुने पर अन्तमें सत्ता गिने गिनाये आदमियोंके ही हाथोंमें चली जाती है। सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था ही ऐसी दूषित है कि जनताका अधिकांश मुट्ठीभर आदमियोंके वशवर्ती हो गया है। जनता इतनी निबल, इतनी अशक्त है कि इन शक्तिशाली पुरुषोंके सामने सिर नहीं उठा सकती। यह व्यवस्था सर्वथा अपवादमय, विनष्टकारी और अत्याचार पूर्ण है। आदर्श व्यवस्था यह है कि सबके अधिकार बराबर हों, कोई जमींदार बनकर, कोई महाजन बनकर जनतापर रोब न जमा सके। यह ऊँच नीचका घृणित भेद उठ जाय। इस सबल निबल संग्राम में जनताकी दशा बिगड़ती चली जाती है। इसका सबसे भयङ्कर परिणाम यह है कि जनता आत्मसम्मान विहीन होती जाती है, उसमें प्रलोभनोंका प्रतिकार करने, अन्यायका सिर कुचलनेका सामर्थ नहीं रहा। छोटे छोटे स्वार्थके लिये बहुधा भयवश, कैसे-कैसे अनर्थ हो रहे हैं। (मनमें) कितनी यथार्थ बात लिखी है। आज ऐसा कोई असामी नहीं है जिसके घरमें मैं अपने दुष्टाचरणका तीर न चला सकूँ। मैं कानूनके बलसे, भयके बलसे, प्रलोभनके बलसे, अपना अभीष्ट पूरा कर सकता हूँ। अपनी शक्तिका ज्ञान हमारे दुस्साहसको, कुभावोंको और भी उत्तेजित कर देता है। खैर! हलधरको जेल गये हुए आज

दूसवाँ दिन है, मैं गाँवकी तरफ नहीं गया। न जाने राजेश्वरी पर क्या गुजर रही है। कौन मुंह लेकर जाऊँ? अगर कहीं गांववालोंको यह चाल मालूम हो गई होगी तो मैं वहां मुंह भी न दिखा सकूंगा। राजेश्वरीको अपनी दशा चाहे कितनी कष्ट-प्रद जान पड़ती हो, पर उसे हलधरसे प्रेम है। हलधरका द्रोही बनकर मैं उसके प्रेमरसको नहीं पा सकता। क्यों न कल चला जाऊँ, इस उधेड़ बुनमें कबतक पड़ा रहूँगा। अगर गाँववालों-पर यह रहस्य खुल गया होगा तो मैं विस्मय दिखाकर कह सकता हूँ कि मुझे खबर नहीं है, आज ही पता लगाता हूँ। सब तरह उनकी दिलजोई करनी होगी और हलधरको मुक्त कराना पड़ेगा। सारी बाजी इसी एक दाँवपर निर्भर है। मेरी भी क्या हालत है पढ़ता हूँ (*Democracy*) और......अपनेको धोखा देना व्यर्थ है, यह प्रेम नहीं है, केवल कामलिप्सा है। प्रेम-दुर्लभ वस्तु है, वह उस अधिकारका जो मुझे असामियोंपर है, दुरुपयोग मात्र है।

(*दर्बान आता है*)

क्या है ? मैंने कह दिया है इस वक्त मुझे दिक मत किया करो, क्या मुख्तार आये हैं ? उन्हें और कोई वक्त ही नहीं मिलता ?

दर्बान—जी नहीं, मुख्तार नहीं आये हैं। एक औरत है।

सबल—औरत है ? कोई भिखारिनी है क्या ? घरमेंसे कुछ लाकर दे दो। तुम्हें जरा भी तमीज नहीं है, जरासी बातके लिये मुझे दिक किया।

दर्बान—हुजूर भिखारिनी नहीं है। अभी फाटकपर एक्के-परसे उतरी है। खूब गहने पहने हुए हैं। कहती हैं मुझे राजा साहबसे कुछ कहना है।

सबल—(चौंककर) कोई देहातिन होगी। कहां है ?

दर्बान—वहीं मौलसरीके नीचे बैठी है।

सबल—समझ गया, ब्राह्मणी है, अपने पिताके लिये दवा मांगने आई है। (मनमें) वही होगी। दिल कैसा धड़कने लगा। दोपहरका समय है। नौकर चाकर सब सो रहे होंगे। दर्बानको बरफ लानेके लिये बाजार भेज दूं। उसे बगीचेवाले बंगलेमें ठहराऊं। (प्रगट) उसे भेज दो और तुम जाकर बाजारसे बरफ़ लेते आओ।

(दर्बान चला जाता है। राजेश्वरी आती है। सबलसिंह तुरत उठकर उसे बगीचेवाले बंगलेमें ले जाते हैं।)

राजेश्वरी—आप तो टट्टी लगाये आराम कर रहे हैं और मैं जलती हुई धूपमें मारी-मारी फिर रही हूँ। गांवकी ओर जाना ही छोड़ दिया। सारा शहर भटक चुकी तो मकानका पता मिला।

सबल—क्या कहूँ, मेरी हिमाक़तसे तुम्हें इतनी तक़लीफ हुई, बहुत लज्जित हूं। कई दिनसे आनेका इरादा करता था पर किसी न किसी कारणसे रुक जाना पड़ता था। बरफ़ आती होगी, एक ग्लास शर्बत पीलो तो यह गरमी दूर हो जाय।

राजेश्वरी—आपकी कृपा है मैंने बरफ़ कभी नहीं पी है। आप जानते हैं मैं यहां क्या करने आई हूँ?

सबल—दर्शन देनेके लिये।

राजे०—जी नहीं, मैं ऐसी निस्स्वार्थ नहीं हूं। आई हूँ आपके घरमें रहने; आपका प्रेम खींच लाया है। जिस रस्सीमें बंधी हुई थी वह टूट गई। उनका आज दस ग्यारह दिनसे कुछ पता नहीं है। मालूम होता है कहीं देस-विदेस भाग गये। फिर मैं किसकी होकर रहती। सब छोड़-छाड़कर आपकी सरन आई हूं, और सदाके लिये। उस ऊजाड़ गांवसे जी भर गया।

सबल—तुम्हारा घर है, आनन्दसे रहो। धन्य भाग कि मुझे आज यह अवसर मिला। मैं इतना भाग्यवान हूँ, मुझे इसका विश्वास ही न था। मेरी तो यह हालत हो रही है।

हमारे घरमें वह आयें खुदाकी कुदरत है।
कभी हम उनको कभी अपने घरको देखते हैं।

ऐसा बौखला गया हूँ कि कुछ समझमें ही नहीं आता

तुम्हारी कैसे खिदमत करूं।

राजे०—मुझे इसी बंगलेमें रहना होगा?

सबल—ऐसा होता तो क्या पूछना था, पर यहां बखेड़ा है, बदनामी होगी। मैं आज ही शहरमें एक अच्छा मकान ठीक कर लूंगा। सब सामान वहीं हो जायगा।

राजे०—(प्रेम कटाक्षसे देखकर) प्रेम करते हो और बद-नामीसे डरते हो। यह कच्चा प्रेम है।

सबल—(झेंपकर) अभी नया रंगरूट हूँ न।

राजे०—(सजल नेत्रोंसे) मैंने अपना सर्बस आपको दे दिया। अब मेरी लाज आपके हाथ है।

सबल—(उसके दोनों हाथ पकड़ कर तस्कीन देते हुए) राजेश्वरी, मैं तुम्हारी इस कृपाको कभी न भूलूँगा। मुझे भी आजसे अपना सेवक, अपना चाकर जो चाहे समझो।

राजे०—(मुसकिरा कर) आदमी अपने सेवककी सरन नहीं जाता, अपने स्वामीकी सरन आता है। मालूम नहीं आप मेरे मनके भावोंको जानते हैं या नहीं, पर ईश्वरने आपको इतनी विद्या और बुद्धि दी है, आपसे कैसे छिपा रह सकता है। मैं आपके प्रेम, केवल आपके प्रेमके वश होकर आई हूँ। पहली बार जब आपकी निगाह मुझपर पड़ी तो उसने मुझपर मन्त्रसा फूँक दिया। मुझे उसमें प्रेमकी झलक दिखाई दी। तभीसे मैं

आपकी हो गई। मुझे भोग-विलासकी इच्छा नहीं, मैं केवल आपको चाहती हूं। आप मुझे झोंपड़ीमें रखिये, मुझे गजी गाढ़ा पहनाइये मुझे उसमें भी सरगका आनन्द मिलेगा। बस आपकी प्रेम-दिरिष्ट मुझपर बनी रहे।

सबल—(गर्वके साथ) मैं जिन्दगीभर तुम्हारा रहूंगा और केवल तुम्हारा। मैंने उच्चकुलमें जन्म पाया। घरमें किसी चीज़की कमी नहीं थी। मेरा पालन-पोषण बड़े लाड़ प्यारसे हुआ जैसा रईसोंके लड़कोंका होता है। घरमें बीसियों युवती महरियाँ, महाराजनें थीं। उधर नौकर-चाकर भी मेरी कुवृत्तियोंको भड़काते रहते थे। मेरे चरित्र-पतनके सभी सामान जमा थे। रईसोंके अधिकांश युवक इसी तरह भ्रष्ट हो जाते हैं। पर ईश्वरकी मुझपर कुछ ऐसी दया थी कि लड़कपनहीसे मेरी प्रवृत्ति विद्याभ्यासकी ओर थी और उसने युवावस्थामें भी मेरा साथ न छोड़ा। मैं समझने लगा था प्रेम कोई वस्तु ही नहीं, केवल कवियोंकी कल्पना है। मैंने एकसे एक यौवनवती, सुन्दरियाँ देखी हैं पर कभी मेरा चित्त विचलित नहीं हुआ। तुम्हें देखकर पहली बार मेरी हृदय-वीणाके तारोंमें चोट लगी। मैं इसे ईश्वरकी इच्छाके सिवाय और क्या कहूं। तुमने पहली ही निगाहमें मुझे प्रेमका प्याला पिला दिया, तबसे आजतक उसी नशेमें मस्त था। बहुत उपाय किये, कितनी ही खटाइयाँ खाईं

पर यह नशा न उतरा। मैं अपने मनके इस रहस्यको अबतक नहीं समझ सका। राजेश्वरी, सच कहता हूं मैं तुम्हारी ओरसे निराश था। समझता था अब यह जिन्दगी रोते ही कटेगी, पर भाग्यको धन्य है कि आज घर बैठे देवीके दर्शन हो गये और जिस बरदानकी आशा थी वह भी मिल गया।

राजे०—मैं एक बात कहना चाहती हूँ, पर संकोचके मारे नहीं कह सकती।

सबल—कहो कहो, मुझसे क्या संकोच! मैं कोई दूसरा थोड़े ही हूँ।

राजे०—न कहूँगी, लाज आती है।

सबल—तुमने मुझे चिन्तामें डाल दिया, बिना सुने मुझे चैन न आयेगा।

राजे०—कोई ऐसी बात नहीं है, सुनकर क्या कीजियेगा?

सबल—(राजेश्वरीके दोनों हाथ पकड़कर) बिना कहे न जाने दूंगा, कहना पड़ेगा।

राजे०—(असमञ्जसमें पड़कर) मैं सोचती हूं कहीं आप यह न समझें कि जब यह अपने पतिकी होकर न रही तो मेरी होकर क्या रहेगी। ऐसी चञ्चल औरतका क्या ठिकाना......

सबल—बस करो राजेश्वरी, अब और कुछ मत कहो। तुम ने मुझे इतना नीच समझ लिया। अगर मैं तुम्हें अपना हृदय

खोलकर दिखा सकता वो तुम्हें मालूम होता कि मैं तुम्हें क्या समझता हूँ। वह घर, उस घरके प्राणी, वह समाज, तुम्हारे योग्य न थे। गुलाबकी शोभा बागमें है, घूरपर नहीं। तुम्हारा वहां रहना उतना अस्वाभाविक था जितना सुअरके माथेपर सेन्दूरकी टीका होती है या झोपड़ीमें झाड़। वह जल-वायु तुम्हारे सर्वथा प्रतिकूल थी। हंस मरुभूमिमें नहीं रहता। इसी तरह अगर मैं सोचूं कहीं तुम यह न समझो कि जब यह अपनी विवाहिता स्त्रीका न हुआ तो मेरा क्या होगा तो?

राजे०—(गम्भीरतासे) मुझमें और आपमें बड़ा अन्तर है।

सबल—यह बातें फिर होंगी, इस वक्त आराम करो, थक गई होगी। पंखा खोले देता हूँ। सामनेवाली कोठरीमें पानी-वानी सब रखा हुआ है। मैं अभी आता हूं।

छठा दृश्य

सबलसिंहका भवन। गुलाबी और ज्ञानी फ़र्शपर बैठी हुई हैं। बाबा चेतनदास ग़लीचेपर मसनद लगाये लेटे हुए हैं। रातके ८ बजे हैं।

गुलाबी—आज महात्माजीने बहुत दिनोंके बाद दर्शन दिये।

ज्ञानी—मैंने समझा था कहीं तीर्थयात्रा करने चले गये होंगे।

चेतनदास—माता जी मेरेको अब तीर्थयात्रासे क्या प्रयोजन। ईश्वर तो मनमें है, उसे पर्वतोंके शिखर और नदियोंके तटपर क्यों खोजूं। वह घट-घट व्यापी है, वही तुममें है, वही मुझमें है, वही प्राणिमात्रमें है, यह समस्त ब्रह्माण्ड उसीका विराट स्वरूप है, उसीकी अखिल ज्योति है। यह विभिन्नता केवल बहिर्जगतमें है, अन्तर्जगतमें कोई भेद नहीं है। मैं अपनी कुटीमें बैठा हुआ ध्यानावस्थामें अपने भक्तोंसे साक्षात करता रहा हूँ। यह मेरा नित्यका नियम है।

गुलाबी—(ज्ञानीसे) महात्माजी अन्तरजामी हैं। महराज

मेरा लड़का मेरे कहनेमें नहीं है। बहूने उसपर न जाने कौन सा मंत्र डाल दिया है कि मेरी बात ही नहीं पूछता। जो कुछ कमाता है वह लाकर बहूके हाथमें देता है, वह चाहे कान पकड़कर उठाये या बैठाये, बोलता ही नहीं। कुछ ऐसा उत-जोग कीजिये कि वह मेरे कहनेमें हो जाय, बहूकी ओरसे उसका चित्त फिर जाय। बस यही मेरी लालसा है।

चेतनदास—(मुस्किराकर) बेटेको बहूके लिये ही तो पाला पोसा था। अब वह बहूका हो रहा तो तेरेको क्यों ईर्षा होती है।

ज्ञानी—महाराज वह स्त्रीके पीछे इस विचारीसे लड़नेपर तैयार हो जाता है।

चेतन—यह कोई बात नहीं है। मैं उसे मोमकी भांति जिधर चाहूँ फेर सकता हूँ केवल इसको मुझपर श्रद्धा रखनी चाहिये। श्रद्धा, श्रद्धा, श्रद्धा, यही अर्थ, धर्म, काम, मोक्षकी प्राप्तिका मूलमंत्र है। श्रद्धासे ब्रह्म मिल जाता है। पर श्रद्धा उत्पन्न कैसे हो। केवल बातोंहीसे श्रद्धा उत्पन्न नहीं हो सकती। वह कुछ देखना चाहती है। बोलो क्या दिखाऊं। तुम दोनों मनमें कोई बात ले लो। मैं अपने योगबलसे अभी बतला दूंगा। ज्ञानी देवी, पहले तुम मनमें कोई बात लो।

ज्ञानी—ले लिया महाराज।

चेतनदास—(ध्यान करके) बड़ी दूर चली गई। "मोति-

योंका हार" है न ?

ज्ञानी—हां महाराज यही बात थी।

चेतन—गुलाबी, अब तुम कोई बात लो।

गुलाबी—ले ली महराज।

चेतन—(ध्यान करके मुस्किरा कर)—बहूसे इतना द्वेष 'वह मर जाय'।

गुलाबी—हां महराज यही बात थी। आप सचमुच अंतरजामी हैं।

चेतन—कुछ और देखना चाहती हो, बोलो 'क्या वस्तु यहाँ मंगवाऊं ? मेवा, मिठाई, हीरे, मोती, इन सब वस्तुओंके ढेर लगा सकता हूँ। अमरूदके दिन नहीं हैं, जितना अमरूद चाहो मंगवा दूं। भेजो प्रभूजी, भेजो तुरत भेजो--

(*मोतियोंका ढेर लगता है।*)

गुलाबी—आप सिद्ध हैं।

ज्ञानी—आपकी चमत्कार शक्तिको धन्य है।

चेतनदास—और क्या देखना चाहती हो ? कहो यहांसे बैठे २ अंतरध्यान हो जाऊं और फिर यहीं बैठा हुआ मिलूं। कहो वहां उस वृक्षके नीचे तुम्हें नैपथ्यमें गाना सुनाऊं। हां यही अच्छा है। देवगण तुम्हें गाना सुनायेंगे, पर तुम्हें उनके दर्शन न होंगे। उस वृक्षके नीचे चली जावो।

(दोनों जाकर पेड़के नीचे खड़ी हो जाती हैं। गानेकी ध्वनि आने लगती है।)

बाहिर ढूंढन आ मत सजनी
प्रिया घर बीच बिराज रहे री ॥
गगन महलमें सेज बिछी है
अनहद बाजे बाज रहे री ॥
अमृत बरसे, बिजली चमके
घुमर घुमर घन गाज रहे री ॥

ज्ञानी—ऐसे महात्माओंके दर्शन दुर्लभ होते हैं।

गुलाबी—पूर्वजन्ममें बहुत अच्छे कर्म किये थे। यह उसीका फल है।

ज्ञानी—देवताओंको भी बसमें कर लिया है।

गुलाबी—जोगबलकी बड़ी महिमा है। मगर देवता बहुत अच्छा नहीं गाते। गला दबाकर गाते हैं क्या ?

ज्ञानी—पगला गई है क्या। महात्माजी अपनी सिद्धि दिखा रहे हैं कि तुम्हारे लिये देवताओंकी संगीत मंडली खड़ी की है।

गुलाबी—ऐसे महात्माको राजा साहब धूर्त कहते हैं।

ज्ञानी—बहुत विद्या पढ़नेसे आदमी नास्तिक हो जाता है। मेरे मनमें तो इनके प्रति भक्ति और श्रद्धाकी एक तरंग सी उठ रही है। कितना देवतुल्य स्वरूप है।

गुलाबी—कुछ भेंट-भाँट तो लेंगे नहीं ?

ज्ञानी—अरे राम राम ! महात्माओंको रुपये पैसेका क्या मोह। देखती तो हो कि मोतियोंके ढेर सामने लगे हुए हैं, किस चीज़की कमी है ?

(*दोनों कमरेमें आती हैं। गाना बन्द होता है।*)

ज्ञानी—अरे ! महात्माजी कहां चले गये ? यहाँसे उठते तो नहीं देखा।

गुलाबी—इसकी माया कौन जाने। अंतरध्यान हो गये होंगे।

ज्ञानी—कितनी अलौकिक लीला है !

गुलाबी—अब मरते दमतक इनका दामन न छोड़ूँगी। इन्हींके साथ रहूँगी और सेवा टहल करती रहूँगी।

ज्ञानी—मुझे तो पूरा विश्वास है कि मेरा मनोरथ इन्होंसे पूरा होगा। सहसा चेतनदास मसनद लगाये बैठे दिखाई देते हैं।

गुलाबी—(चरणोंपर गिर कर) धन्य हो महाराज, आपकी लीला अपरमपार है।

ज्ञानी—(चरणोंपर गिरकर) भगवान, मेरा उद्धार करो।

चेतनदास—कुछ और देखना चाहती है ?

ज्ञानी—महराज बहुत देख चुकी। मुझे विश्वास हो गया

कि आप मेरा मनोरथ पूरा कर देंगे।

चेतन—जो कुछ मैं कहूं वह करना होगा

ज्ञानी—सिरके बल करूँगी।

चेतन—कोई शंका की तो परिणाम बुरा होगा।

ज्ञानी—(कांपती हुई) अब मुझे कोई शंका नहीं हो सकती। जब आपकी शरण आ गई तो कैसी शंका।

चेतन—(मुस्किराकर) अगर आज्ञा दूँ कुवेंमें कूद पड़।

ज्ञानी—तुरत कूद पड़ूँगी। मुझे विश्वास है कि उससे भी मेरा कल्याण होगा।

चेतन—अगर कहूँ अपने सब आभूषण उतारकर मुझे दे दे तो मनमें यह तो न कहेगी, इसीलिये यह जाल फैलाया था, धूर्त है।

ज्ञानी—(चरणोंपर गिरकर) महाराज, आप प्राण भी मांगें तो आपकी भेंट करूँगी।

चेतन—अच्छा अब जाता हूं। परीक्षाके लिये तैयार रहना।

सातवाँ दृश्य

समय—प्रातःकाल, ज्येष्ठ। स्थान—गंगाका तट। राजेश्वरी एक सजे हुए कमरेमें मसनद लगाये बैठी है। दो तीन लौंडियाँ इधर-उधर दौड़कर काम कर रही हैं।

सबलसिंहका प्रवेश।

सबल—अगर मुझे, उषाका चित्र खींचना हो तो तुम्हींको नमूना बनाऊँ। तुम्हारे मुखपर मंद समीरणसे लहराते हुए केश ऐसी शोभा दे रहे हैं मानों............

राजे०—दो नागिनें लहराती चली जाती हों, किसी प्रेमीको डँसनेके लिये।

सबल—तुमने हँसीमें उड़ा दिया, मैंने बहुत ही अच्छी उपमा सोची थी।

राजे०—खैर, यह बताइये तीन दिनतक दर्शन क्यों नहीं दिया?

सबल—(असमंजसमें पड़कर) मैंने समझा शायद मेरे रोज आनेसे किसीको सन्देह हो जाय।

राजे०—मुझे इसकी कुछ परवाह नहीं है। आपको वहां नित्य आना होगा। आपको क्या मालूम है कि यहाँ किस तरह तड़प-तड़पकर दिन काटती हूं।

सबल—राजेश्वरी, मैं अपनी दशा कैसे दर्शाऊँ। बस यही समझ लो जैसे पानी बिना मछली तड़पती हो। न सैर करनेका जी चाहता है न घरसे निकलनेका, न किसीसे मिलने-जुलने का, यहाँतक कि साइनेमा देखनेको भी जी नहीं चाहता। जब यहाँ आने लगता हूं तो ऐसी प्रबल उत्कण्ठा होती है कि उड़कर आ पहुँचूँ। जब यहाँसे चलता हूं तो ऐसा जान पड़ता है कि मुकदमा हार आया हूँ। राजेश्वरी, पहले मेरी केवल यही इच्छा थी कि तुम्हें आँखोंसे देखता रहूँ, तुम्हारी मधुर वाणी सुनता रहूँ। तुम्हें अपनी देवी बनाकर पूजना चाहता था पर जैसे ज्वरमें जलसे तृप्ति नहीं होती, जैसे नई सभ्यतामें विलासकी वस्तुओंसे तृप्ति नहीं होती, वैसे ही प्रेमका भी हाल है; वह सर्वस्व देना और सर्वस्व लेना चाहता है। इतना यत्न करनेपर भी घरके लोग मुझे चिन्तित नेत्रोंसे देखने लगे हैं। उन्हें मेरे स्वभावमें कोई ऐसी बात नजर आती है जो पहले नहीं आती थी। न जाने इसका क्या अंत होगा।

राजे०—इसका अन्त होगा वह मैं जानती हूँ और उसे जानते हुए मैंने इस मार्गपर पाँव रखा है। पर उन चिन्ताओंको

छोड़िये। जब ओखलीमें सिर दिया है तो मूसलोंका क्या डर। मैं यही चाहती हूँ कि आप दिनमें किसी समय अवश्य आ जाया करें। आपको देखकर मेरे चित्तकी ज्वाला शांत हो जाती है जैसे जलते हुए घावपर मरहम लग जाय। अकेले मुझे डर भी लगता है कि कहीं वह हलजोत किसान मेरी टोह लगाता हुआ आ न पहुँचे। यह भय सदैव मेरे हृदयपर छाया रहता है। उसे क्रोध आता है तो वह उन्मत्त हो जाता है। उसे ज़रा भी खबर मिल गई तो मेरी जानकी खैरियत नहीं है।

सबल—उसकी ज़रा भी चिन्ता मत करो। मैंने उसे हिरासतमें रखवा दिया है। वहां ६ महीनेतक रखूंगा। अभी तो १ महीनेसे कुछ ही ऊपर हुआ है। ६ महीनेके बाद देखा जायगा। रुपये कहां हैं कि देकर छूटेगा।

राजे०—क्या जाने उसके गाय, बैल कहां गये? भूखों मर गये होंगे।

सबल—नहीं, मैंने पता लगाया था। वह बुड्ढा मुसलमान फत्तू उसके सब जानवरोंको अपने घर ले गया है और उनकी अच्छी तरह सेवा करता है।

राजे०—यह सुनकर चिन्ता मिट गई। मैं डरती थी कहीं सब जानवर मर गये हों तो हमें हत्या लगे।

सबल—(घड़ी देखकर) यहां आता हूँ तो समयके परसे

लग जाते हैं। मेरा बस चलता तो एक एक मिनटके एक एक घंटे बना देता।

राजे०—और मेरा बस चलता तो एक एक घण्टेके एक एक मिनिट बना देती। जब प्यास भर पानी न मिले तो पानीमें मुंह ही क्यों लगाये। जब कपड़ेपर रँगके छींटे ही डालने हैं तो उसका उजला रहना ही अच्छा। अब मनको समेटना सीखूंगी।

सबल—प्रिये........

राजे०—(बात काटकर) इस पवित्र शब्दको अपवित्र न कीजिये।

सबल—(सजल नयन होकर) मेरी इतनी याचना तुम्हें स्वीकार करनी पड़ेगी। प्रिये मुझे अनुभव हो रहा है कि यहां रहकर हम आनन्दमय प्रेमका स्वर्ग सुख न भोग सकेंगे। क्यों न हम किसी सुरम्य स्थानपर चलें जहां विघ्न और बाधाओं, चिन्ताओं और शंकाओंसे मुक्त होकर जीवन व्यतीत हो। मैं कह सकता हूँ कि मुझे जल वायु, परिवर्त्तनके लिये किसी स्वस्थकर स्थानकी जरूरत है, जैसे गढ़वाल, आबू पर्वत या रांची।

राजे०—लेकिन ज्ञानी देवीको क्या कीजियेगा। क्या वह साथ न चलेंगी ?

सबल—बस यही एक रुकावट है। ऐसा कौनसा यत्न

करूं कि वह मेरे साथ चलनेपर आग्रह न करे। इसके साथ ही कोई संदेह भी न हो।

राजे०—ज्ञानी सती हैं, वह किसी तरह यहां न रहेंगी। यदि आप दस पांच दिन, या एक दो महीनेके लिये कहीं जायें तो वह साथ न जायेंगी लेकिन जब उन्हें मालूम होगा कि आपका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है तब वह किसी तरह न रुकेगी। और यह बात भी है कि ऐसी सती स्त्रीको मैं दुखी नहीं करना चाहती। मैं तो केवल आपका प्रेम चाहती हूँ। उतना ही जितना ज्ञानीसे बचे। मैं उनका अधिकार नहीं छीनना चाहती। मैं उनके पैरोंकी धूलके बराबर भी नहीं हूँ। मैं उनके घरमें चोरकी भांति घुसी हूँ। उनसे मेरी क्या बराबरी। आप उन्हें दुखी किये बिना मुझपर जितनी कृपा कर सकते हैं उतनी कीजिये।

सबल—(मनमें) कैसे पवित्र विचार हैं। ऐसा नारिरत्न पाकर मैं उसके सुखसे वंचित हूँ। मैं कमल तोड़नेके लिये क्यों पानीमें घुसा जब जानता था कि वहां दलदल है। मदिरा पीकर चाहता हूं कि उसका नशा न हो।

राजेश्वरी—(मनमें) भगवन्। देखूं अपने व्रतका पालन कर सकती हूँ या नहीं। कितने पवित्र भाव हैं, कितना अगाध प्रेम!

सबल—(उठकर) प्रिये, कल इसी वक्त फिर आऊँगा। प्रेमालिंगनके लिये चित्त उत्कंठित हो रहा है।

राजे०—यहां प्रेमकी शान्ति नहीं, प्रेमकी दाह है। जाइये। देखूं अब यह पहाड़ सा दिन कैसे कटता है। नींद भी जाने कहां भाग गई।

सबल—(छज्जेके जीनेसे लौटकर) प्रिये, गजब हो गया; वह देखो कंचनसिंह जा रहे हैं। उन्होंने मुझे यहांसे उतरते देख लिया। अब क्या करूँ?

राजे०—देख लिया तो क्या हरज हुआ। समझे होंगे आप किसी मित्रसे मिलने आये होंगे। जरा मैं भी उन्हें देख लूँ।

सबल—जिस बातका मुझे डर था वही हुआ। अवश्य ही उन्हें कुछ टोह लग गई है। नहीं तो इधर उनके आनेका कोई काम न था। यह तो उनके पूजा पाठका समय है। इस वक्त कभी बाहर नहीं निकलते। हाँ गंगास्नान करने जाते हैं, मगर घड़ी रात रहे। इधरसे कहाँ जायेंगे? घरवालोंको सन्देह हो गया।

राजे०—आपसे स्वरूप बहुत मिलता हुआ है। सुनहरी ऐनक खूब खिलती है।

सबल—अगर वह सिर झुकाये अपनी राह चले जाते तो मुझे शंका न होती पर वह इधर-उधर, नीचे-ऊपर इस भांति ताकते जाते थे जैसे शोहदे कोठोंकी ओर झांकते हैं। उनका स्वभाव नहीं है। बड़े ही धर्मज्ञ, सच्चरित्र, ईश्वरभक्त पुरुष हैं। संसा-

रिकतासे उन्हें घृणा है। इसलिये अबतक विवाह नहीं किया।

राजे०—अगर यह हाल है तो यहाँ पूछ-ताछ करने जरूर आयेंगे

सबल—मालूम होता है इस घरका पता पहले लगा लिया है। इस समय पूछ-ताछ करने ही आये थे। मुझे देखा तो लौट गये। अब मेरी लज्जा, मेरा लोक सम्मान, मेरा जीवन तुम्हारे आधीन है। तुम्हीं मेरी रक्षा कर सकती हो।

राजे०—क्यों न कोई दूसरा मकान ठीक कर लीजिये।

सबल—इससे कुछ न होगा। बस यही उपाय है कि जब वह यहाँ आयें तो उन्हें चकमा दिया जाय। कहला भेजो मैं सबलसिंहको नहीं जानती। वह यहाँ कभी नहीं आते। दूसरा उपाय यह है कि उन्हें कुछ दिनोंके लिये यहांसे टाल दूं। कह देता हूं कि जाकर लायलपुरसे गेहूँ खरीद लावो। तबतक हम लोग यहाँसे कहीं और चल देंगे।

राजे०—यही तरकीब अच्छी है।

सबल—अच्छी तो है पर हुआ बड़ा अनर्थ। अब परदा ढका रहना कठिन है।

राजे०—(मनमें) ईश्वर, यही मेरी प्रतिज्ञाके पूरे होनेका अवसर है। मुझे बल प्रदान करो। (प्रगट) यह सब मुसीबतें मेरी लाई हुई हैं। मैं क्या जानती थी कि प्रेम मार्गमें इतने कांटे हैं!

सबल—मेरी बातोंका ध्यान रखना। मेरे होश ठिकाने नहीं हैं। चलूं देखूं, मुआमला अभी कंचनसिंह ही तक है या ज्ञानीको भी खबर हो गई।

राजे०—आज संध्या समय आइयेगा। मेरा जी उधर ही लगा रहेगा।

सबल—अवश्य आऊंगा। अब तो मन लागि रह्यो, होनी हो सो होई। मुझे अपनी कीर्ति बहुत प्यारी है। अबतक मैंने मान-प्रतिष्ठा हीको जीवनका आधार समझ रखा था, पर अवसर आया तो मैं इसे प्रेमकी वेदीपर उसी तरह चढ़ा दूंगा जैसे उपासक पुरुषोंका चढ़ा देता है, नहीं जैसे कोई ज्ञानी पार्थिव वस्तुओंको लात मार देता है। (जाता है)

आठवां दृश्य

(समय—संध्या, जेठका महीना । स्थान—मधुबन, कई आदमी फत्तूके द्वारपर खड़ा हैं ।)

मंगरू—फत्तू तुमने बहुत चक्कर लगाया, सारा संसार छान डाला ।

सलोनी—बेटा तुम न होते तो हलधरका पता लगना मुसकिल था ।

हरदास—पता लगाना तो मुसकिल नहीं था, हाँ जरा देरमें लगता ।

मंगरू—कहाँ कहाँ गये थे ?

फत्तू—पहले तो कानपुर गया । वहाँके सब पुतलीघरोंको देखा । कहीं पता न लगा । तब लोगोंने कहा बम्बई चले जाव । वहां चला गया मुदा उतने बड़े सहरमें कहां-कहां ढूंढ़ता । ४, ५ दिन पुतली घरोंमें देखने गया, पर हियाव छूट गया । सहर काहेको है पूरा मुलुक है । जान पड़ता है संसार भरके आदमी वहीं आकर जमा हो गये हैं । तभी तो

यहां गांवमें आदमी नहीं मिलते। सच मानो कुछ नहीं तो एक हजार मील तो होंगे। रात दिन उनकी चिमनियोंसे धुआं निकला करता है। ऐसा जान पड़ता है राक्षसों की फौज मुंहसे आग निकालती आकाशसे लडने जा रही है। आखिर निराश होकर वहांसे चला आया। गाड़ीमें एक बाबूजीसे बातचीत होने लगी। मैंने सब रामकहानी उन्हें सुनाई। बड़े दयावान आदमी थे। कहा किसी अखबारमें छपा दो कि जो उनका पता बता देगा उसे ५०) इनाम दिया जायगा। मेरे मनमें भी बात जम गई। बाबूजी हीसे मसौदा बनवा लिया और यहां गाड़ीसे उतरते ही सीधे अखबारके दफ्तरमें गया। छपाईका दाम देकर चला आया। पांचवें दिन वह चपरासी यहां आया जो मुझसे खड़ा बातें कर रहा था। उसने रत्ती-रत्ती सब पता बता दिया। हलधर न कलकत्ता गया है न बम्बई, यहीं हिरासतमें है। वही कहावत हुई गोदमें लड़का सहरमें ढिंढोरा।

मंगरू—हिरासतमें क्यों है?

फत्तू—महाजनकी मेहरबानी और क्या। माघ-पूसमें कंचन सिंहके यहांसे कुछ रुपये लाया था। बस नादिहन्दीके मामलेमें गिरफ्तार करा दिया।

हरदास—उनके रुपये तो यहां और कई आदमियोंपर आते हैं, किसीको गिरफतार नहीं कराया। हलधरपर ही क्यों

इतनी टेढ़ी निगाह की ?

फत्तू—पहले सबको गिरफ्तार कराना चाहते थे, पर बादको सबलसिंहने मना कर दिया। दावा दायर करनेकी सलाह थी। पर बड़े ठाकुर तो दयावान जीव हैं, दावा भी मुल्तवी कर दिया, इधर लगान भी मुआफ कर दी। मुझसे जब चपरासीने यह हाल कहा तो जैसे बदनमें आग लग गई। सीधे कंचनसिंहके पास गया और मुंहमें जो कुछ आया कह सुनाया। सोच लिया था करेंगे क्या, यही न होगा अपने आदमियोंसे पिटवावेंगे तो मैं भी दो-चारका सिर तोड़के रख दूंगा, जो होगा देखा जायगा। मगर बिचारेने जुबान तक नहीं खोली। जब मैंने कहा, आप बड़े धर्मात्माकी पूँछ बनते हैं, सौ दो सौ रुपयोंके लिये गरीबोंको जेहलमें डालते हैं उस आदमीका तो यह हाल हुआ, उसकी घरवालीका कहीं पता नहीं, मालूम नहीं कहीं डूब मरी, या क्या हुआ, यह सब पाप किसके सिर पड़ेगा, खुदा तालाको क्या मुंह दिखाओगे तो बिचारे रोने लगे। लेकिन जब रुपयोंकी बात आई तो उस रकममें एक पैसा भी छोड़नेकी हामी नहीं भरी।

सलोनी—इतनी दौड़धूप तो कोई अपने बेटेके लिये भी न करता। भगवान इसका फल तुम्हें देंगे।

हरदास—महाजनके कितने रुपये आते हैं ?

फत्तू—कोई ढ़ई सौ होंगे। थोड़ी-थोड़ी मदद कर दो तो आज ही हलधरको छुड़ा लूं। मैं बहुत जेरबारीमें पड़ गया हूँ नहीं तो तुम लोगोंसे न मांगता।

मंगरू—भैया, यहाँ रुपये कहां, जो कुछ लेई पूंजी थी वह बेटीके गौनेमें खर्च हो गई। उसपर पत्थरने और भी चौपट कर दिया।

सलोनी—बनेके साथी सब होते हैं, बिगड़ेका साथी कोई नहीं होता?

मँगरू—जो चाहे समझो, पर मेरे पास कुछ नहीं है।

हरदास—अगर १०-२०) दे भी दें तो कौन जल्दी मिले जाते हैं। बरसोंमें मिलें तो मिलें। उसमें सबसे पहले अपनी जमा लेंगे, तब कहीं औरोंको मिलेगा।

मंगरू—भला इस दौड़धूपमें तुम्हारे कितने रुपये लगे होंगे?

फत्तू—क्या जाने, मेरे पास कोई हिसाब-किताब थोड़ा ही है?

मँगरू—तब भी अन्दाजसे?

फत्तू—कोई १००) लगे होंगे।

मँगरू—(हरदासको कनखियोंसे देखकर) बिचारा हलधर तो बिना मौत मर गया। १००) इन्होंने चढ़ा दिये, १५०) महाजनके होते हैं, गरीब कहाँतक भरेगा?

फत्तू—मुसीबतमें जो मदद की जाती है वह अल्लाहकी राह-में की जाती है। उसे कर्ज नहीं समझा जाता।

हरदास - तुम अपने १००) तो सीधे ही कर लोगे ?

सलोनी—(मुंह चिढ़ाकर) हाँ दलालीके कुछ पैसे तुझे भी मिल जायंगे। मुंह धो रखना। हाँ बेटा, उसे छोड़ानेके लिये २५०) की क्या फिकर करोगे ? कोई महाजन खड़ा किया है ?

फत्तू—नहीं काकी, महाजनोंके जालमें न पड़ूंगा। कुछ तुम्हारी बहूके गहने पाते हैं वह गिरो रख दूंगा। रुपये भी उसके पास कुछ-न-कुछ निकल ही आयेंगे। बाकी रुपये अपने दोनों नोट बेंचकर खड़े कर लूंगा।

सलोनी—महीने ही भरमें तो तुझे फिर बैल चाहने होंगे।

फत्तू—देखा जायगा। हलधरके बैलोंसे काम चलाऊँगा।

सलोनी—बेटा तुम तो हलधरके पीछे तबाह हो गये।

फत्तू—काकी, इन्हीं दिनोंके लिये तो छाती फाड़ २ कमाते हैं ? और लोग थाने अदालतमें रुपये बर्बाद करते हैं। मैंने तो एक पैसा भी बर्बाद नहीं किया। हलधर कोई गैर तो नहीं है, अपना ही लड़का है। अपना लड़का इस मुसीबतमें होता तो उसको छुड़ाना पड़ता न। समझ लूँगा अपनी बेटीके निकाहमें लग गये।

सलोनी—(हरदासकी ओर देखकर) देखा, मर्द ऐसे होते

हैं। ऐसे ही सपूतोंके जन्मसे माताका जीवन सुफल होता है। तुम दोनों हलधरके पट्टीदार हो, एक ही परदादाके परपोते हो। पर तुम्हारा लोहू सफेद हो गया है। तुम तो मनमें खुश होगे कि अच्छा हुआ बह गया, अब उसके खेतोंपर हम कबजा कर लेंगे।

हरदास—काकी, मुँह न खुलवाओ। हमें कौन हलधरसे वाह-वाही लूटनी है, न एकके दो वसूल करने हैं, हम क्यों इस झमेलेमें पड़ें। यहाँ न ऊधोका लेना, न माधोका देना, अपने कामसे काम है। फिर हलधरने कौन यहां किसीकी मदद कर दी? प्यासों मर भी जाते तो पानीको न पूछता। हाँ दूसरोंके लिये चाहे घर लुटा देते हों।

मँगरू—हलधरकी बात ही क्या है, अभी कलका लड़का है। उसके बापने भी कभी किसीकी मदद की? चार दिनकी आई बहू है, वह भी हमें दुसमन समझती है।

सलोनी—(फत्तूसे) बेटा, सांझ हुई, दिया-बत्ती करने जाती हूं। तुम थोड़ी देरमें मेरे पास आना, कुछ सलाह करूँगी।

फत्तू—अच्छा एक गीत तो सुनाती जाव। महीनों हो गये तुम्हारा गाना नहीं सुना।

सलोनी—इन दोनोंको अब कभी अपना गाना न सुना-

ऊँगी।

हरदास—लो हम कानोंमें उँगली रखे लेते हैं।

सलोनी—हां, कान खोलना मत।

(*गाती है*)

ढूंढ फिरी सारा संसार, नहीं मिला कोई अप ना।
भाई भाई बैरी ह्वै गये, बाप हुआ जमदूत॥
दया धरमका उठ गया डेरा, सज्जनता है सपना।
नहीं मिला कोई अपना॥

(*जाती है*)

नवाँ दृश्य

(स्थान—मधुबन, हलधरका मकान, गाँवके लोग जमा हैं।
समय—ज्येष्ठकी सन्ध्या।)

हलधर—(बाल बढ़े हुए, दुर्बल, मलिन मुख) फत्तू काका, तुमने मुझे नाहक छुड़ाया, वहीं क्यों न घुलने दिया। अगर मुझे मालूम होता कि घरकी यह दसा है तो उधरसे ही देश-विदेशकी राह लेता, यहां अपना काला मुँह दिखाने न आता। मैं इस औरतको पतिव्रता समझता था। देवी समझकर उसकी पूजा करता था। पर यह नहीं जानता था कि वह मेरे पीठ फेरते ही यों मेरे पुरखाओंके माथेपर कलंक लगायेगी। हाय !

सलोनी—बेटा, वह सचमुच देवी थी ऐसी पतिबरता नारी मैं ने नहीं देखी। तुम उसपर सन्देह करके उसपर बड़ा अन्याय कर रहे हो। मैं रोज रातको उसके पास सोती थी। उसकी आंखें रातकी रात खुली रहती थीं। करवटें बदला करती। मेरे बहुत कहने-सुनने पर कभी-कभी भोजन बनाती थी, पर दो

चार कौर भी न खाया जाता। मुँह जूठा करके उठ आती। रात दिन तुम्हारी ही चर्चा तुम्हारी ही बात किया करती थी। शोक और दुःखमें जीवनसे निरास होकर उसने चाहे प्राण दे दिये हों पर वह कुलको कलंक नहीं लगा सकती। बरम्हा भी आकर उसपर यह दोस लगायें तो मुझे उनपर बिस्सस न आयेगा।

फत्तू—काकी, तुम तो उसके साथ सोती ही बैठती थीं, तुम जितना जानती हो उतना मैं कहाँसे जानूंगा, लेकिन इस गांवमें सत्तर बरसकी उमिर गुजर गई, सैकड़ों बहुएं आईं पर किसीमें वह बात नहीं पाई जो इसमें है। न ताकना, न झांकना, सिर झुकाये अपनी राह जाना, अपनी राह आना। सचमुच ही देवी थी।

हलधर—काका, किसी तरह मनको समझाने तो दो। जब अंगूठी पानीमें गिर गई तो यह सोचकर क्यों न मनको धीरज दूं कि उसका नग कच्चा था। हाय, अब इस घरमें पांव नहीं रखा जाता, ऐसा जान पड़ता है कि घरकी जान निकल गई।

सलोनी—जाते जाते घरको लीप गई है। देखो अनाज मटकोंमें रखकर इनका मुंह मिट्टीसे बन्द कर दिया है। यह घीकी हांडी है, लबालब भरी हुई, बिचारीने संच कर रखा था। क्या कुल्टाएं गृहस्तीकी ओर इतना ध्यान देती हैं? एक तिनका

भी तो इधर-उधर पड़ा नहीं दिखाई देता।

हलधर—(रोकर) काकी, मेरे लिये अब संसार सूना हो गया। वह गंगाकी गोदमें चली गई। अब फिर उसकी मोहिनी मूरत देखनेको न मिलेगी। भगवान बड़ा निर्दयी है। इतनी जल्द छीन लेना था तो दिया ही क्यों था।

फत्तू—बेटा, अब तो जो कुछ होना था वह हो चुका, अब सबर करो, और अल्लातालासे दुआ करो कि उस देवीको निजात दे। रोने-धोनेसे क्या होगा। वह तुम्हारे लिये थी ही नहीं। उसे भगवानने रानी बननेके लिये बनाया था। कोई ऐसी ही बात हो गई थी कि वह कुछ दिनोंके लिये इस दुनियामें आई थी। वह मीयाद पूरी करके चली गई। यही समझकर सबर करो

हलधर—काका, नहीं सबर होता। कलेजेमें पीड़ा हो रही है। ऐसा जान पड़ता है कोई उसे जबरदस्ती मुझसे छीन ले गया हो। हां, सचमुच वह मुझसे छीन ली गई है, और यह अत्याचार किया है सबलसिंह और उनके भाईने। न मैं हिरासतमें जाता न घर यों तबाह होता। उसका बध करनेवाले उसकी जान लेनेवाले यही दोनों भाई हैं। नहीं, इन दोनों भाइयोंको क्यों बदनाम करूं, सारी विपत्ति इस कानूनकी लाई हुई है जो गरीबोंको धनी लोगोंकी मुट्ठीमें कर देता है। फिर

कानूनको क्यों बुरा कहूँ। जैसा संसार वैसा व्यवहार।

फत्तू—बस यही बात है जैसा संसार वैसा व्यवहार। धनी लोगोंके हाथमें अखतियार है। गरीबोंको सतानेके लिये जैसा कानून चाहते हैं बनाते हैं। बैठो, नाई बुलाये देता हूं बाल बनवा लो।

हलधर—नहीं काका, अब इस घरमें न बैठूंगा। किसके लिये घरबारके झमेलेमें पड़ूं। अपना पेट है, उसकी क्या चिन्ता। इस अन्यायी संसारमें रहनेका जी नहीं चाहता। ढाई सौ रुपयों-के पीछे मेरा सत्यानास हो गया। ऐसा परबस होकर जिया ही तो क्या। चलता हूँ, कहीं साधु-बैरागी हो जाऊंगा, मांगता खाता फिरूंगा।

हरदास—तुम तो साधु वैरागी हो जावोगे? यह रुपये कौन भरेगा?

फत्तू—रुपये पैसेकी कौन बात है, तुमको इससे क्या मत-लब? यह तो आपसका व्यवहार है, हमारी अटकपर तुम काम आये, तुम्हारी अटकपर हम काम आयेंगे। कोई लेन-देन थोड़ा ही किया है!

सलोनी—इसकी बिच्छूकी भांति डंक मारनेकी आदत है।

हलधर—नहीं इसमें बुरा माननेकी कोई बात नहीं है। फत्तू काका, मैं तुम्हारी नेकीको कभी भूल नहीं सकता। तुमने जो

कुछ किया यह अपना बाप भी न करता। जबतक मेरे दममें दम है तुम्हारा और तुम्हारे खानदानका गुलाम बना रहूँगा। मेरा घर द्वार, खेत बारी, बैल बधिये, जो कुछ है सब तुम्हारा है, और मैं तुम्हारा गुलाम हूँ। बस अब मुझे बिदा करो, जीता रहूँगा तो फिर मिलूंगा नहीं तो कौन किसका होता है। काकी, जाता हूं, सब भाइयोंको राम राम !

फत्तू—(रास्ता रोककर गदगद कण्ठसे) बेटा, इतना दिल छोटा न करो। कौन जाने, अल्लाताला बड़ा कारसाज है, कहीं बहूका पता लग ही जाय। इतने अधीर होनेकी कोई बात नहीं है।

हरदास—चार दिनमें तो दूसरी सगाई हो जायगी।

हलधर—भैया, दूसरी सगाई अब उस जनममें होगी। इस जनममें तो अब ठोकर खाना ही लिखा है। अगर भगवानको यह न मंजूर होता तो क्या मेरा बना बनाया घर उजड़ जाता ?

फत्तू—मेरा तो दिल बार बार कहता है कि दो-चार दिनमें राजेश्वरीका पता जरूर लग जायगा। कुछ खाना बनावो, खावो, सवेरे चलेंगे फिर इधर-उधर टोह लगायेंगे।

हरदास—पहले जाके तालाबमें अच्छी तरह असनान कर लो। चलूं जानवर हारसे आ गये होंगे।

(सब चले जाते हैं।)

हलधर—यह घर फाड़े खाता है, इसमें तो बैठा भी नहीं जाता। इस वक्त काम करके आता था तो उसकी मोहनी मूरत देखकर चित्त कैसा खिल जाता था। कंचन, तूने मेरा सुख हर लिया, तूने मेरे घरमें आग लगा दी। ओहो, वह कौन उजली साड़ी पहने उस घरमें खड़ी है। वही है, छिपी हुई थी। खड़ी है, आती नहीं। (उस घरके द्वारपर जाकर) राम! राम! कितना भरम हुआ, मनकी गांठ रखी हुई है। अब उसके दर्शन फिर नसीब न होंगे। जीवनमें अब कुछ नहीं रहा। हा, पापी, निर्दयी! तूने मेरा सर्वनाश कर दिया, मुट्ठी भर रुपयोंके पीछे! इस अन्यायका मजा तुझे चखाऊंगा। तू भी क्या समझेगा कि गरीबोंका गला काटना कैसा होता है........

(*लाठी लेकर घरसे निकल जाता है*)

दसवाँ दृश्य

—:❀:—

(स्थान—गुलाबीका घर, समय—प्रातःकाल ।)

गुलाबी—जो काम करने बैठती है उसीकी हो रहती है। मैंने घरमें झाड़ू लगाई, पूजाके बासन धोये, तोतेको चारा खिलाया, गाय खोली उसका गोबर उठाया, और यह महारानी अभी पाँच सेर गेहूँ लिये जांत पर औंघ रही है किसी काममें इसका जी नहीं लगता। न जाने किस घमंडमें भूली रहती है। बापमें ऐसा कौन सा दहेज था कि किसी धनिकके घर जाती। कुछ नहीं यह सब तुम्हारे सिर चढ़नेका फल है। औरतको जहाँ मुंह लगाया कि उसका सिर फिरा। फिर उसके पाँव जमीनपर नहीं पड़ते। इस जातको तो कभी मुंह लगाये ही नहीं। चाहे कोई बात भी न हो पर उसका मान मरदन नित्य करता रहे।

भृगु—क्या करूं अम्माँ, सब कुछ करके तो हार गया। कोई बात सुनती ही नहीं। ज्योंही गरम पड़ता हूँ रोने लगती

है बस दया आजाती है।

गुलाबी—मैं रोती हूँ तब तो तेरा कलेजा पत्थरका हो जाता है, उसे रोते देखकर क्यों दया आजाती है।

भृगु—अम्मा, तुम घरकी मालकिन हो, तुम रोती हो तो हमारा दुख देखकर रोती हो। तुम्हें कौन कुछ कह सकता है।

गुलाबी—तूंही अपने मनसे समझ मेरी उमिर अब नौकरी करने की है? यह सब तेरे ही कारण न करना पड़ता है? तीन महीने हो गये तूने घरके खरचके लिये एक पैसा भी न दिया। मैं न जाने किस किस उपायसे काम चलाती हूं। तू कमाता है तो क्या करता है? जवान बेटेके होते मुझे छाती फाड़नी पड़े तो दिनोंको रोऊँ कि न रोऊँ। उसपर घरमें कोई बात पूछनेवाला नहीं। पूछो महरानीसे महीने भर हो गये कभी सिरमें तेल डाला, कभी पैर दबाये। सीधेमुंह बात तो करती नहीं, भला सेवा क्या करेंगी। रोऊँ न तो क्या करूँ। मौत भी नहीं आजाती कि इस जंजालसे छूट जाती। न जाने कागद कहाँ खो गया।

भृगु—अम्मा, ऐसी बातें न करो। तुम्हारे बिना यह गृहस्ती कौन चलायेगा? तुम्हींने पाल-पोसकर इतना बड़ा किया है। जबतक जीती हो इसी तरह पाले जाव। फिर तो यह चक्की गले पड़ेगी ही।

गुलाबी—अब मेरा किया नहीं होता।

भृगु—तो मुझे परदेस जाने दो। यहाँ मेरा किया कुछ न होगा।

गुलाबी—आखिर मुनीबीमें तुझे कुछ मिलता है कि नहीं। वह सब कहाँ उड़ा देता है?

भृगु—कसम ले लो जो इधर तीन महीनेमें कौड़ीसे भेंट हुई हो। जबसे ओले पड़े हैं, ठाकुर साहबने लेन देन सब बन्द कर दिया है।

गुलाबी—तेरी मारफ़त बाजारसे सौदा सुलुफ़ आता है कि नहीं। घरमें जिस चीजका काम पड़ता है वह मैं तुझीसे मंगवानेको कहती हूँ। पांच-छ सौका सौदा तो भीतर ही का आता होगा। तू उसमें कुछ काटपेच नहीं करता?

भृगु—मुझे तो अम्मां यह सब कुछ नहीं आता।

गुलाबी—चल झूठे कहींके। मेरे सौदेमें तो तू अपनी चाल चल ही जाता है वहां न चलेगा। दस्तूरी पाता है, भावमें कसता है, तौलमें कसता है। उसपर मुझसे उड़ने चला है। सुनती हूँ दलाली भी करते हो। यह सब कहां उड़ जाता है?

भृगु—अम्मां किसीने तुमसे झूठमूठ कह दिया होगा। तुम्हारा सरल स्वभाव है, जिसने जो कुछ कह दिया वही मान जाती हो। तुम्हारे चरण छूकर कहता हूँ जो कभी दलालीकी

हो। सौदे सुलुफमें दो चार रुपये कभी मिल जाते हैं तो भङ्ग बूटी, पानपत्तेका खर्च चलता है।

गुलाबी—जाकर चुड़ैलसे कह दे पानी-वानी रखे, नहाऊँ, नहीं तो ठाकुरके यहां कैसे जाऊंगी। सारे दिन चक्कीके नामको रोया करेगी क्या?

भृगु—अम्मां, तुम्हीं कहो। मेरा कहना न मानेगी।

गुलाबी—हां तू क्यों कहेगा। तुझे तो उसने भेड़ बना लिया है। उंगलियोंपर नचाया करती है। न जाने कौनसा जादू डाल दिया है कि तेरी मति ही हर गई। जा ओढ़नी ओढ़के बैठ।

(बहूके पास जाती है।)

क्यों रे सारे दिन चक्कीके नामको रोयेगी या और भी कोई काम है?

चम्पा—क्या चार-हाथ पैर कर लूं। क्या यहां सोई हूँ।

गुलाबी—चुप रह, डायन कहींकी, बोलनेको मरी जाती है। सेर भर गेहूँ लिये बैठी है। कौन लड़के वाले रो रहे हैं कि उनके तेल उबटनमें लगी रहती है। घड़ी रात रहे क्यों नहीं उठती। बांझिन, तेरा मुंह देखना पाप है।

चम्पा—इसमें भी किसीका बस है? भगवान नहीं देते तो क्या अपने हाथोंसे गढ़ लूं।

गुलाबी—फिर मुंह नहीं बन्द करती चुड़ैल। जीभ कत-

रनीकी तरह चला करती है। लजाती नहीं। तेरे साथकी आई बहूरियाँ दो दो लड़कोंकी माँ हो गई हैं और तू अभी बांझ बनी है। न जाने कब तेरा पैरा इस घरसे उठेगा। जा नहानेको पानी रख दे नहीं तो भजे पराठे चखाऊँगी। एक दिन काम न करूं तो मुंहमें मक्खी आने जाने लगे। सहजमें ही यह चरबौ-तियाँ नहीं उड़तीं।

चम्पा—जैसी रोटियाँ तुम खिलाती हो ऐसी जहाँ छाती फाड़ूंगी वहीं मिल जायँगी। यहाँ गद्दी मसनद नहीं लगी है।

गुलाबी—(दाँत पीसकर) जी चाहता है सटसे तालूसे जुबान खींच लें। कुछ नहीं, मेरी यह सब सासत भगुवा करा रहा है, नहीं तो तेरी मजाल थी कि मुझसे यों जुबान चलाती। कल-मुंहेको और कोई घर न मिलता था जो अपने सिरकी बला यहाँ पटक गया। अब जो पाऊँ तो मुंह झौंस दूं।

चम्पा—अम्माजी, मुझे जो चाहो कह लो, तुम्हारा दिया खाती हूं, मारो या काटो, दादाको क्यों कोसती हो। भाग बखानो कि बेटेके सिरपर मौर चढ़ गया नहीं तो कोई बात भी न पूछता। ऐसा हुन नहीं बरसता था कि कोई देखके लट्टू हो जाता।

गुलाबी—भगवानको डरती हूं नहीं तो कच्चा ही खा जाती। न जाने कब इस अभागिन बांझसे संग छूटेगा।

(*चली जाती है, भृगु आता है।*)

चम्पा—तुम मुझे मेरे घर क्यों नहीं पहुंचा देते, नहीं एक दिन कुछ खाकर सो रहूंगा तो पछतावोगे। टुकुर-टुकुर देखा करते हो पर मुंह नहीं खुलता कि अम्मा वह भी तो आदमी है, पांच सेर गेहूँ पीसना क्या दाल-भातका कौर है।

भृगु - तुम उसकी बातोंका बुरा क्यों मानती हो। मुंह हीसे न बकती है कि और कुछ। समझ लो कुतिया भूंक रही है। दुधार गायकी लात भी सही जाती है। आज नौकरी करना छोड़ दें तो सारा गृहस्तीका बोझ मेरे ही सिर पड़ेगा कि और किसीके सिर। धीरज धरे कुछ दिन पड़ी रहो, चार थान गहने हो जायंगे, चार पैसे गांठमें हो जायंगे। इतनी मोटी बात भी नहीं समझती हो, झूठ-मूठ उलझ जाती हो।

चम्पा—मुझसे तो ताने सुनकर चुप नहीं रहा जाता। शरीर-में ज्वाला सी उठने लगती है।

भृगु—उठने दिया करो, उससे किसीके जलनेका डर नहीं है। बस उसकी बातोंका जवाब न दिया करो। इस कान सुना और उस कान उड़ा दिया।

चम्पा—सोनार कंठा कब देगा ?

भृगु—दो तीन दिनमें देनेको कहा है। ऐसे सुन्दर दाने बनाये हैं कि देखकर खुश हो जावोगी। यह देखो······

चम्पा—क्या है ?

भृगु—न दिखाऊंगा—न

चम्पा—मुट्ठी खोलो। यह गिनी कहाँ पाई।? मैं न दूंगी।

भृगु—पानेकी न पूछो, एक असामी रुपये लौटाने आया था। खातेमें २) सैकड़ेका दर लिखा है, मैंने २॥) सैकड़ेके दरसे वसूल किया।

(बाहर चला जाता है)

चम्पा—(मनमें) बुढ़िया सीधी होती तो चैन ही चैन था।

तृतीय अङ्कः

पहला दृश्य

(स्थान—कंचनसिंहका कमरा, समय—दोपहर, खसकी टट्टी लगी हुई है, कंचनसिंह सीतलपाटी बिछाकर लेटे हुए हैं, पंखा चल रहा है।)

कंचन—(आप ही आप) भाई साहबमें तो यह आदत कभी नहीं थी। इसमें अब लेशमात्र भी सन्देह नहीं है कि वह कोई अत्यन्त रूपवती स्त्री है। मैंने उसे छज्जेपरसे झाँकते देखा था, भाई साहब आड़में छिप गये थे। अगर कुछ रहस्यकी बात न होती तो वह कदापि न छिपते, बल्कि मुझसे पूछते कहाँ जा रहे हो। मेरा माथा उसी वक्त ठनका था जब मैंने उन्हें नित्य प्रति बिना किसी कोचवानके अपने हाथों टमटम हाँकते सैर करते जाते देखा। उनकी इस भाँति घूमनेकी आदत न थी। आजकल कभी न क्लब जाते हैं न और किसीसे मिलते-जुलते हैं। पत्रोंसे भी रुचि नहीं जान पड़ती। सप्ताहमें एक न एक लेख अवश्य लिख लेते थे, पर इधर महीनोंसे एक पंक्ति भी कहीं नहीं लिखी। यह बुरा हुआ। जिस प्रकार बंधा हुआ पानी खुलता है तो

बड़े बेगसे बहने लगता है अथवा रुका हुआ वायु चलता है तो बहुत प्रचंड हो जाता है, उसी प्रकार संयमी पुरुष जब विचलित होता है तो वह अविचारकी चरम सीमातक चला जाता है, न किसीकी सुनता है, न किसीके रोके रुकता है, न परिणाम सोचता है। उसकी विवेक और बुद्धिपर परदासा पड़ जाता है। कदाचित् भाई साहबको मालूम हो गया है कि मैंने उन्हें वहाँ देख लिया। इसीलिये वह मुझसे माल खरीदनेके लिये पंजाब जानेको कहते हैं। मुझे कुछ दिनोंके लिये हटा देना चाहते हैं। यही बात है, नहीं तो वह माल-वालकी इतनी चिन्ता कभी नहीं किया करते थे। मुझे तो अब कुशल नहीं दीखती। भाभीको कहीं खबर मिल गई तो वह प्राण ही दे देंगी। बड़े आश्चर्यकी बात है कि ऐसे-ऐसे विद्वान गम्भीर पुरुष भी इस मायाजालमें फंस जाते हैं। अगर मैंने अपनी आंखों न देखा होता तो भाई साहबके सम्बन्धमें कभी इस दुष्कल्पनाका विश्वास न आता।

(*ज्ञानीका प्रवेश*)

ज्ञानी—बाबूजी, आज सोये नहीं ?

कंचन—नहीं, कुछ हिसाब-किताब देख रहा था। भाई साहबने लगान न मुआफ कर दिया होता तो अबकी मैं ठाकुर-द्वारेमें जरूर हाथ लगा देता। असामियोंसे कुछ रुपये वसूल

होते लेकिन उनपर दावा नहीं करने दिया।

ज्ञानी—वह तो मुझसे कहते थे दो चार महीनोंके लिये पहाड़ोंकी सैर करने जाऊंगा। डाक्टरने कहा है यहाँ रहोगे तो तुम्हारा स्वास्थ्य बिगड़ जायगा। आजकल कुछ दुर्बल भी तो हो गये हैं। बाबूजी एक बात पूछूं बताओगे? तुम्हें भी इनके स्वभावमें कुछ अन्तर दिखाई देता है? मुझे तो बहुत अन्तर मालूम होता है। वह कभी इतने नम्र और सरल नहीं थे। अब वह एक-एक बात सावधान-होकर कहते हैं कि कहीं मुझे बुरा न लगे। उनके सामने जाती हूँ तो मुझे देखते ही मानों नींदसे चौंक पड़ते हैं और इस भांति हंसकर स्वागत करते हैं जैसे कोई मेहमान आया हो। मेरा मुंह जोहा करते हैं कि कोई बात कहे और उसे पूरी कर दूँ। जैसे घरके लोग बीमारका मन रखनेका यत्न करते हैं या जैसे किसी शोक-पीड़ित मनुष्यके साथ लोगोंका व्यवहार सदय हो जाता है। उसी प्रकार आजकल पके हुए फोड़ेकी तरह मुझे ठेससे बचाया जाता है। इसका रहस्य कुछ मेरी समझमें नहीं आता। खेद तो मुझे यह है कि इन सारी बातोंमें दिखाव और बनावटकी बू आती है। सच्चा क्रोध उतना हृदय भेदी नहीं होता जितना कृत्रिम प्रेम।

कंचन—(मनमें) वही बात है। किसी बच्चेसे हम अशर्फी ले लेते हैं कि खो न दे तो उसे मिठाइयोंसे फुसला देते हैं। भाई

साहबने भाभीसे अपना प्रेम-रत्न छीन लिया है और बनावटी स्नेह और प्रणयसे इनको तस्कीन देना चाहते हैं। इस प्रेम-मूर्तिका अब परमात्मा ही मालिक है। (प्रगट) मैंने तो इधर ध्यान नहीं दिया। स्त्रियाँ सूक्ष्मदर्शी होती हैं......।

(खिदमतगार आता है। ज्ञानी चली जाती है)

कंचन—क्या काम है ?

खिदमतगार—यह सरकारी लिफाफा आया है। चपरासी बाहर खड़ा है।

कंचन—(रसीदकी बहीपर हस्ताक्षर करके) यह सिपाही को दो।

(खिदमतगार चला जाता है)

अच्छा, गाँववालोंने मिलकर हलधरको छुड़ा लिया। अच्छा ही हुआ, मुझे उससे कोई दुश्मनी तो थी नहीं, मेरे रुपये वसूल हो गये। यह कार्रवाई न की जाती तो कभी रुपये न वसूल होते। इसीसे लोग कहते हैं कि नीचोंको जबतक खूब न दबावो उनकी गाँठ नहीं खुलती। औरोंपर भी इसी तरह दावा कर दिया गया होता तो बातकी बातमें सब रुपये निकल आते। और कुछ न होता तो ठाकुरद्वारेमें हाथ तो लगा ही देता। भाई साहबको समझाना तो मेरा काम नहीं, उनके सामने रोब, शर्म और संकोचसे मेरी जबान ही न खुलेगी। उसीके पास चलू,

उसके रङ्ग-ढङ्ग देखूं, कौन है, क्या चाहती है, क्यों यह जाल फैलाया है। अगर धनके लोभसे यह माया रची है तो जो कुछ उसकी इच्छा हो देकर यहाँसे हटा दूँ। भाई साहबको और समस्त परिवारको सर्वनाशसे बचा लूँ।

(फिर खिदमतगार आता है)

क्या बार बार आते हो? क्या काम है? मेरे पास पेशगी देनेके लिये रुपये नहीं हैं।

खिद०—हजूर रुपये नहीं माँगता। बड़े सरकारने आपको याद किया है।

कंचन—(मनमें) मेरा तो दिल धक धक कर रहा है, न जाने क्यों बुलाते हैं कहीं पूछ न बैठें तुम मेरे पीछे क्यों पड़े हुए हो।

:(उठकर ठाकुर सबलसिंहके कमरेमें जाते हैं।)]

सबल—तुमको एक विशेष कारणसे तकलीफ़ दी है। इधर कुछ दिनोंसे मेरी तबीयत अच्छी नहीं रहती, रातको नींद कम आती है और भोजनसे भी अरुचि हो गई है।

कंचन—आपका भोजन आधा भी नहीं रहा।

सबल—हाँ वह भी जबरदस्ती खाता हूँ। :इसलिये मेरा विचार हो रहा है कि तीन चार महीनोंके लिये मंसूरी चला जाऊं।

कंचन—जलवायुके बदलनेसे कुछ लाभ तो अवश्य होगा।

सबल—तुम्हें रुपयोंका प्रबन्ध करनेमें ज्यादा असुविधा होगी।

कंचन—ऊपर तो केवल ५०००) होंगे। ४२५०) मूलचन्दने दिये हैं, ५००) श्रीरामने और २५०) हलधरने।

सबल—(चौंककर) क्या हलधरने भी रुपये दे दिये ?

कंचन—हां गांववालोंने मदद की होगी।

सबल—तब तो वह छूटकर अपने घर पहुँच गया होगा ?

कंचन—जी हां।

सबल—(कुछ देरतक सोचकर) मेरे सफरकी तैयारीमें कै दिन लगेंगे ?

कंचन—क्या जाना बहुत जरूरी है ? क्यों न यहीं कुछ दिनोंके लिये देहात चले जाइये। लिखने-पढ़नेका काम भी बन्द कर दीजिये।

सबल—डाक्टरोंकी सलाह पहाड़ोंपर जानेकी है। मैं कल किसी वक्त यहांसे मंसूरी चला जाना चाहता हूँ।

कंचन—जैसी इच्छा।

सबल—मेरे साथ किसी नौकर चाकरके जानेकी जरूरत नहीं है। तुम्हारी भाभी चलनेके लिये आग्रह करेंगी। उन्हें समझा देना कि तुम्हारे चलनेसे खर्च बहुत बढ़ जायगा। नौकर,

महरी, मिश्राइन, सभोंको जाना पड़ेगा और इस वक्त इतनी गुंजाइश नहीं।

कंचन—अकेले तो आपको बहुत तकलीफ होगी।

सबल—(खिझकर) क्या संसारमें अकेले कोई यात्रा नहीं करता। अमरीकाके करोरपतितक एक हैंडबैग लेकर भारतकी यात्रापर चल खड़े होते हैं, मेरी कौन गिनती है। मैं उन रइसोंमें नहीं हूं जिनके घरमें चाहे भोजनोंका ठिकाना न हो, जायदाद बिकी जाती हो, पर जूता नौकर ही पहनायेगा, शौचके लिये लोटा लेकर नौकर ही जायगा। यह रियासत नहीं हिमाक़त है।

(*कंचनसिह चले जाते हैं।*)

सबल—(मनमें) वही हुआ जिसकी आशंका थी। आज ही राजेश्वरीसे चलनेको कहूं और कल प्रातःकाल यहाँसे चल दूं। हलधर कहीं आ पड़ा और उसे सन्देह हो गया तो बड़ी मुशकिल होगी। ज्ञानी आसानीसे न मानेगी। उसे देखकर दया आती है। किन्तु आज हृदयको कड़ा करके उसे भी रोकना पड़ेगा।

(*अचलका प्रवेश*)

अचल—दादाजी, आप पहाड़ोंपर जा रहे हैं, मैं भी साथ चलुंगा।

सबल—बेटा, मैं अकेले जा रहा हूँ, तुम्हें तकलीफ होगी।

अचल—इसीलिये तो मैं और चलना चाहता हूँ। मैं चाहता हूं कि खूब तकलीफ हो, सब काम अपने हाथों करना पड़े, मोटा खाना मिले और कभी मिले कभी न मिले। तकलीफ उठानेसे आदमीकी हिम्मत मजबूत हो जाती है, वह निर्भय हो जाता है, जरा-जरा सी बातोंसे घबराता नहीं। मुझे जरूर ले चलिये।

सबल—मैं वहाँ एक जगह थोड़े ही रहूँगा। कभी यहाँ, कभी वहाँ।

अचल—यह तो और भी अच्छा है। तरह तरहकी चीजें, नये नये दृश्य देखनेमें आयेंगे। और मुल्कोंमें तो लड़कोंको सरकारकी तरफसे सैर करनेका मौका दिया जाता है। किताबोंमें भी लिखा है कि बिना देशाटन किये अनुभव नहीं होता, और भूगोल जाननेका तो इसके सिवा कोई अन्य उपाय नहीं है। नक़शों और माडलोंके देखनेसे क्या होता है। मैं इस मौक़ेको न जाने दूंगा।

सबल—बेटा, तुम कभी २ व्यर्थमें जिद करने लगते हो। मैंने कह दिया कि मैं इस वक्त अकेले ही जाना चाहता हूँ, यहां तक कि किसी नौकरको भी साथ नहीं ले जाता। अगले वर्षमें तुम्हें इतनी सैरें करा दूँगा कि तुम ऊब जावोगे।

(अचल उदास होकर चला जाता है ।)

अब सफ़रकी तैयारी करूं । मुख़तसर ही सामान ले जाना मुनासिब होगा । रुपये हों तो जंगलमें भी मंगल हो सकता है । आज शामको राजेश्वरीसे भी चलनेकी तैयारी करनेको कह दूंगा, प्रातःकाल हम दोनों यहांसे चले जायँ । प्रेमपाशमें फंसकर देखूं, नीतिका, आत्माका, धर्मका कितना बलिदान करना पड़ता है, और किस-किस बनकी पत्तियां तोड़नी पड़ती हैं ।

दूसरा दृश्य

(स्थान—राजेश्वरीका सजा हुआ कमरा, समय—दोपहर ।)

लौंडी—बाईजी, कोई नीचे पुकार रहा है।

राजेश्वरी—(नींदसे चौंककर) क्या कहा आग लगी है ?

लौंडी—नौज; कोई आदमी नीचे पुकार रहा है।

राजे०—पूछा नहीं कौन है, क्या कहता है, किस मतलबसे आया है। संदेसा लेकर दौड़ चली, कैसे मजेका सपना देख रही थी।

लौंडी—ठाकुर साहबने तो कह दिया है कि कोई कितना ही पुकारे, कोई हो, किवाड़ न खोलना, न कुछ जवाब देना। इसीलिये मैंने कुछ पूछपाछ नहीं की।

राजे०—मैं कहती हूँ जाकर पूछो कौन हो ?

(महरी जाती है और एक क्षणमें लौट आती है ।)

लौंडी—अरे बाईजी बड़ा गजब हो गया। यह तो ठाकुर साहबके छोटे भाई बाबू कंचनसिंह हैं। अब क्या होगा ?

राजे०—होगा क्या, जाकर बुला ला।

लौंडी—ठाकुर साहब सुनेंगे तो मेरे सिरका एक बाल भी न छोड़ेंगे।

राजे०—तो ठाकुर साहबको सुनाने कौन जायगा। अब यह तो नहीं हो सकता कि उनके भाई द्वारपर आयें और मैं उनको बात तक न पूछूं। वह अपने मनमें क्या कहेंगे! जाकर बुला ला और दीवानखानेमें बिठला। मैं आती हूँ।

लौंडी—किसीने पूछा तो मैं कह दूँगी, अपने बाल न नुचवाऊंगी।

राजे०—तेरा सिर देखनेसे तो यही मालूम होता है कि एक नहीं कई बार बाल नुच चुके हैं। मेरी खातिरसे एक बार और नुचवा लेना। यह लो इससे बालोंके बढ़नेकी दवा ले लेना।

(*लौंडी चली जाती है* ।)

राजे०—(मनमें) इनके आनेका क्या प्रयोजन है। कहीं उन्होंने जाकर इन्हें कुछ कहा सुना तो नहीं? आप ही मालूम हो जायगा। अब मेरा दांव आया है। ईश्वर मेरे सहायक हैं। मैं किसी भांति आप ही इनसे मिलना चाहती थी। वह स्वयं आ गये। (आइनेमें सूरत देखकर) इस वक्त किसी बनाव-चुनावकी जरूरत नहीं। यह अलसाई मतवाली आंखें सोलहों सिंगारके बराबर हैं। क्या जानें किस स्वभावका आदमी है। अभी तक विवाह नहीं किया है, पूजापाठ, पोथी पत्रेमें रात दिन लिप्त

रहता है। इसपर मन्त्र चलना कठिन है। कठिन हो सकता है पर असाध्य नहीं है। मैं तो कहती हूँ कठिन भी नहीं है। आदमी कुछ खोकर तब सीखता है। जिसने खोया ही नहीं वह क्या सीखेगा। मैं सचमुच बड़ी अभागिन हूँ। भगवानने यह रूप दिया था तो ऐसे पुरुषका संग क्यों दिया जो बिलकुल दूसरोंकी मुट्ठीमें था! यह उसीका फल है कि जिन सज्जनोंकी मुझे पूजा करनी चाहिये थी, आज मैं उनके ख़ूनकी प्यासी हो रही हूँ। क्यों न ख़ूनकी प्यासी होऊँ? देवता ही क्यों न हो जब अपना सर्वनाश कर दे तो उसकी पूजा क्यों करूं। यह दयावान हैं, धर्मात्मा हैं, ग़रीबोंका हित करते हैं पर मेरा जीवन तो उन्होंने नष्ट कर दिया। दीन दुनिया कहींका न रखा। मेरे पीछे एक बिचारे भोले भाले, सीधे सादे आदमीके प्राणोंके घातक हो गये। कितने सुखसे जीवन कटता था। अपने घरमें रानी बनी हुई थी। मोटा खाती थी, मोटा पहनती थी पर गांव भरमें मरजाद तो थी। नहीं तो यहां इस तरह मुंहमें कालिख लगाये चोरोंकी तरह पड़ी हूं जैसे कोई कैदी काल-कोठरीमें बन्द हो। आगये कंचन सिंह, चलूं। (*दीवानखानेमें आकर*) देवरजीको प्रणाम करती हूँ।

कंचन—(चकित होकर) (मनमें) मैं न जानता था कि यह ऐसी सुन्दरी रमणी है। रम्भाके चित्रसे कितनी मिलती जुलती

है! तभी तो भाई साहब लोट पोट हो गये। वाणी कितनी मधुर है। (प्रगट) मैं बिना आज्ञा ही चला आया, इसके लिये क्षमा मांगता हूँ। सुना है भाई साहबका कड़ा हुक्म है कि यहां कोई न आने पावे।

राजे०—आपका घर है, आपके लिये क्या रोक टोक। मेरे लिये तो जैसे आपके भाई साहब वैसे आप। मेरे धन्य भाग कि आप जैसे भक्त पुरुषके दर्शन हुए।

कंचन—(असमञ्जसमें पड़कर, मनमें) मैंने काम जितना सहज समझा था उससे कहीं कठिन निकला। सौन्दर्य्य कदाचित् बुद्धिशक्तियोंको हर लेता है। जितनी बातें सोचकर चला था वह सब भूल गईं, जैसे कोई नया पट्ठा अखाड़ेमें उतरते ही अपने सारे दांव पेंच भूल जाय। कैसे बात छेड़ूँ? (प्रगट) आपको यह तो मालूम ही होगा कि भाई साहब आपके साथ कहीं बाहर जाना चाहते हैं?

राजेश्वरी—(मुसकिरा कर) जी हां यह निश्चय हो चुका है।

कंचन—अब किसी तरह नहीं रुक सकता?

राजे०—हम दोनोंमेंसे कोई एक बीमार हो जाय तो रुक जाय।

कंचन—ईश्वर न करें, ईश्वर न करें, पर मेरा आशय यह

था कि आप भाई साहबको रोकें तो अच्छा हो। वह एक बार घरसे जाकर फिर मुशकिलसे लौटेंगे। भाभीजीको जबसे यह बात मालूम हुई है वह बार-बार भाई साहबके साथ चलनेपर ज़िद् कर रही हैं। अगर भैया छिपकर चले गये तो भाभीके प्राणोंहीपर बन जायगी।

राजे०—इसका तो मुझे भी भय है क्योंकि मैंने सुना है ज्ञानीदेवी उनके बिना एक छन भी नहीं रह सकतीं। पर मैं भी तो आपके भैयाहीके हुक्मकी चेरी हूँ, जो कुछ वह कहेंगे उसे मानना पड़ेगा। मैं अपना देश, कुल, घरबार छोड़कर केवल उनके प्रेमके सहारे यहां आई हूं। मेरा यहाँ कौन है? उस प्रेमका सुख उठानेसे मैं अपनेको कैसे रोकूँ। यह तो ऐसा ही होगा कि कोई भोजन बनाकर भूखों तड़पा करे, घर छाकर धूपमें जलता रहे। मैं ज्ञानीदेवीसे डाह नहीं करती, इतनी ओछी नहीं हूं कि उनसे बराबरी करूँ। लेकिन मैंने जो यह लोकलाज, कुल मरजाद तजा है यह किस लिये?

कंचन—इसका मेरे पास क्या जवाब है।

राजे०—जवाब क्यों नहीं है पर आप देना नहीं चाहते।

कंचन—दोनों एक ही बात है, भय केवल आपके नाराज होनेका है।

राजे०—इससे आप निश्चिन्त रहिये, जो प्रेमकी आँच सह

सकता है, उसके लिये और सभी बातें सहज हो जाती हैं।

कंचन—मैं इसके सिवा और कुछ न कहूँगा कि आप यहाँसे न जायँ।

राजे०—(कंचनकी ओर तिर्छी चितवनसे ताकते हुए) यह आपकी इच्छा है ?

कंचन—हाँ यह मेरी प्रार्थना है। (मनमें) दिल नहीं मानता, कहीं मुँहसे कोई बात निकल न पड़े।

राजे०—चाहे वह रूठ ही जायँ ?

कंचन—नहीं, अपने कौशलसे उन्हें राजी कर लो।

राजे०—(मुसकिराकर) मुझमें यह गुण नहीं है।

कंचन—रमणियोंमें यह गुण बिल्लीके नखोंकी भांति छिपा रहता है। जब चाहें उसे काममें ला सकती हैं।

राजे०—उनसे आपके आनेकी चरचा तो करनी ही होगी।

कंचन—नहीं, हरगिज नहीं। मैं तुम्हें ईश्वरकी कसम दिलाता हूं भूलकर भी उनसे यह जिक्र न करना, नहीं तो मैं जहर खा लूंगा, फिर तुम्हें मुँह न दिखाऊँगा।

राजे०—(हंसकर) ऐसी धमकियोंका तो प्रेम-वार्तामें कुछ अर्थ नहीं होता, लेकिन मैं आपको उन आदमियोंमें नहीं समझती। मैं आपसे कहना नहीं चाहती थी पर बात पड़नेपर कहना ही पड़ा कि मैं आपके सरल स्वभाव और आपके निष्क-

पट बातोंपर मोहित हो गई हूँ। आपके लिये मैं सब कष्ट सहने-को तैयार हूँ। पर आपसे यही बिनती है कि मुझपर कृपादृष्टि बनाये रखियेगा और कभी २ दर्शन देते रहियेगा।

(राजेश्वरी गाती है)

क्या सो रहा !मुसाफिर बीती है रैन सारी।
अब जागके चलनकी करले सभी तयारी ॥
तुझको है दूर जाना नहीं पास कुछ खजाना,
आगे नहीं ठिकाना होवे बड़ी खुआरी ॥टेव॥
पूँजी सबी गमाईं कुछ ना करी कमाई,
क्या लेके घरको जाई करजा किया है भारी।
क्या सो रहा० ॥

(कंचन चला जाता है)

तीसरा दृश्य

—(❀)—

(स्थान—सबलसिंहका घर, सबलसिंह बगीचेमें हौज़के किनारे मसहरीके अन्दर लेटे हुए हैं। समय-११ बजे रात।)

सबल (आपही आप) आज मुझे उसके बर्ताव और बातोंमें कुछ रूखाईसी मालूम होती थी। मेरा बहम नहीं है, मैंने बहुत विचारसे देखा। मैं घण्टेभरतक बैठा, चलनेके लिये जोर देता रहा पर उसने एक बार नहीं करके फिर हां न की। मेरी तरफ एक-बार भी उन प्रेमकी चितवनोंसे नहीं देखा जो मुझे मस्त कर देती हैं। कुछ गुम सुम सी बैठी रही। कितना कहा कि तुम्हारे न चलनेसे घोर अनर्थ होगा, यात्राकी सब तैयारियां कर चुका हूं, लोग मनमें क्या कहेंगे कि पहाड़ोंकी सैरका इतना ताव था, और इतना जल्द ठंढा हो गया, लेकिन मेरी सारी अनुनय विनय एक तरफ और उसकी एक 'नहीं' एक तरफ। इसका कारण क्या है? किसीने बहका तो नहीं दिया। हां, एक बात याद आई। उसके इस कथनका क्या आशय हो सकता है कि हम चाहे जहां जायं टोहियों और गोयन्दोंसे बच न सकेंगे। क्या

यहां टोहिये आगये। इसमें कंचनकी कुछ कारस्तानी मालूम होती है। टोहियेपनकी आदत उन्हींमें है। उनका उस दिन उचक्कोंकी भांति इधर-उधर, ऊपर नीचे ताकते जाना निरर्थक नहीं था। इन्होंने कल मुझे रोकनेकी कितनी चेष्टा की थी। ज्ञानीकी निगाह भी कुछ बदली हुई देखता हूँ। यह सारी आग कंचनकी लगाई हुई है। तो क्या कंचन वहां गया था? राजेश्वरीके सम्मुख जानेकी इसे क्योंकर हिम्मत हुई। किसी महफ़िलमें तो आज तक गया नहीं। बचपनहीसे औरतोंको देखकर झेंपता है। वहां कैसे गया। जाने क्योंकर पाया। मैंने तो राजेश्वरीसे सख्त ताकीद कर दी थी कि कोई भी यहां न आने पाये। उसने मेरी ताकीदकी कुछ परवा न की। दोनों नौकरानियां भी मिल गईं। यहां तक कि राजेश्वरीने इनके जानेकी कुछ चर्चा ही नहीं की। मुझसे बात छिपाई, पेट रखा। ईश्वर, मुझे यह किन पापोंका दंड मिल रहा है।

अगर कंचन मेरे रास्तेमें पड़ते हैं तो पड़ें पर परिणाम बुरा होगा। अत्यन्त भीषण। मैं जितना ही नर्म हूँ उतना ही कठोर भी हो सकता हूँ। मैं आजसे ताकमें हूँ। अगर निश्चय हो गया कि इसमें कंचनका कुछ हाथ है तो मैं उसके खूनका प्यासा हो जाऊँगा। मैंने कभी उसे कड़ी निगाहसे नहीं देखा। पर उसकी इतनी जुर्अत! अभी यह खून बिलकुल ठंढा नहीं हुआ है, उस

जोशका कुछ हिस्सा बाकी है जो कटे हुए सिरों और तड़पती हुई लाशोंका दृश्य देखकर मतवाला हो जाता था। इन बाहोंमें अभी दम है, यह अब भी तलवार और भालेका वार कर सकती हैं। मैं अबोध बालक नहीं हूं कि मुझे बुरे रास्तेसे बचाया जाय, मेरी रक्षा की जाय। मैं अपना मुख़तार हूँ, जो चाहूँ करूँ। किसीको चाहे वह मेरा भाई ही क्यों न हो, मेरी भलाई और हितकामनाका ढोंग रचनेकी जरूरत नहीं। अगर बात यहींतक है तो ग़नीमत है, लेकिन इसके आगे बढ़ गई है तो फिर इस कुलकी खैरियत नहीं। इसका सर्वनाश हो जायगा और मेरे ही हाथों। कंचनको एक बार सचेत कर देना चाहिये।

(ज्ञानी आती है)

ज्ञानी—क्या अभीतक सोये नहीं? बारह तो बज गये होंगे।

सबल—नींदको बुला रहा हूं पर उसका स्वभाव तुम्हारा जैसा है। आप ही आप आती है पर बुलानेसे मान करने लगती है। तुम्हें नींद क्यों नहीं आई?

ज्ञानी—चिन्ताकी नींदसे बिगाड़ है।

सबल—किस बातकी चिन्ता है?

ज्ञानी—एक बात है कि कहूं। चारों तरफ़ चिन्ताएं ही चिन्ताएं हैं। इस वक्त तुम्हारी यात्राकी चिन्ता है। तबीयत

अच्छी नहीं, अकेले जाने कहते हो। परदेसवाली बात है, न जाने कैसी पड़े कैसी न पड़े। इससे तो यही अच्छा था कि यहीं इलाज करवाते।

सबल—(क्यों न इसे खुश कर दूँ जब जरा सा बात फेर देनेसे काम निकल सकता है) इस जरा सी बातके लिये इतनी चिन्ता करनेकी क्या जरूरत ?

ज्ञानी—तुम्हारे लिये जरा सी हो पर मुझे तो असूझ मालूम होती है।

सबल—अच्छा तो लो, न जाऊँगा।

ज्ञानी—मेरी कसम ?

सलल—सत्य कहता हूं। जब इससे तुम्हें इतना कष्ट हो रहा है तो न जाऊँगा।

ज्ञानी—मैं इस अनुग्रहको भी न भूलूंगी। आपने मुझे उबार लिया नहीं तो न जाने मेरी क्या दशा होती। अब मुझे कुछ दंड भी दीजिये। मैंने आपकी आज्ञाका उल्लंघन किया है और उसका कठिन दंड चाहती हूँ।

सबल—मुझे तुमसे इसकी शंका ही नहीं हो सकती।

ज्ञानी—पर वह अपराध इतना बड़ा है कि आप उसे क्षमा नहीं कर सकते।

सबल—(कुतूहलसे) क्या बात है सुनूं ?

ज्ञानी—मैं कल आपके मना करनेपर भी स्वामी चेतनदासके दर्शनोंको चली गई थी।

सबल—अकेले ?

ज्ञानी—गुलाबी साथ थी।

सबल—(मनमें) क्या करे बिचारी किसी तरह मन तो बहलाये। मैंने एक तरह इससे मिलना ही छोड़ दिया। बैठे २ जी ऊब गया होगा। मेरी आज्ञा ऐसी कौन महत्वकी वस्तु है। उब नौकर चाकर जब चाहते हैं उसे भंग कर देते हैं और मैं उनका कुछ नहीं कर सकता तो इसपर क्यों गर्म पड़ूं। मैं खुली आंखों धर्म और नीतिको भङ्ग कर रहूंगा, ईश्वरीय आज्ञासे मुँह मोड़ रहा हूँ तो मुझे कोई अधिकार नहीं कि इसके साथ जरा सी बातके लिये सख्ती करूं। (प्रकट) यह कोई अपराध नहीं, और न मेरी आज्ञा इतनी अटल है कि भङ्ग ही न की जाय। अगर तुम इसे अपराध समझती हो तो मैं इसे सहर्ष क्षमा करता हूँ।

ज्ञानी—स्वामी, आपके बर्तावमें आजकल क्यों इतना अन्तर हो गया है। आपने क्यों मुझे बन्धनोंसे मुक्त कर दिया है, मुझपर पहलेकी भांति शासन क्यों नहीं करते ? नाराज क्यों नहीं होते, कटु शब्द क्यों नहीं कहते, पहलेकी भांति रूठते क्यों नहीं, डांटते क्यों नहीं। आपकी यह सहिष्णुता देखकर मेरे अबोध

मनमें भांति भांतिकी शङ्काएं उठने लगती हैं कि यह प्रेम-बन्धन का ढीलापन न हो।

सबल—नहीं प्रिये, यह बात नहीं है, देश-देशान्तरोंके पत्र पत्रिकाओंको देखता हूँ तो वहाँकी स्त्रियोंकी स्वाधीनताके सामने यहांका कठोर शासन कुछ अच्छा नहीं लगता। अब स्त्रियाँ कौन्सिलोंमें जा सकती हैं, वकालत कर सकती हैं, यहांतक कि भारतमें भी स्त्रियोंको अन्यायके बन्धनोंसे मुक्त किया जा रहा है, तो क्या मैं ही सबसे गया बीता हूँ कि वही पुरानी लकीर पीटे जाऊँ।

ज्ञानी—मुझे तो उस राजनैतिक स्वाधीनताके सामने प्रेम बन्धन कहीं सुखकर जान पड़ता है। मैं वह स्वाधीनता नहीं चाहती।

सबल—(मनमें) भगवन्, इस अपार प्रेमका मैंने कितना घोर अपमान किया है? इस सरलहृदयाके साथ मैंने कितनी अनीतिकी है? आंखोंमें आंसू क्यों भरे आते हैं? मुझ जैसा कुटिल मनुष्य इस देवीके योग्य नहीं था। (प्रकट) प्रिये, तुम मेरी ओरसे लेशमात्र भी शङ्का न करो। मैं सदैव तुम्हारा हूँ और रहूंगा। इस समय गाना सुननेका जी चाहता है। वही अपना प्यारा गीत गाकर मुझे सुना दो।

ज्ञानी (सरोद लाकर सबलसिंहको दे देती है) गाने

लगती है—

अब तो मेरा राम नाम दूसरा न कोई ।

माता छोड़ी पिता छोड़े छोड़े सगा सोई,

सन्तन सङ्ग बैठि बैठि लोक लाज खोई ।

अब तो० ॥

चतुर्थ दृश्य

——o——

(स्थान—गंगातट, बरगदके घने वृक्षके नीचे तीन चार आदमी लाठिया और तलवारें लिये बैठे हैं, समय—१० बजे रात।)

एक डाकू—१० बजे और अभीतक लौटी नहीं।

दूसरा—तुम उतावले क्यों हो जाते हो। जितनी ही देरमें लौटेगी उतना ही सन्नाटा होगा, अभी इक्के-दुक्के रास्ता चल रहा है।

तीसरा—इसके बदनपर कोई पांच हजारके गहने तो होंगे ?

चौथा—सबलसिंह कोई छोटा आदमी नहीं है। उसकी घरवाली बन ठनकर निकलेगी तो १० हजारसे कमका माल नहीं।

पहला—यह शिकार आज हाथ आ जाय तो कुछ दिनों चैन-से बैठना नसीब हो। रोज रोज रातरात भर घातमें बैठे रहना अच्छा नहीं लगता। यह सब कुछ करके भी शरीरको आराम न मिला तो बात ही क्या रही।

दूसरा—भाग्यमें आराम बदा होता तो यह कुकरम न करने पड़ते। कहीं सेठोंकी तरह गद्दी मसनद लगाये बैठे होते। हमें चाहे कोई खजाना ही मिल जाय पर आराम नहीं मिल सकता।

तीसरा—कुकरम क्या हमीं करते हैं, यही कुकरम तो संसार कर रहा है। सेठजी रोजगारके नामसे डाका मारते हैं, अमले घूसके नामसे डाका मारते हैं, वकील मेहनतानाके नामसे डाका मारता है। पर उन डकैतोंके महल खड़े हैं, हवा-गाड़ियोंपर सैर करते फिरते हैं, पेचवान लगाये मखमली गद्दियोंपर पड़े रहते हैं, सब उनका आदर करते हैं, सरकार उन्हें बड़ी २ पदवियां देती है। तो हमीं लोगोंपर विधाताकी निगाह क्यों इतनी कड़ी रहती है ?

चौथा—काम करनेका ढङ्ग है। वह लोग पढ़े लिखे हैं इस-लिये हमसे चतुर हैं। कुकरम भी करते हैं और मौज भी उड़ाते हैं। वही पत्थर मन्दिरमें पुजता है और वही नालियोंमें लगाया जाता है।

पहला—चुप, कोई आ रहा है।

(हलधरका प्रवेश, गाता है।)

सात सखी पनघट पर आईं कर सोलह सिंगार
अपना दुख रोने लगीं, जो कुछ बदा लिलार।
पहली सखी बोली सुनो चार बहनों मेरा पिया सराबी है,

कफ़नको कौड़ी पास न रखता दिलका बड़ा नवाबी है।
जो कुछ पाता सभी उड़ाता घरकी अजब खराबी है।
लोटा थाली गिरवी रख दी, फिरता लिये रिकाबी है।
बात बातपर आंख बदलता, इतना बड़ा मिजाजी है।
एक हाथमें दोना कुल्हड़, दूजे बोतल गुलाबी है।

पहला डाकू—कौन है, खड़ा।

हलधर—तुम तो ऐसा डपट रहे हो जैसे मैं कोई चोर हूँ। कहो क्या कहते हो?

दूसरा डाकू—(साथियोंसे) जवान तो बड़ा गठीला और जीवटका है। (हलधरसे) किधर चले? घर कहां है?

हलधर—यह सब आल्हा पूछकर क्या करोगे? अपना मतलब कहो।

तीसरा डाकू—हम पुलिसके आदमी हैं, बिना तलासी लिये किसीको जाने नहीं देते।

हलधर—(चौकन्ना होकर) यहां क्या धरा है जो तलाशीको धमकाते हो। धनके नाते यही लाठी है और इसे मैं बिना दस पांच सिर फोड़े दे नहीं सकता।

चौथा—तुम समझ गये हम लोग कौन हैं या नहीं?

हलधर—ऐसा क्या निरा बुद्धू ही समझ लिया है।

चौथा—तो गांठमें जो कुछ हो दे दो, नाहक रार क्यों

मचाते हो ?

हलधर—तुम भी निरे गंवार हो। चीलके घोंसलेमें माँस ढूंढ़ते हो।

पहला—यारो संभलकर, पालकी आ रही है।

चौथा—बस टूट पड़ो जिसमें कहार भाग खड़े हों।

(ज्ञानीकी पालकी आती है। चारों डाकू तलवारें लिये कहारोंपर जा पड़ते हैं। कहार पालकी पटककर भाग खड़े होते हैं। गुलाबी बरगदकी आड़में छिप जाती है।)

एक डाकू—ठकुराइन, जानकी खैर चाहती हो तो सब गहने चुपकेसे उतारके रख दो। अगर गुल मचाया या चिल्लाई तो हमें जबरदस्ती तुम्हारा मुँह बन्द करना पड़ेगा, और हम तुम्हारे ऊपर हाथ नहीं उठाना चाहते।

दूसरा--सोचती क्या हो, यहाँ ठाकुर सबलसिंह नहीं बैठे हैं जो बन्दूक लिये आते हों। चटपट उतारो।

तीसरा—(पालकीका परदा उठाकर) यह यों न मानेगी ठकुराइन है न, हाथ पकड़कर बाँध दो, उतार लो सब गहने।

(हलधर लपककर उस डाकूपर लाठी चलाता है और वह हाय मारकर बेहोश हो जाता है। तीनों बाकी डाकू उसपर टूट पड़ते हैं। लाठियाँ चलने लगती हैं।)

हलधर—वह मारा, एक और गिरा।

एक डाकू—भाई तुम जीते हम हारे, शिकार क्यों भगाये देते हो। मालमें आधा तुम्हारा।

हलधर—तुम हत्यारे हो, अबला स्त्रियोंपर हाथ उठाते हो। मैं अब तुम्हें जीता न छोड़ूंगा।

डाकू—यार १० हजारसे कमका माल नहीं है। ऐसा अवसर फिर न मिलेगा। थानेदारको १००) २००) देकर टिर्का देंगे। बाकी सारा अपना है।

हलधर—(लाठी तानकर) भाग जाओ नहीं तो हड्डी तोड़के रख दूंगा।

(दोनों डाकू भाग जाते हैं। हलधर कहारोंको बुलाता है जो एक मन्दिरमें छिपे बैठे हैं। पालकी उठती है।)

ज्ञानी—भैया आज तुमने मेरे साथ जो उपकार किया है इसका फल तुम्हें ईश्वर देंगे, लेकिन मेरी इतनी बिनती है कि मेरे घरतक चलो। तुम देवता हो, तुम्हारी पूजा करूँगी।

हलधर—रानीजी यह तुम्हारी भूल है। मैं देवता हूँ, न दैत्य। मैं भी घातक हूं। पर मैं अबला औरतोंका घातक नहीं, हत्यारों हीका घातक हूं। जो धनके बलसे गरीबोंको लूटते हैं, उनकी इज्जत बिगाड़ते हैं, उनके घरको भूतोंका डेरा बना देते हैं। जाओ, अबसे गरीबोंपर दया रखना, नालिस, कुड़की, जेहल,

यह सब मत होने देना।

(*नदीकी ओर चला जाता है। गाता है*)

दूजी सखी बोली सुनो सखियो मेरा पिया जुआरी है।
रात २ भर फड़पर रहता, बिगड़ी दसा हमारी है।
घर और बार दांवपर हारा अब चोरीकी बारी है।
गहने कपड़ेको क्या रोऊँ पेटकी रोटी भारी है।
कौड़ी ओढ़ना कौड़ी बिछौना कौड़ी सौत हमारी है।

ज्ञानी—(गुलाबीसे) आज भगवानने बचा लिया नहीं तो गहने भी जाते और जानकी भी कुशल न थी।

गुलाबी—यह जरूर कोई देवता है, नहीं तो दूसरोंके पीछे कौन अपनी जान जोखिममें डालता है।

(*पटाक्षेप*)

पांचवां दृश्य

(स्थान-मधुबन, समय-९ बजे रात, बादल घिरा हुआ है, एक वृक्षके नीचे बाबा चेतनदास मृगछालेपर बैठे हुए हैं, फत्तू, मंगरू, हरदास आदि धूनीसे ज़रा हटकर बैठे हैं ।)

चेतनदास—संसार कपटमय है, किसी प्राणीका विश्वास नहीं । जो बड़े ज्ञानी, बड़े त्यागी, बड़े धर्मात्मा प्राणी हैं, उनकी चित्तवृत्तिको ध्यानसे देखो तो स्वार्थसे भरा पावोगे । तुम्हारा जमींदार धर्मात्मा समझा जाता है, सभी उसके यश और कीर्तिकी प्रशंसा करते हैं । पर मैं कहता हूँ ऐसा अत्याचारी, कपटी, धूर्त, भ्रष्टाचरण मनुष्य संसारमें न होगा ।

मंगरू—बाबा आप महात्मा हैं, आपकी जुबान कौन पकड़े, पर हमारे ठाकुर सचमुच देवता हैं । उनके राजमें हमको जितना सुख है उतना कभी नहीं था ।

हरदास—जेठीकी लगान माफ़ कर दी थी । अब असामियोंको भूसे चारेके लिये बिना व्याजके रुपये दे रहे हैं ।

फत्तू—उनमें और चाहे कोई बुराई हो पर असामियोंपर हमेसा परवरसकी निगाह रखते हैं।

चेतनदास—यही तो उसकी चतुराई है कि अपना स्वार्थ भी सिद्ध कर लेता है और अपकीर्ति भी नहीं होने देता। रुपयेसे, मीठे वचनसे, नम्रतासे लोगोंको वशीभूत कर लेता है।

मंगरू—महाराज आप उनका स्वभाव नहीं जानते जभी ऐसा कहते हैं। हम तो उन्हें सदासे देखते आते हैं। कभी ऐसी नीयत नहीं देखी कि किसीसे एक पैसा बेसी ले लें। कभी किसी तरहकी बेगार नहीं ली, और निगाहका तो ऐसा साफ आदमी कहीं देखा ही नहीं।

हरदास—कभी किसीपर निगाह नहीं डाली।

चेतनदास—भली प्रकार सोचो अभी हालहीमें कोई स्त्री यहाँसे निकल गई है।

फत्तू—(उत्सुक होकर) हाँ महाराज, अभी थोड़े ही दिन हुए।

चेतन—उसके पतिका भी पता नहीं है?

फत्तू—हाँ महाराज वह भी गायब है।

चेतन—स्त्री परम सुन्दरी है?

फत्तू—हां महाराज, रानी मालूम होती है।

चेतन—उसे सबलसिंहने घर डाल लिया है।

फत्तू—घर डाल लिया है ?

मंगरू—झूठ है।

हरदास—विश्वास नहीं आता।

फत्तू—और हलधर कहाँ है ?

चेतन—इधर उधर मारा मारा फिरता है। डकैती करने लगा है। मैंने उसे बहुत खोजा पर भेंट नहीं हुई।

(सलोनी गाती हुई आती है।)

मुझे जोगिन बनाके कहाँ गये रे जोगिया।

फत्तू—सलोनी काकी इधर आओ। राजेश्वरी तो सबलसिंहके घर बैठ गई।

सलोनी—चल झूठे, बिचारीको बदनाम करता है।

मँगरू—ठाकुर साहबमें यह लत है ही नहीं।

सलोनी—मरदोंकी मैं नहीं चलाती, न इनके सुभावका कुछ पता मिलता है, पर कोई भरी गङ्गामें राजेश्वरीको कलंक लगाये तो भी मुझे विश्वास न आयेगा। वह ऐसी औरत नहीं।

फत्तू—विश्वास तो मुझे भी नहीं आता पर यह बाबाजी कह रहे हैं।

सलोनी—आपने आँखों देखा है।

चेतन—नित्य ही देखता हूँ। हाँ कोई दूसरा देखना चाहे

तो कठिनाई होगी। उसके लिये किरायेपर एक मकान लिया गया है, तीन लौंडियाँ सेवा टहलके लिये हैं, ठाकुर प्रातःकाल जाता है और घड़ी भरमें वहाँसे लौट आता है। सन्ध्या समय फिर जाता है और ९-१० बजेतक रहता है। मैं इसका प्रमाण देता हूँ। मैंने सबलसिंहको समझाया पर वह इस समय किसीकी नहीं सुनता। मैं अपनी आंखों यह अत्याचार नहीं देख सकता। मैं सन्यासी हूँ। मेरा धर्म है कि ऐसे अत्याचारियोंका, ऐसे पाखंडियोंका संहार करूं। मैं पृथ्वीको ऐसे रंगे हुए सियारोंसे मुक्त कर देना चाहता हूँ। उसके पास धनका बल है तो हुआ करे। मेरे पास न्याय और धर्मका बल है। इसी बलसे मैं उसको परास्त करूंगा। मुझे आशा थी कि तुम लोगोंसे इस पापीको दण्ड देनेमें मुझे यथेष्ट सहायता मिलेगी। मैं समझता था कि देहातोंमें आत्माभिमानका अभी अन्त नहीं हुआ है, प्राणी इतने पतित नहीं हुए हैं कि अपने ऊपर इतना घोर, पैशाचिक अनर्थ देखकर भी उन्हें उत्तेजना न हो, उनका रक्त न खौलने लगे। पर अब ज्ञात हो रहा है कि सबलने तुम लोगोंको मंत्रमुग्ध कर दिया है। उसके दयाभावने तुम्हारे आत्मसम्मानको कुचल डाला है। दयाका आघात अत्याचारके आघातसे कम प्राणघातक नहीं होता। अत्याचारके आघातसे क्रोध उत्पन्न होता है, जी चाहता है मर जायें या मार डालें।

पर दयाकी चोट सिरको नीचा कर देती है, इससे मनुष्यकी आत्मा और भी निर्बल हो जाती है, उसके अभिमानका अन्त हो जाता है, वह नीच कुटिल, खुशामदी हो जाता है। मैं तुमसे फिर पूछता हूँ तुममें कुछ लज्जाका भाव है या नहीं ?

एक किसान—महाराज अगर आपका ही कहना ठीक हो तो हम क्या कर सकते हैं। ऐसे दयावान पुरुषकी बुराई हमसे न होगी। औरत आप ही खराब हो तो कोई क्या करे ?

मंगरू—बस तुमने मेरे मनकी बात कही।

हरदास—वह सदासे हमारी परवरिस करते आये हैं। हम आज उनसे बागी कैसे हो जायें ?

दूसरा किसान—बागी हो भी जायें तो रहें कहां। हम तो उसकी मुट्ठीमें हैं। जब चाहे हमें पीस डाले । पुस्तैनी अदावत हो जायगी।

मंगरू—अपनी लाज तो ढांकते नहीं बनती, दूसरोंकी लाज कोई क्या ढांकेगा।

हरदास—स्वामीजी आप संन्यासी हैं, आप सब कुछ कर सकते हैं। हम गृहस्थ लोग जमींदारोंसे बिगाड़ करने लगें तो कहीं ठिकाना न लगे।

मगरू—हां और क्या, आप तो अपने तपोबलसे ही जो चाहें कर सकते हैं। अगर आप सराप दे दें तो कुकर्मी

खड़े खड़े भस्म हो जायं।

सलोनी—जा चिल्लू भर पानीमें डूब मर कायर कहींका। हलधर तेरे सगे चाचाका बेटा है। जब तू उसका नहीं तो और किसका होगा। मुंहमें कालिख नहीं लगा लेता ऊपरसे बातें बनाता है। तुझे तो चूड़ियां पहनकर घरमें बैठना चाहिये था। मर्द वह होते हैं, जो अपनी आनपर जान दे देते हैं। तू हिजड़ा है। अब जो फिर मुंह खोला तो लूका लगा दूँगी।

मंगरू—सुनते हो फत्तू काका इनकी बातें। जमींदारसे बैर बढ़ाना इनके समझमें दिल्लगी है। हम पुलिसवालोंसे चाहे न डरें, अमलोंसे चाहे न डरें, महाजनसे चाहे बिगाड़ कर लें, पटवारीसे चाहे कहा-सुनी हो जाय, पर जमींदारसे मुंह लगना अपने लिये गढ़ा खोदना है। महाजन एक नहीं हजारों हैं, अमले आते-जाते रहते हैं, बहुत करेंगे सता लेंगे, लेकिन जमीं-दारसे तो हमारा जन्म-मरनका व्यवहार है। उसके हाथमें तो हमारी रोटियां हैं। उससे ऐंठकर कहां जायँगे? न काकी, तुम चाहे गालियां दो, चाहे ताने मारो पर सबलसिंहसे हम लड़ाई नहीं ठान सकते।

चेतनदास—(मनमें) मनोनीत आशा न पूरी हुई। हल-धरके कुटुम्बियोंमें ऐसा कोई न निकला जो आवेगमें आकर अपमानका बदला लेनेको तैयार हो जाता। सबके सब कायर

निकले। कोई वीर आत्मा निकल आती जो मेरे रास्तेसे इस बाधाको हटा देती, फिर ज्ञानी अपनी हो जाती। यह दोनों उस कामके तो नहीं हैं, पर हिम्मती मालूम होते हैं। बुढ़िया दीन बनी हुई है पर है पोढ़ी नहीं तो इतने घमण्डसे बातें न करती। मियाँ गांठका पूरा तो नहीं पर दिलका दिलेर जान पड़ता है। उत्तेजनामें पड़कर अपना सर्वस्व खो सकता है। अगर इन दोनोंसे कुछ धन मिल जाय तो सबइन्सपेक्टरको मिलाकर, कुछ माया जालसे, कुछ लोभसे, काबूमें कर लूं। कोई मुकदमा खड़ा हो जाय। कुछ न होगा भण्डा तो फूट जायगा। ज्ञानी उन्हें अबकी भांति देवता तो न समझती रहेगी। (प्रगट) इस पापीको दण्ड देनेका मैंने प्रण कर लिया है। ऐसे कायर व्यक्ति भी होते हैं यह मुझे ज्ञात न था। हरीच्छा। अब कोई दूसरी ही युक्ति काममें लानी चाहिये।

सलोनी—महाराज, मैं दीन दुखिया हूँ, कुछ कहना छोटा मुंह बड़ी बात है, पर मैं आपकी मददके लिये ही हर तरह हाजिर हूँ। मेरी जान भी काम आये तो दे सकती हूं।

फत्तू—स्वामी जी मुझसे भी जो हो सकेगा करनेको तैयार हूँ। हाथोंमें तो अब मकदूर नहीं रहा पर और सब तरह हाजिर हूं।

चेतन—मुझे इस पापीका संहार करनेके लिये किसीकी

मददकी आवश्यकता न होती। मैं अपने योग और तपके बलसे एक क्षणमें उसे रसातलको भेज सकता हूँ, पर शास्त्रोंमें ऐसे कामोंके लिये योगबलका व्यवहार करना वर्जित है। इसीसे विवश हूँ। तुम धनसे मेरी कुछ सहायता कर सकते हो ?

सलोनी—फत्तू की ओर सशंक दृष्टिसे ताकते हुए। महाराज थोड़ेसे रुपये धाम करनेको रख छोड़े थे। वह आपकी भेंट कर दूंगी। यह भी तो पुण्य हीका काम है।

फत्तू—काकी तेरे पास कुछ रुपये ऊपर हों तो मुझे उधार दे दे।

सलोनी—चल बातें बनाता है। मेरे पास रुपये कहांसे आयेंगे। कौन घरके आदमी कमाई कर रहे हैं। ४० साल बीत गये बाहरसे एक पैसा भी घरमें नहीं आया।

फ़त्तू—अच्छा नहीं देती है मत दे। अपने तीनों सीसमके पेड़ बेच दूंगा।

चेतन—अच्छा तो मैं जाता हूँ विश्राम करने। कल दिन भरमें तुम लोग प्रबन्ध करके जो कुछ हो सके इस धर्म-कार्य्यके निमित्त दे देना। कल संध्याको मैं अपने आश्रमपर चला जाऊँगा। (प्रस्थान)

——

छठा दृश्य

(स्थान—शहरवाला किरायेका मकान । समय—आधीरात, कंचनसिंह और राजेश्वरी बातें कर रहे हैं ।)

राजे०—देवरजी, मैंने प्रेमके लिये अपना सर्वस्व लगा दिया । पर जिस प्रेमकी आशा थी वह नहीं मयस्सर हुआ । मैंने अपना सर्वस्व दिया है तो उसके लिये सर्वस्व चाहती भी हूँ । मैं ने समझा था एकके बदले आधीपर संतोष कर लूंगी । पर अब देखती हूँ तो जान पड़ता है कि मुझसे भूल हो गई । दूसरी बड़ी भूल यह हुई कि मैंने ज्ञानो देवीकी ओर ध्यान नहीं दिया था । उन्हें कितना दुःख, कितना शोक, कितनी जलन होगी इसका मैंने जरा भी विचार नहीं किया था । आपसे एक बात पूछूं नाराज़ तो न होंगे ।

कंचन—तुम्हारी बातसे मैं नाराज हूँगा !

राजे०—आपने अबतक विवाह क्यों नहीं किया ?

कंचन—इसके कई कारण हैं । मैंने धर्मग्रन्थोंमें पढ़ा था कि गृहस्थ जीवन मनुष्यकी मोक्षप्राप्तिमें बाधक होता है । मैंने

अपना तन, मन, धन सब धर्मपर अर्पण कर दिया था। दान और व्रतको ही मैंने जीवनका उद्देश्य समझ लिया था। उसका मुख्य कारण यह था कि मुझे प्रेमका कुछ अनुभव न था। मैंने उसका सरस स्वाद न पाया था। उसे केवल मायाकी एक कूटलीला समझा करता था, पर अब ज्ञात हो रहा है कि प्रेममें कितना पवित्र आनन्द और कितना स्वर्गीय सुख भरा हुआ है। इस सुखके सामने अब मुझे धर्म, मोक्ष और व्रत कुछ भी नहीं जंचते। उनका सुख भी चिन्तामय है, इसका दुःख भी रसमय।

राजे०—(वक्र नेत्रोंसे ताककर) यह सुख कहां प्राप्त हुआ ?

कंचन—यह न बताऊंगा।

राजे०—(मुसकिरा कर) बताइये चाहे न बताइये, मैं समझ गई। जिस वस्तुको पाकर आप इतने मुग्ध हो गये हैं वह असलमें प्रेम नहीं है। प्रेमकी केवल झलक है। जिस दिन आपको प्रेमरत्न मिलेगा उस दिन आपको इस आनन्दका सच्चा अनुभव होगा।

कंचन—मैं यह रत्न पाने योग्य नहीं हूँ। वह आनन्द मेरे भाग्यमेंही नहीं है।

राजे०—है और मिलेगा। भाग्यसे इतने निराश न हूजिये। आप जिस दिन, जिस घड़ी, जिस पल इच्छा करेंगे यह रत्न

आपको मिल जायगा। वह आपके इच्छाकी बाट जोह रहा है।

कंचन—(आंखोंमें आंसू भरकर) राजेश्वरी, मैं घोर धर्म-संकटमें हूँ। न जाने मेरा क्या अन्त होगा। मुझे इस प्रेमपर अपने प्राण बलिदान करने पड़ेंगे।

राजे०—(मनमें) भगवन्, मैं कैसी अभागिनी हूँ। ऐसे निश्छल, सरल पुरुषकी हत्या मेरे हाथों हो रही है। पर करूँ क्या, अपने अपमानका बदला तो लेना ही होगा। (प्रकट) प्राणेश्वर, आप इतने निराश क्यों होते हैं। मैं आपकी हूँ और आपकी रहूंगी। संसारकी आंखोंमें मैं चाहे जो कुछ हूँ, दूसरोंके साथ मेरा बाहरी व्यवहार चाहे जैसा हो, पर मेरा हृदय आपका है। मेरे प्राण आपपर न्योछावर हैं। (आंचलसे कंचनके आंसू पोंछकर) अब प्रसन्न हो जाइये। यह प्रेमरत्न आपकी भेंट है।

कंचन—राजेश्वरी, उस प्रेमको भोगना मेरे भाग्यमें नहीं है। मुझ जैसा भाग्यहीन पुरुष और कौन होगा जो ऐसे दुर्लभ रत्नकी ओर हाथ नहीं बढ़ा सकता। मेरी दशा उस पुरुषकी सी है जो क्षुधासे व्याकुल होकर उन पदार्थोंकी ओर लपके जो किसी देवताकी अर्चनाके लिये रखे हुए हों। मैं वही अमानुषी कर्म कर रहा हूँ। मैं पहले यह जानता कि प्रेमरत्न कहां मिलेगा तो तुम अपसरा भी होती तो आकाशसे उतार लाता।

दूसरोंकी आंख पड़नेके पहले तुम मेरी हो जाती फिर कोई तुम्हारी ओर आंख उठाकर भी न देख सकता। पर तुम मुझे उस वक्त मिली जब तुम्हारी ओर प्रेमकी दृष्टिसे देखना भी मेरे लिये अधर्म हो गया। राजेश्वरी, मैं महापापी, अधर्मी जीव हूं। मुझे यहां इस एकान्तमें बैठनेका, तुमसे ऐसी बातें करनेका अधिकार नहीं है। पर प्रेमघातने मुझे संज्ञाहीन कर दिया है। मेरा विवेक लुप्त हो गया है। मेरे इतने दिनका ब्रह्मचर्य्य और धर्मनिष्ठाका अपहरण होगया है। इसका परिणाम कितना भयङ्कर होगा ईश्वर ही जाने। अब यहां मेरा बैठना उचित नहीं है। मुझे जाने दो (उठ खड़ा होता है।)

राजेश्वरी—(हाथ पकड़कर) न जाने पाइयेगा। जब इस धर्म अधर्मका पचड़ा छेड़ा है तो उसका निपटारा किये जाइये। मैं तो समझती थी जैसे जगन्नाथपुरीमें पहुँचकर छूता-छूतका विचार नहीं रहता उसी भांति प्रेमकी दीक्षा पानेके बाद धर्म अधर्मका विचार नहीं रहता। प्रेम आदमीको पागल कर देता है। पागल आदमीके काम और बातका विचार और व्यवहारका कोई ठिकाना नहीं।

कंचन—इस विचारसे चित्तको संतोष नहीं होता। मुझे अब जाने दो। अब और परीक्षामें मत डालो।

राजे०—अच्छा बतलाते जाइये कब आइयेगा?

कंचन—कुछ नहीं जानता क्या होगा। (रोते हुए) मेरे अपराध क्षमा करना।

(जीनेसे उतरता है। द्वारपर सबलसिंह आते दिखाई देते हैं। कंचन एक अंधेरे बरामदेमें छिप जाता है।)

सबल—(ऊपर जाकर) अरे! अभी तक तुम सोईं नहीं?

राजे०—जिन आंखोंमें प्रेम बसता है वहां नींद कहां।

सबल—यह उन्निद्रा प्रेममें नहीं होती। कपट प्रेममें होती है।

राजे०—(सशंक होकर) मुझे तो इसका कभी अनुभव नहीं हुआ। आपने इस समय आकर बड़ी कृपा की।

सबल—(क्रोधसे) अभी यहां कौन बैठा हुआ था?

राजे०—आपकी याद।

सबल—मुझे भ्रम था कि याद सदेह नहीं हुआ करती। आज यह नयी बात मालूम हुई। मैं तुमसे विनय करता हूँ बतला दो अभी कौन यहांसे उठकर गया है।

राजे०—आपने देखा है तो क्यों पूछते हैं?

सबल—शायद मुझे भ्रम हुआ हो।

राजे०—ठाकुर कंचनसिंह थे।

सबल—तो मेरा गुमान ठीक निकला। वह क्या करने आया था?

राजे०—(मनमें) मालूम होता है मेरा मनोरथ उससे जल्द

पूरा होगा जितनी मुझे आशा थी। (प्रगट) यह प्रश्न आप व्यर्थ करते हैं। इतनी रात गये जब कोई पुरुष किसी अन्य स्त्रीके पास जाता है तो उसका एकही आशय हो सकता है।

सबल—उसे तुमने आने क्यों दिया ?

राजे०—उन्होंने आकर द्वार खटखटाया, कहारिन जाकर खोल आई। मैंने तो उन्हें यहां आनेपर देखा।

सबल—कहारिन उससे मिली हुई है ?

राजे०—यह उससे पूछिये।

सबल—जब तुमने उसे बैठे देखा तो दुत्कार क्यों न दिया ?

राजे०—प्राणेश्वर, आप मुझसे ऐसे सवाल पूछकर दिल न जलावें। यह कहांकी रीति है कि जब कोई आदमी अपने पास आये तो उसको दुत्कार दिया जाय, वह भी जब आपका भाई हो। मैं इतनी निठुर नहीं हो सकती। उनसे मिलनेमें तो भय जब होता कि जब मेरा अपना चित्त चंचल होता, मुझे अपने ऊपर विश्वास न होता। प्रेमके गहरे रंगमें सराबोर होकर अब मुझपर किसी दूसरे रङ्गके चढ़नेकी सम्भावना नहीं है। हां, आप बाबू कंचनसिंहको किसी बहानेसे समझा दीजिये कि अबसे यहां न आवें। वह ऐसी प्रेम और अनुरागकी बातें करने लगते हैं कि उसके ध्यानसेही लज्जा आने लगती है। विवश होकर बैठती हूँ, सुनती हूँ।

सबल—(उन्मत्त होकर) पाखण्डी कहींका, धर्मात्मा बनता है, विरक्त बनता है, और कर्म ऐसे नीच ! तू मेरा भाई सही पर तेरा वध करनेमें कोई पाप नहीं है । हां, इस राक्षसकी हत्या मेरे ही हाथों होगी । ओह ! कितनी नीच प्रकृति है, मेरा सगा भाई और यह व्यवहार ! असह्य है अक्षम्य है, ऐसे पापीके लिये नर्क ही सबसे उत्तम स्थान है । आज ही, इसी रातको तेरी जीवन-लीला समाप्त हो जायगी । तेरा दीपक बुझ जायगा । हा धूर्त, क्या तेरी कामलोलुपताके लिये यही एक ठिकाना था ! तुझे मेरे ही घरमें आग लगानी थी ! मैं तुझे पुत्रवत प्यार करता था । तुझे........(क्रोधसे ओठ चबाकर) तेरी लाशको इन्हीं आंखोंसे तड़पते हुए देखूंगा ।

(*नीचे चला जाता है*)

राजे०—(आपही आप) ऐसा जान पड़ता है भगवान स्वयं यह सारी लीला कर रहे हैं, उन्हींकी प्रेरणासे सब कुछ होता हुआ मालूम होता है । कैसा विचित्र रहस्य है । मैं बैलोंका मारा जाना नहीं देख सकती थी, चिउटियोंको पैरों तले पड़ते देख-कर मैं पाँव हटा लिया करती थी । पर अभाग्य मुझसे यह हत्याकाण्ड करा रहा है ! मेरेही निर्दय हाथोंके इशारेसे यह कठपुतलियां नाच रही हैं ! (*करुण स्वरोंमें गाती है*)

ऊधो कर्मनकी गति न्यारी । (*गाते गाते प्रस्थान*)

सातवाँ दृश्य

(स्थान—दीवानखाना, समय—३ बजे रात, घटा छाई हुई है, सबलसिंह तलवार हाथमें लिये द्वारपर खड़े हैं ।)

सबल—(मनमें) अब सो गया होगा। मगर नहीं आज उसकी आँखोंमें नींद कहाँ। पड़ा-पड़ा प्रेमाग्निमें जल रहा होगा। करवटें बदल रहा होगा। उसपर यह हाथ न उठ सकेंगे। मुझमें इतनी निर्दयता नहीं है। मै जानता हूँ वह मुझपर प्रतिघात न करेगा। मेरी तलवारको सहर्ष अपनी गर्दनपर ले लेगा। हा! यही तो उसका प्रतिघात होगा। ईश्वर करें वह मेरी ललकारपर सामने खड़ा हो जाय। तब यह तलवार वज्रकी भाँति उसकी गर्दनपर गिरेगी। अरक्षित, निःशङ्क पुरुषपर मुझसे आघात न होगा। जब वह करुण दीन नेत्रोंसे मेरी ओर ताकेगा—जैसे छुरेके नीचे बकरा ताकता है—तो मेरी हिम्मत छूट जायगी।

(धीरे धीरे कंचनसिंहके कमरेकी ओर बढ़ता है)

हा! मानवजीवन कितना रहस्यमय है। हम दोनोंने एक ही

मांके उदरसे जन्म लिया, एक ही स्तनसे दूध पिया, सदा एक साथ खेले, पर आज मैं उसकी हत्या करनेको तैयार हूँ। कैसी विडम्बना है। ईश्वर करे उसे नींद आगई हो। सोतेको मारना धर्म-विरुद्ध हो पर कठिन नहीं है। दीनता दयाको जागृत कर देती है......(चौंककर) अरे ! यह कौन तलवार लिये बढ़ा चला आता है। कहीं छिपकर देखूं इसकी क्या नीयत है। लम्बा आदमी है, शरीर कैसा गठा हुआ है। किवाड़के दरारोंसे निकलते हुए प्रकाशमें आजाय तो देखूं कौन है। वह आ गया। यह तो हलधर मालूम होता है, बिलकुल वही चाल है। लेकिन हलधरके दाढ़ी नहीं थी। सम्भव है दाढ़ी निकल आई हो, पर है हलधर, हां वही है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। राजेश्वरीकी टोह इसे किसी तरह मिल गई। अपमानका बदला लेना चाहता है। कितना भयङ्कर स्वरूप हो गया है। आंखें चमक रही हैं। अवश्य हममेंसे किसीका खून करना चाहता है। मेरी ही जानका गाहक होगा। कमरेमें झांक रहा है। चाहूँ तो अभी पिस्तौलसे इसका काम तमाम कर दूं। पर नहीं। खूब सूझी। क्यों न इससे वह काम लूं जो मैं नहीं कर सकता। इस वक्त कौशलसे काम लेना ही उचित है। (तलवार छिपाकर) कौन है हलधर ?

(हलधर तलवार खींचकर चौकन्ना हो जाता है)

सबल—हलधर क्या चाहते हो ?

हलधर—(सबलके सामने आकर) संभल जाइयेगा मैं चोट करता हूँ।

सबल—क्यों मेरे खूनके प्यासे हो रहे हो ?

हलधर—अपने दिलसे पूछिये।

सबल—तुम्हारा अपराधी मैं नहीं हूं, कोई दूसरा ही है।

हलधर—क्षत्री होकर आप प्राणोंके भयसे झूठ बोलते नहीं लजाते।

सबल—मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ।

हलधर—सरासर झूठ है। मेरा सर्वनाश आपके हाथों हुआ है। आपने मेरी इज्ज़त मिट्टीमें मिला दी। मेरे घरमें आग लगा दी और अब आप झूठ बोलकर अपने प्राण बचाना चाहते हैं। मुझे सब खबरें मिल चुकी हैं। बाबा चेतनदासने सारा कच्चा चिट्ठा मुझसे कह सुनाया है। अब बिना आपका खून पिये इस तलवारकी प्यास न बुझेगी।

सबल—हलधर मैं क्षत्री हूँ और प्राणोंको नहीं डरता। तुम मेरे साथ मेरे कमरेतक आवो। मैं ईश्वरको साक्षी देकर कहता हूँ कि मैं कोई छल कपट न करूंगा। वहाँ मैं तुमसे सब वृत्तान्त सच सच कह दूंगा। तब तुम्हारे मनमें जो आये वह करना।

(हलधर चौकन्ना दृष्टिसे ताकता हुआ सबलके साथ उसके दीवानखानेमें जाता है)

सबल—तख्तपर बैठ जाओ और सुनो। यह सारी आग कंचनसिंहकी लगाई हुई है। उसने कुटनी द्वारा राजेश्वरीको घरसे निकलवा लिया है। उसके गोइन्दोंने राजेश्वरीका उससे बखान किया होगा। वह उसपर मोहित हो गया और तुम्हें जेल पहुँचाकर अपनी इच्छा पूरी की। जबसे मुझे यह समाचार मिला है मैं उसका शत्रु हो गया हूँ। तुम जानते हो मुझे अत्याचारसे कितनी घृणा है। अत्याचारी पुरुष चाहे वह मेरा पुत्र ही क्यों न हो, मेरी दृष्टिमें हिंसक जन्तुके समान है और उसका वध करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। इसीलिये मैं यह तलवार लेकर कंचनसिंहका वध करने जा रहा था। इतनेमें तुम दिखाई पड़े। मुझे अब मालूम हुआ कि जिसे मैं बड़ा धर्मात्मा, ईश्वरभक्त,सदाचारी और त्यागी समझता था वह वास्तवमें एक परले दरजेका व्यभिचारी, विषयी मनुष्य है। इसीलिये उसने अबतक विवाह नहीं किया। उसने कर्मचारियोंको घूस-देकर तुम्हें चुपके-चुपके गिरफ्तार करा लिया और अब राजेश्वरीके साथ विहार करता है। अभी आधी रातको वहांसे लौटकर आया है। मैं तुमसे सारा वृत्तान्त कह सुनाया, अब तुम्हारी जो इच्छा हो करो।

(हलधर लपककर कंचनसिंहके कमरेकी ओर चलता है ।)

सबल—ठहरो ठहरो, यों नहीं । सम्भव है तुम्हारा आहट पाकर जाग उठे । नौकर सिपाही उसका चिल्लाना सुनकर जाग पड़ें । प्रात:काल वह गंगा नहाने जाता है । उस वक्त अन्धेरा रहता है । वहीं तुम उसे गङ्गाकी भेंट कर सकते हो । घात लगाये रहो । अवसर आतेही एक हाथमें काम तमाम कर दो और लाशको वहीं बहा दो । तुम्हारा मनोरथ पूरा होनेका इससे सुगम उपाय नहीं है ।

हलधर—(कुछ सोचकर) मुझे धोखा तो नहीं देना चाहते । इस बहानेसे मुझे टाल दो और फिर सचेत हो जाओ और मुझे पकड़वा देनेका इन्तजाम करो ।

सबल—मैंने ईश्वरकी कसम खाई है, अगर अब भी तुम्हें विश्वास न आये तो जो चाहे करो ।

हलधर—अच्छी बात है जैसा आप कहते हैं वैसाही होगा । अगर इस समय धोखा देकर बच भी गये तो फिर क्या कभी दाव ही न आयेगा । मेरे हाथोंसे बचकर अब नहीं जा सकते । मैं चाहूँ तो एक क्षणमें तुम्हारे कुलका नाश कर दूं पर मैं हत्यारा नहीं हूँ, मुझे धनकी लालसा नहीं है । मैं तो केवल अपने अपमानका बदला लेना चाहता हूं । आपको भी सचेत किये देता हूँ । मैं अभी और टोह लगाऊँगा । अगर पता चला कि

आपने मेरा घर उजाड़ा है तो मैं आपको भी जीता न छोड़ूंगा। मेरा तो जो कुछ होना था हो चुका पर मैं अपने उजाड़नेवालों-को कुकर्मका सुख न भोगने दूंगा।

(*चला जाता है*)

सबल—(मनमें) मैं कितना नीच हो गया हूँ। झूठ, दगा, फरेब, किसी पापसे भी मुझे हिचक नहीं होती। पर जो कुछ भी हो हलधर बड़े मौकेसे आ गया। अब बिना लाठी टूटे ही सांप मरा जाता है।

(*प्रस्थान*)

आठवां दृश्य

(स्थान—नदीका किनारा, समय—४ बजे भोर, कंचन पूजाकी सामग्री लिये आता है और एक तख्तपर बैठ जाता है, फीटन घाटके ऊपर ही रुक जाती है)

कंचन (मनमें) यह जीवनका अंत है ! यह बड़े २ इरादों और मंसूबोंका परिणाम है ! इसीलिये जन्म लिया था। यही मोक्षपद है। यह निर्वाण है। माया बन्धनोंसे मुक्त रहकर आत्माको उच्चतम पदपर ले जाना चाहता था। यह वही महानपद है। यही मेरी सुकीर्ति रूपी धर्मशाला है, यही मेरा आदर्श कृष्ण-मन्दिर है ! इतने दिनोंके नियम और सयम, सत्संग और भक्ति, दान और व्रतने अन्तमें मुझे वहां पहुँचाया जहाँ कदाचित् भ्रष्टाचार और कुविचार, पाप और कुकर्मने भी न पहुँचाया होता। मैंने जीवनयात्राका कठिनतम मार्ग लिया पर हिन्सक जीव-जन्तुओंसे बचनेका, अथाह नदियोंको पार करनेका, दुर्गम घाटियोंसे उतरनेका कोई साधन अपने

साथ न लिया। मैं स्त्रियोंसे अलग-अलग रहता था, इन्हें जीवनका कांटा समझता था, उनके बनाव-शृंगारको देखकर मुझे घृणा होती थी। पर आज...वह स्त्री जो मेरे बड़े भाईकी प्रेमिका है, जो मेरी माताके तुल्य है........प्रेममें इतनी शक्ति है, मैं यह न जानता था! हाय, यह आग अब बुझती नहीं दिखाई देती। यह ज्वाला मुझे भस्म करके ही शान्त होगी। यही उत्तम है। अब इस जीवनका अंत होना ही अच्छा है। इस आत्मपतनके बाद अब जीना धिक्कार है। जीनेसे यह ताप और ज्वाला दिन दिन प्रचंड होगी। घुल घुलकर, कुढ़ कुढ़-कर मरनेसे, घरमें बैरका बीज बोनेसे, जो अपने पूज्य हैं उनसे वैमनस्य करनेसे, यह कहीं अच्छा है कि इन विपत्तियोंके मूलही, का नाश कर दूं। मैंने सब तरह परीक्षा करके देख लिया। राजे-श्वरीको किसी तरह नहीं भूल सकता, किसी तरह ध्यानसे नहीं उतार सकता।

(*चेतनदासका प्रवेश*)

कंचन—स्वामीजीको दण्डवत् करता हूं।

चेतन—बाबा सदा सुखी रहो। इधर कई दिनोंसे तुमको नहीं देखा। मुख मलिन है, अस्वस्थ तो नहीं थे?

कंचन—नहीं महाराज, आपके आशीर्वादसे कुशलसे हूं। पर कुछ ऐसे झंझटोंमें पड़ा रहा कि आपके दर्शन न कर सका।

बड़ा सौभाग्य था कि आज प्रातःकाल आपके दर्शन हो गये। आप तीर्थयात्रापर कब जानेका विचार कर रहे हैं?

चेतन—बाबा अब तक तो चला गया होता पर भगतोंसे पिण्ड नहीं छूटता। विशेषतः मुझे तुम्हारे कल्याणके लिये तुमसे कुछ कहना था और बिना कहे मैं न जा सकता था। यहां इसी उद्देश्यसे आया हूँ। तुम्हारे ऊपर एक घोर संकट आनेवाला है। तुम्हारा भाई सबलसिंह तुम्हें वध करनेकी चेष्टाकर रहा है। घातक शीघ्रही तुम्हारे ऊपर आघात करेगा। सचेत हो जाओ।

कंचन—महाराज, मुझे अपने भाईसे ऐसी आशङ्का नहीं है।

चेतन— यह तुम्हारा भ्रम है। प्रेम·ईर्षामें मनुष्य अस्थिर-चित्त, उन्मत्त हो जाता है।

कंचन—यदि ऐसाही हो तो मैं क्या कर सकता हूँ। मेरी आत्मा तो स्वयं अपने पापके बोझसे दबी हुई है।

चेतन—यह क्षत्रियोंकी बातें नहीं हैं। भूमि, धन, और नारीके लिये सग्राम करना क्षत्रियोंका धर्म है। इन वस्तुओंपर उसीका वास्तविक अधिकार है जो अपने बाहुबलसे उन्हें छीन सके। इस संग्राममें दया और धर्म, विवेक और विचार, मान और प्रतिष्ठा, सभी कायरताके पर्याय हैं। यही उपदेश कृष्ण भगवानने अर्जुनको दिया था, और वही उपदेश मैं तुम्हें दे रहा

हूँ। तुम मेरे भक्त हो इसलिये यह चेतावनी देना मेरा कर्तव्य था। योद्धाओंकी भांति क्षेत्रमें निकलो और अपने शत्रुके मस्तकको पैरोंसे कुचल डालो, उसका गेंद बनाकर खेलो अथवा अपनी तलवारकी नोकपर उछालो। यही वीरोंका धर्म है। जो प्राणी क्षत्रिय वंशमें जन्म लेकर संग्रामसे मुंह मोड़ता है वह केवल कापुरुष ही नहीं, पापी है, विधर्मी है, दुरात्मा है। कर्म-क्षेत्रमें कोई किसीका पुत्र नहीं, भाई नहीं, मित्र नहीं, सब एक दूसरेके शत्रु हैं। यह समस्त संसार कुछ नहीं; केवल एक वृहत: विराट शत्रुता है। दर्शनकारों और धर्माचार्य्योंने संसारको प्रेममय कहा है। उनके कथनानुसार ईश्वर स्वयं प्रेम है। यह उस भ्रान्तिका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है जिसने संसारको वेष्ठित कर रखा है। भूल जाओ कि तुम किसीके भाई हो। जो तुम्हारे ऊपर आघात करे उसका प्रतिघात करो, जो तुम्हारी ओर वक्र नेत्रोंसे ताके उसकी आंखें निकाल लो। राजेश्वरी तुम्हारी है, प्रेमके नाते उसपर तुम्हारा ही अधिकार है। अगर तुम अपने कर्तव्य-पथसे हटकर उसे उस पुरुषके हाथोंमें छोड़ दोगे जिससे उसे चाहे पहले प्रेम रहा हो पर अब वह उससे घृणा करती है, तो तुम न्याय, नीति और धर्मके घातक सिद्ध होगे और जन्म जन्मान्तरों तक इसका दण्ड भोगते रहोगे।

(*चेतनदासका प्रस्थान*)

कंचन—(मनमें) मन अब क्या कहते हो ? क्षत्रियधर्मका पालन करके भाईसे लड़ोगे, उसके प्राणोंपर आघात करोगे या क्षत्रियधर्मको भंग करके आत्महत्या करोगे ? जी तो मरनेको नहीं चाहता। अभीतक भक्ति और धर्मके जंजालमें पड़ा रहा, जीवनका कुछ सुख नहीं देखा। अब जब उसकी आशा हुई तो यह कठिन समस्या सामने आ खड़ी हुई। हो क्षत्रियधर्मके विरुद्ध, पर भाईसे मैं किसी भांति विग्रह नहीं कर सकता। उन्होंने सदैव मुझसे पुत्रवत् प्रेम किया है। याद नहीं आता कि कोई अमृदु शब्द उनके मुंहसे सुना हो। वह योग्य हैं, विद्वान हैं, कुशल हैं, मेरे हाथ उनपर नहीं उठ सकते। अवसर न मिलनेकी बात नहीं है। भैयाका शत्रु मैं हो ही नहीं सकता। क्षत्रियोंके ऐसे धर्मसिद्धान्त न होते तो जरा जरासी बातपर खूनकी नदियां क्योंकर बहतीं और भारत क्यों हाथसे जाता ? नहीं कदापि नहीं, मेरे हाथ उनपर नहीं उठ सकते। साधुगण झूठ नहीं बोलते, पर यह महात्माजी उनपर भी मिथ्या दोषारोपण कर गये। मुझे विश्वास नहीं आता कि वह मुझपर इतने निर्दय हो जायेंगे। उनके दया और शीलका पारावार नहीं। वह मेरी प्राणहत्याका संकेत नहीं दे सकते। एक नहीं, हजार राजेश्वरियां हों पर भैया मेरे शत्रु नहीं हो सकते। यह सब मिथ्या है। मेरे हाथ उनपर नहीं उठ सकते।

हाय, अभी एक क्षणमें यह घटना सारे नगरमें फैल जायगी। लोग समझेंगे पांव फिसल गया होगा, राजेश्वरी क्या समझेगी ? उसे मुझसे प्रेम है, अवश्य शोक करेगी, रोयेगी और अबसे कहीं ज्यादा प्रेम करने लगेगी। और भैया ? हाय यही तो मुसीबत है। अब मैं उन्हें मुँह नहीं दिखा सकता। मैं उनका अपराधी हूँ। मैंने धर्मकी हत्याकी है। अगर वह मुझे जीता चुनवा दें तोभी मुझे आह भरनेका अधिकार नहीं है। मेरे लिये अब यही एक मार्ग रह गया है। मेरे बलिदानसे ही अब शान्ति होगी। पर भैयापर मेरे हाथ न उठेंगे। पानी गहरा है। भगवन् मैंने बड़े पाप किये हैं, तुम्हें मुँह देखाने योग्य नहीं हूँ। अपनी अपार दया की छांहमें मुझे भी शरण देना। राजेश्वरी, अब तुझे कैसे देखूंगा।

(पीलपायेपर खड़ा होकर अथाह जलमें कूद पड़ता है)

(हलधरका तलवार और पिस्तौल लिये आना)

हलधर—बड़े मौकेसे आया। मैंने समझा था देर हो गई। पाखंडी, कुकर्मी कहींका। रोज गङ्गा नहाने आता है, पूजा करता है, तिलक लगाता है और कर्म इतने नीच। ऐसे मौकेसे मिले हो कि एकही वारमें काम तमाम कर दूँगा। और पराई स्त्रियों पर निगाह डालो। (पिलपायेकी आड़में छिपकर सुनता है) पापी भगवानसे दयाकी याचना कर रहा है। यह नहीं जानता है

कि एक क्षणमें नर्कके द्वारपर खड़ा होगा। राजेश्वरी, अब तुम्हें कैसे देखूंगा? अभी प्रेत हुए जाते हो फिर उसे जी भरकर देखना। (पिस्तौलका निशाना लगाता है) अरे! यह तो आपही आप पानीमें कूद पड़ा, क्या प्राण देना चाहता है?

(पिस्तौल किनारेकी ओर फेंककर पानीमें कूद पड़ता है और कंचन सिहको गोदमें लिये एक क्षणमें बाहर आता है।)

(मनमें) अभी पानी पेटमें बहुत कम गया है। इसे कैसे होशमें लाऊँ। है तो यह अपना बैरी, पर जब आप ही मरनेपर उतारू है तो मैं इसपर क्या हाथ उठाऊँ। मुझे तो इसपर दया आती है।

(कंचन सिहको लेटाकर उसकी पीठमें घुटने लगाकर उसके बाहोंको हिलाता है)

(चेतनदासका प्रवेश)

चेतनदास—(आश्चर्यसे) यह क्या दुर्घटना हो गई। क्या तूने इसको पानीमें डुबा दिया?

हलधर—नहीं महाराज, यह तो आप नदीमें कूद पड़े। मैं तो बाहर निकाल लाया हूँ।

चेतन—लेकिन तू इन्हें वध करनेका इरादा करके आया था। मूर्ख मैंने तुझे पहले ही जता दिया था कि तेरा शत्रु सबल सिंह है, कंचनसिंह नहीं, पर तूने मेरी बातका विश्वास न किया। उस धूर्त सबलके बहकावेमें आ गया। अब फिर कहता

हूँ कि तेरा शत्रु वही है, उसीने तेरा सर्वनाश किया है, वही राजेश्वरीके साथ विलास करता है।

हलधर—मैंने इन्हें राजेश्वरीका नाम लेते अपने कानोंसे सुना है।

चेतन—हो सकता है कि राजेश्वरी जैसी सुन्दरीको देखकर इसका चित्त भी चंचल हो गया हो। सबलसिंहने सन्देह वश इनके प्राण-हरणकी चेष्टाकी हो। बस यही बात है।

हलधर—स्वामीजी क्षमा कीजियेगा, मैं सबलसिंहकी बातोंमें आ गया। अब मुझे मालूम हो गया कि वही मेरा बैरी है। ईश्वरने चाहा तो वह भी बहुत दिनतक अपने पापका सुख न भोगने पायेंगे।

चेतन—(मनमें) अब कहाँ जाता है। आज पुलिसवाले भी घरकी तलाशी लेंगे। अगर उनसे बच गया तो यह तो तलवार निकाले बैठा ही है। ईश्वरकी इच्छा हुई तो अब शीघ्रही मनोरथ पूरे होंगे। ज्ञानी मेरी होगी और मैं इस विपुल सम्पत्तिका स्वामी हो जाऊंगा। कोई व्यवसाय, कोई विद्या, मुझे इतनी जल्द इतना सम्पत्तिशाली न बना सकती थी?

(*प्रस्थान*)

कंचन—(होशमें आकर) नहीं तुम्हारा शत्रु मैं हूँ। जो कुछ किया है मैंने किया है। भैया निर्दोष हैं, तुम्हारा अपराधी मैं

हूँ। मेरे जीवनका अंत हो यही मेरे पापोंका दण्ड है। मैं तो स्वयं अपनेको इस पाप-जालसे मुक्त करना चाहता था। तुमने क्यों मुझे बचा लिया। (आश्चर्य्यसे) अरे, यह तो तुम हो हलधर ?

हलधर—(मनमें) कैसा बेछल-कपटका आदमी है। (प्रगट) आप आरामसे लेटे रहें, अभी उठिये न।

कंचन—नहीं अब नहीं लेटा जाता। (मनमें) समझमें आ गया। राजेश्वरी इसीकी स्त्री है। इसीलिये भैयाने वह सारी माया रची थी। (प्रगट) मुझे उठाकर बैठा दो। बचन दो कि तुम भैयाका कोई अहित न करोगे ?

हलधर—ठाकुर मैं यह बचन नहीं दे सकता।

कंचन—किसी निर्दोषकी जान लोगे ? तुम्हारा घातक मैं हूं। मैंने तुम्हें चुपकेसे जेल भिजवाया और राजेश्वरीको कुट-नियों द्वारा यहां बुलाया।

(*तीन डाकू लाठियां लिये आते हैं।*)

एक—क्यों गुरू, पड़ा हाथ भरपूर।

दूसरा—वह तो खासा टैयांसा बैठा हुआ है। लाओ मैं एक हाथ दिखाऊँ।

हलधर—खबरदार हाथ न उठाना।

पहला—क्या कुछ हत्थे चढ़ गया क्या ?

हलधर—हाँ असरफियोंकी थैली है। मुँह धो रखना।

तीसरा—यह बहुत कड़ा ब्याज लेता है। सब रुपये इसके तोंनमेंसे निकाल लो।

हलधर—जबान संभालकर बात करो।

पहला—अच्छा—इसे ले चलो, दो चार दिन बर्तन मंजवायेंगे। आराम करते-करते मोटा हो गया है।

दूसरा—तुमने इसे छोड़ क्यों दिया ?

हलधर—इसने बचन दिया है कि अब सूद न लूंगा।

पहला—क्यों बचा, गुरूको सीधा समझकर झांसा दे दिया।

हलधर—बक बक मत करो। इन्हें नावपर बैठाकर डेरेपर ले चलो। यह बिचारे सूद ब्याज जो कुछ लेते हैं अपने भाईके हुकुमसे लेते हैं। आज उसीकी खबर लेनेका विचार है।

(सब कंचनको सहारा देकर नावपर बैठा देते हैं और गाते हुए नाव चलाते हैं।)

नारायणका नाम सदा मनके अंदर लाना चहिये।
मानुष तन है दुर्लभ जगमें इसका फल पाना चहिये॥
दुर्जन संग नरकका मारग उससे दूर जाना चहिये।
सतसंगतमें सदा बैठके हरिके गुण गाना चहिये॥
धरम कमाई करके अपने हाथोंकी खाना चहिये।
दुखी जीवको देख दया करके कुछ दिलवाना चहिये॥

परनारीको अपनी माताके समान जानना चाहिये ।
झूठ कपटकी बात सदा कहनेमें शरमाना चहिये ।।
कथा पुरान सन्त संगतमें मनको बहलाना चहिये ।
नारायणका नाम सदा मनके अंदर लाना चहिये ।।

नवां दृश्य

(स्थान—गुलाबीका मकान, समय—संध्या, चिराग जल चुके हैं, गुलाबी संदूकसे रुपये निकाल रही है।)

गुलाबी—भाग जाग जायंगे। स्वामीजीके प्रतापसे यह सब रुपये दूने हो जायंगे। पूरे ३००) हैं। लौटूंगी तो हाथमें ६००) की थैली होगी। इतने रुपये तो बरसोंमें भी न बटोर पाती। साधु महात्माओंमें बड़ी शक्ति होती है। स्वामीजीने यह यंत्र दिया है। भृगुके गलेमें बांध दूं। फिर देखूं यह चुड़ैल उसे कैसे अपने बसमें किये रहती है। उन्होंने तो कहा है कि वह उसकी बात भी न पूछेगा। यही तो मैं चाहती हूं। उसका मान-मर्दन हो जाय, घमंड टूट जाय।

(भृगुको बुलाती है।)

क्यों बेटा, आजकल तुम्हारी तबीयत कैसी रहती हैं। दुबले होते जाते हो।

भृगु—क्या करूं। सारे दिन बही खोले बैठे २ एक जाता हूं। ठाकुर कंचन सिंह एक बीड़े पानको भी नहीं पूछते। न कहीं

घूमने जाता हूं, न कोई उत्तम वस्तु भोजनको मिलती है। जो लोग लिखने-पढ़नेका काम करते हैं उन्हें दूध, मक्खन, मलाई, मेवा, मिस्री इच्छानुकूल मिलनी चाहिये। रोटी दाल चावल तो मजूरोंका भोजन है। सांझ-सवेरे वायुसेवन करना चाहिये। कभी २ थियेटर देखकर मन बहलाना चाहिये। पर यहाँ इनमेंसे कोई भी सुख नहीं। यही होगा कि सूखते २ एक दिन जानसे चला जाऊँगा।

गुलाबी—ऐ नौज बेटा, कैसी बात मुँहसे निकालते हो। मेरे जानमें तो कुछ फेरफार है। इस चुड़ैलने तुम्हें कुछ कर करा दिया है। यह पक्की टोनिहारी है। पूरबकी न है। वहाँकी सब लड़कियाँ टोनिहारी होती हैं।

भृगु—कौन जाने यही बात हो। कंचन सिंहके कमरेमें अकेले बैठता हूँ तो ऐसा डर लगता है जैसे कोई बैठा हो। रातको आने लगता हूँ तो फाटकपर मौलसरीके पेड़के नीचे किसीको खड़ा देखता हूँ। कलेजा थर-थर काँपने लगता है। किसी तरह चित्तको ढाढ़स देता हुआ चला आता हूं। लोग कहते हैं पहले वहाँ किसीकी कबर थी।

गुलाबी—मैं स्वामीजीके पाससे यह जन्तर लाई हूँ। इसे गलेमें बाँध लो। शंका मिट जायगी। और कलसे अपने लिये पावभर दूध भी लाया करो। मैंने खूबा अहीरसे कहा है। उस-

के लड़केको पढ़ा दिया करो। वह तुम्हें दूध दे देगा।

भृगु—जन्तर लाओ मैं बाँध लूँ, पर खूबाके लड़केको मैं न पढ़ा सकूँगा। लिखने-पढ़नेका काम करते-करते सारे दिन योंही थक जाता हूँ। मैं जबतक कंचन सिंहके यहां रहूँगा मेरी तबीयत अच्छी न होगी। मुझे कोई दूकान खुलवा दो।

गुलाबी—बेटा, दूकानके लिये तो पूंजी चाहिये। इस घड़ी तो यह ताबीज बांध लो। फिर मैं और कोई जतन करूँगी। देखो, देवीजीने खाना बना लिया? आज मालकिनने रातको यहीं रहनेको कहा है।

(भृगु जाता है और चम्पासे पूछकर आता है, गुलाबी चौकेमें जाती है।)

गुलाबी—पीढ़ा तक नहीं रखी, लोटेका पानीतक नहीं रखा। अब मैं पानी लेकर आऊँ और अपने हाथसे आसन डालूँ तब खाना खाऊँ। क्यों इतने घमण्डके मारे मरी जाती हो महारानी। थोड़ा इतराओ, इतना आकाशपर दिया न जलाओ।

(चम्पा थाली लाकर गुलाबीके सामने रख देती है, वह एक कौर उठाती है और क्रोधसे थाली चम्पाके सिरपर पटक देती है।)

भृगु—क्या है अम्मा?

गुलाबी—है क्या यह डायन मुझे विष देनेपर तुली हुई है। यह खाना है कि जहर है। मारा नमक भर दिया। भगवान न जाने कब इसकी मिट्टी इस घरसे उठायेंगे। मर गये इसके बाप, चचा। अब कोई झांकतातक नहीं। जबतक व्याह न हुआ था द्वारकी मिट्टी खोदे डालते थे। इतने दिन इस अभागिनीको रसोई बनाते हो गये, कभी ऐसा न हुआ कि मैंने पेटभर भोजन किया हो। यह मेरे पीछे पड़ी हुई है.........

भृगु—अम्मा, देखो सिर लोहूलुहान हो गया। जरा नमक ज्यादा ही हो गया तो क्या उसकी जान ले लोगी। जलती हुई दाल डाल दी। सारे बदनमें छाले पड़ गये। ऐसा भी कोई क्रोध करता है।

गुलाबी—(मुँह चिढ़ाकर) हाँ हाँ देख, मरहम पट्टी कर, दौड़ डाक्टरको बुला ला नहीं कहीं मर न जाय। अभी लौंडा है, त्रिया चरित्र, देखा कर। मैंने उधर पीठ फेरी, इधर ठहाकेकी हँसी उड़ने लगेगी। तेरे सिर चढ़ानेसे तो इसका मिजाज इतना बढ़ गया है। यह तो नहीं पूछता कि दालमें क्यों इतना नमक झोंक दिया, उल्टे और घावपर मरहम रखने चला है।

(*झमझमर चली जाती है।*)

चम्पा—मुझे मेरे घर पहुँचा दो।

भृगु—मारा सिर लोहूलोहान हो गया। इसके पास रुपये

हैं, उसीका इसे घमंड है। किसी तरह रुपये निकल जाते तो यह गाय हो जाती।

चम्पा—तबतक तो यह मेरा कचूमर ही निकाल लेंगी।

भृगु—सबरका फल मीठा होता है।

चम्पा—इस घरमें अब मेरा निबाह न होगा। इस बुढ़िया-को देखकर आँखोंमें खून उतर आता है।

भृगु--अबकी एक गहरी रकम हाथ लगनेवाली है। एक ठाकुरने कानोंकी बाली हमारे यहाँ गिरों रखी थी। वादेके दिन टल गये। ठाकुरका कहीं पता नहीं। पूरब गया था। न जाने मर गया या क्या। मैंने सोचा है तुम्हारे पास जो गिन्नी रखी है उसमें चार-पाँच रुपये और मिलाकर बाली छुड़ा लूँ। ठाकुर लौटेगा तो देखा जायगा। ५०)से कमका माल नहीं है।

चम्पा—सच !

भृगु—हाँ, अभी तौले आता हूं। पूरे दो तोले हैं।

चम्पा—तो कब ला दोगे ?

भृगु—कल लो। वह तो अपने हाथका खेल है। आज दालमें नमक क्यों ज्यादा हुआ।

चम्पा—सुबह कहने लगीं खानेमें नमक ही नहीं है। मैंने इस बेला नमक पीसकर उनकी थालीमें ऊपरसे डाल दिया कि खाओ खूब जी भरके। वह एक न एक खुचुड़ निकालती रहती

हैं तो मैं भी उन्हें जलाया करती हूँ।

भृगु—अच्छा, अब मुझे भी भूख लगी है, चलो।

चम्पा—(आपही आप) सिरमें जरा सी चोट लगी तो क्या, कानोंकी बालियाँ मिल गईं। इन दामों तो चाहे कोई मेरे सिरपर दिनभर थालियां, कटोरियाँ पटका करे।

(प्रस्थान)

चतुर्थ अंक

पहला दृश्य

(स्थान-मधुबन, थानेदार, इन्सपेक्टर, और कई सिपाहियोंका प्रवेश)

इन्सपेक्टर—एक हजारकी रकम एक चीज होती है।

थानेदार—बेशक!

इन्स०—और करना कुछ नहीं। दो-चार शहादतें बनाकर खानातलाशी कर लेनी है।

थानेदार—गांववाले तो सबल सिंहके खिलाफ ही होंगे।

इन्सपेक्टर—आजकल बड़ेसे बड़े आदमीको जब चाहें फांस दें। कोई कितना ही मुअज्जिज हो, अफसरोंके यहां उसकी कितनी ही रसाई हो, इतना कह दीजिये कि हुजूर वह भी सुराजका हामी है, बस सारे हुक्काम उसके जानी दुश्मन हो जाते हैं। फिर वह गरीब अपनी कितनी ही सफाई दिया करे, अपनी वफादारीके कितने ही सबूत पेश करता फिरे, कोई उसकी नहीं सुनता। सबल सिंहकी इज्जत हुक्कामकी नजरोंमें कम नहीं थी। उनके साथ दावतें खाते थे। घुड़दौड़में शरीक होते थे, हरएक

जलसेमें शरीक किये जाते थे, पर मेरे एक फिकरेने हजरतका सारा रङ्ग फीका कर दिया। साहबने फौरन हुक्म दिया कि जाकर उसकी तलाशी लो और कोई सबूत दस्तगाव हो तो गिरफ्तारीका वारंट ले जाओ।

थानेदार—आपने क्या फिकरा जमाया था?

इन्सपेक्टर—अजी कुछ नहीं, महज इतना कहा था कि आज कल यहाँ सुराजकी बड़ी धूम है। ठाकुर सबलसिंह पंचायतें कायम कर रहे हैं। इतना सुनना था कि साहबका चेहरा सुर्ख हो गया। बोले—दगाबाज आदमी है। मिलकर वार करना चाहता है, फौरन उसके खिलाफ सबूत पैदा करो। इसके कब्ल मैंने कहा था, हजूर यह बड़ा जिनाकार आदमी है, अपने एक असामीकी औरतको निकाल लाया है। इसपर सिर्फ मुसकिराये, तीवरोंपर जरा भी मैल नहीं आई। तब मैंने यह चाल चली। यह लो गांवके मुखिये आ गये। जरा रोब जमा दूं।

(मँगरू, हरदास फत्तू आदिका प्रवेश। सलोनी भी पीछे पीछे आती है और अलग हो जाती है)

इन्सपेक्टर—आइये शेखजी, कहिये खैरियत तो है?

फत्तू—(मनमें) सबल सिंहके नेक और दयावान होनेमें संदेह नहीं। कभी हमारे ऊपर सख्ती नहीं की! हमेशा रिआयत ही करते रहे, पर आंखका लगना बुरा होता है। पुलिसवाले न जाने उन्हें

किस-किस तरह सतायेंगे। कहीं जेहल न भिजवा दें। राजेश्वरीको वह जबरदस्ती थोड़े ही ले गये। वह तो अपने मनसे गई। मैंने चेतनदास बाबाको नाहक इस बुरे काममें मदद दी। किसी तरह सबल सिंहको बचाना चाहिये। (प्रकट) सब अल्लाहका करम है।

इन्सपेक्टर—तुम्हारे जमींदार साहब तो खूब रङ्ग लाये। कहाँ तो वह पारसाई और कहां यह हरकत।

फत्तू—हजूर हमको तो कुछ मालूम नहीं।

इन्स०—तुम्हारे बचानेसे अब वह नहीं बच सकते अब तो आगये, शेरके पंजेमें। अपना बयान दीजिये। वहाँ गाँवमें पञ्चायत किसने कायम की?

फत्तू—हजूर गांवके लोगोंने मिलकर कायम की, जिसमें छोटी २ बातोंके पीछे अदालतकी ठोकरें न खानी पड़ें।

इन्स०—सबल सिंहने यह नहीं कहा कि अदालतमें जाना गुनाह है?

फत्तू—हजूर उन्होंने ऐसी बात तो नहीं कही, हां पंचायतके फायदे बताये थे।

इन्स०—उन्होंने तुम लोगोंको बेगार बन्द करनेकी ताकीद नहीं की? सच बोलना, खुदा तुम्हारे सामने है।

फत्तू—(बगल झांकते हुए) हजूर उन्होंने यह तो नहीं कहा। हां! यह जरूर कहा कि जो चीज दो उसका मुनासिब दाम लो।

इन्स०—वह एक ही बात हुई। अच्छा उस गांवमें शराबकी दूकान थी। वह किसने बन्द कराई ?

फत्तू—हजूर ठीकेदारने आप ही बन्द कर दी। उसकी बिक्री न होती थी।

इन्स०—सबल सिंहने सबसे यह नहीं कहा कि जो उस दूकानपर जाय उसे पंचायतमें सजा मिलनी चाहिये ?

फत्तू—(मनमें) इसको जरा-जरा सी बातोंकी खबर है। (प्रगट) हजूर मुझे याद नहीं।

इन्सपेक्टर—शेखजी, तुम कन्नी काट रहे हो, इसका नतीजा अच्छा नहीं है। दारोगाजीने तुम्हारा जो बयान लिखा है उसपर चुपकेसे दस्तखत कर दो वरना जमींदार तो न बचेंगे। तुम अलबत्ता गेहूँके साथ घुनकी तरह पिस जाओगे।

फत्तू—हजूरका अखतियार है जो चाहें करें, पर मैं तो वही कहूँगा जो जानता हूँ।

इन्सपेक्टर—तुम्हारा क्या नाम है ?

मंगरू—(सामने आकर) मंगरू।

इन्सपेक्टर—जो पूछा जाय उसका साफ २ जवाब देना। इधर-उधर किया तो तुम जानोगे। पुलिसका मारा पानी नहीं माँगता। यहां गावमें पंचायत किसने क़ायम की ?

मंगरू—(मनमें) मैं तो जो यह चाहेंगे वही कहूंगा। पीछे

देखा जायगा। गालियाँ देने लगें या पिटवाने ही लगें तो इनका क्या बना लूंगा। सबल सिंह तो मुझे बचा न देंगे। (प्रगट) ठाकुर सबल सिंहने।

इन्सपेक्टर—उन्होंने तुम लोगोंसे कहा था न कि सरकारी अदालतोंमें जाना पाप है। जो सरकारी अदालतमें जाय उसका हुक्का-पानी बन्द कर दो।

मंगरू—(मनमें) यह तो नहीं कहा था, खाली अदालतोंके खर्चसे बचनेके लिये पंचायत खोलनेकी ताकीद की थी। पर ऐसा कह दूं तो अभी यह जामेसे बाहर हो जायगा। (प्रगट) हां हजूर कहा था। बात सच्ची कहूँगा। जमींदार आकबतमें थोड़े ही साथ देंगे।

इन्स०—सबल सिंहने यह नहीं कहा था कि किसी हाकिम-को बेगार मत दो।

मंगरू--(मनमें) उन्होंने तो इतना ही कहा था कि मुनासिब दाम लेकर दो। (प्रगट) हां हजूर कहा था। बरमला कहा था। सच्ची बात कहनेमें क्या डर ?

इन्स०--शराब और गांजेकी दूकान तोड़वानेकी तहरीर उनकी तरफसे हुई थी न ?

मंगरू—बराबर हुई थी। जो शराब-गांजा पिये उसका हुक्का पानी बन्द कर दिया जाता था।

इन्स०—अच्छा, अपने बयानपर अंगूठेका निशान दो। तुम्हारा क्या नाम है जी ? इधर आओ।

हरदास—(सामने) हरदास।

इन्स०—सच्चा बयान देना जैसा मंगरूने दिया है, वरना तुम जानोगे।

हरदास—(मनमें) सबल सिंह तो अब बचते नहीं,मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं। यह जो कुछ कहलाना चाहते हैं मैं उससे चार बात ज्यादा ही कहूँगा। यह हाकिम हैं, खुश होकर मुखिया बना दें तो सालमें सौ दो सौ रुपये अनायास ही हाथ लगते रहें। (प्रगट) हजूर जो कुछ जानता हूं वह रत्ती २ कह दूंगा।

इन्स०—तुम समझदार आदमी मालूम होते हो। अपना नफ़ा नुकसान समझते हो। यहां पचायतके बारेमें क्या जानते हो ?

हरदास—हजूर,ठाकुर सबल सिंहने खुलवाई थी। रोज यही कहा करें कि कोई आदमी सरकारी अदालतमें न जाय। सरकारके इसटाम क्यों खरीदो। अपने झगड़े आप चुका लो। फिर न तुम्हें पुलिसका डर रहेगा न सरकारका। एक तरहसे तुम अदालतोंको छोड़ देनेसे ही सुराज पा जाओगे। यह भी हुकुम दिया था कि जो आदमी अदालत जाय उसका हुक्का पानी बन्द कर देना चाहिये।

इन्स०—बयान ऐसा होना चाहिये। अच्छा सबल सिंहने बेगारके बारेमें तुमसे क्या कहा था ?

हरदास—हजूर, वह तो खुल्लमखुल्ला कहते थे कि किसी-को बेगार मत दो, चाहे बादशाह ही क्यों न हो। अगर कोई जबरदस्ती करे तो अपना और उसका खून एक कर दो।

इन्सपेक्टर—ठीक। शराब-गांजेकी दूकान कैसे बन्द हुई?

हरदास—हजूर, बन्द न होती तो क्या करती, कोई वहां खड़ा नहीं होने पाता था। ठाकुर साहबने हुकुम दे दिया था कि जिसे वहां खड़े, बैठे, या खरीदते पाओ उसके मुंहमें कालिख लगाकर सिरपर सौ जूते लगाओ।

इन्स०—बहुत अच्छा। अंगूठेका निशान कर दो। हम तुम-से बहुत खुश हुए।

(*सलोनी गाती है।*)

"सैयां भये कोतवाल, अब डर काहेका।"

इन्स०—यह पगली क्या गा रही है। अरे पगली इधर आ।

सलोनी—(सामने आकर)

सैयां भये कोतवाल अब डर काहेका।

इन्स०—दारोगाजी, इसका बयान भी लिख लीजिये।

सलोनी—हां लिख लो। ठाकुर सबल सिंह मेरी बहूको घरसे भगा ले गये और पोतेको जेहल भेजवा दिया।

इन्स०—यह फजूल बातें मैं नहीं पूछता। बता यहां उन्होंने पंचायत खोली है न?

सलोनी—यह फजूल बातें मैं क्या जानूं ! मुझे पञ्चायतसे क्या लेना-देना है। जहाँ चार आदमी रहते हैं वहां पंचाइत रहती ही है। सनातनसे चली आती है, कोई नई बात है ! इन बातोंसे पुलिससे क्या मतलब ! तुम्हें तो देखना चाहिये सरकारके राजमें भले आदमियोंकी आबरू रहती है कि लुटती है । सो तो नहीं पंचाइत और बेगारका रोना ले बैठे । बेगार बन्द करनेको सभी कहते हैं। गांवके लोगोंको आपही अखरता है । सबल सिंहने यह कह दिया तो क्या अंधेर हो गया । शराब, ताड़ी, गांजा, भांग पीनेको सभी मना करते हैं । पुरान, भागवत, साधु, सन्त सभी इसको निखिद्ध कहते हैं । सबल सिंहने कहा तो क्या नई बात कही । जो तुम्हारा काम है वह करो, ऊटपटांग बातोंमें क्यों पड़ते हो ?

इन्स०—बुढ़िया शैतानकी खाला मालूम होती है ।

थानेदार—तो इन गवाहोंको अब जाने दूं ?

इन्स०—जी नहीं अभी (*Rehersal*) तो बाकी है। देखो जी तुमने मेरे रूबरू जो बयान दिया है वही तुम्हें बड़े साहबके इजलासपर देना होगा । ऐसा न हो, कोई कुछ कहे कोई कुछ । मुकदमा भी बिगड़ जाय और तुम लोग भी गलतबयानीके इलजाममें धर लिये जाओ । दारोगाजी शुरू कीजिये । तुम लोग सब साथ-साथ वही बातें कहो जो दारोगाजीकी जबानसे निकालें ।

दारोगा—ठाकुर सबल सिंह कहते थे कि सरकारी अदालतों-

की जड़ खोद डालो, भूलकर भी वहां न जाओ। सरकारका राज अदालतोंपर कायम है। अदालतोंको तर्क कर देनेसे राजकी बुनियाद हिल जायगी।

(सबके सब यही बात दुहराते हैं।)

दारोगा—अपने मुआमिले पञ्चायतोंमें तै कर लो।

सबके सब—अपने मुआमिले पचायतोंमें तै कर लो।

दारोगा—उन्होंने हुक्म दिया था कि किसी अफसरको बेगार मत दो।

सबके सब—उन्होंने हुक्म दिया था कि किसी अफसरको बेगार मत दो।

दारोगा—बेगार न मिलेगी तो कोई दौरा करने न आयेगा। तुम लोग जो चाहना करना। यह सुराजकी दूसरी सीढ़ी है।

सबके सब बेगार न मिलेगी तो कोई दौरा करने न आयेगा। यह सुराजकी दूसरी सीढ़ी है।

दारोगा—यह और कहो—तुम लोग जो जी चाहे करना।

इन्स०—यही जुमला तो जान है।

सबके सब—तुम लोग जो जी चाहे करना।

दारोगा—उन्होंने हुक्म दिया था कि जो नशेकी चीजें खरीदे उसका हुक्का-पानी बन्द कर दो।

सबके सब—उन्होंने हुक्म दिया था कि जो नशेकी चीजें

खरीदे उसका हुक्का पानी बन्द कर दो।

दारोगा—अगर इतने पर भी न माने तो उसके घरमें आग लगा दो।

सबके सब—अगर इतनेपर भी न माने तो उसके घरमें आग लगा दो।

दारोगा—उसके मुँहमें कालिख लगाकर सौ जूते लगाओ।

सबके सब—उसके मुँहमें कालिख लगाकर सौ जूते लगाओ।

दारोगा—जो आदमी विलायती कपड़े खरीदे उसे गधेपर सवार कराके गांवभरमें घुमाओ।

सबके सब—जो आदमी विलायती कपड़े खरीदे उसे गधे पर सवार कराके गांवमें घुमाओ।

दारोगा—जो पंचायतका हुक्म न माने, उसे उल्टे लटकाकर पचास बेंत लगाओ।

सबके सब—जो पंचायतका हुक्म न माने उसे उल्टे लटकाकर पचास बेंत लगाओ।

दारोगा—(इन्सपेक्टरसे) इतना तो काफी होगा।

इन्स०—इतना उन्हें जहन्नुम भेजनेके लिये काफी है। तुम लोग देखो खबरदार, इसमें एक हर्फका भी उलट फेर न हो। अच्छा अब चलना चाहिये। (कानिसटिबलोंसे) देखो, बकरे हों तो पकड़ लो।

सिपाही—बहुत अच्छा हजूर, दो नहीं चार।

दारोगा—एक पांच सेर घी भी लेते चलो।

सिपाही—अभी लीजिये सरकार।

(*दारोगा और इन्सपेक्टरका प्रस्थान*)

सलोनी गाती है - सैयां भये कोतवाल अब डर काहेका।

अब तो मैं पहनूँ अतलसका लहँगा।

और चबाऊं पान।

द्वारे बैठ नजारा मारूं॥

सैयां भये कोतवाल अब डर काहेका।

फत्तू—काकी गाती ही रहेगी?

सलोनी—जा तुझसे नहीं बोलती। तू भी डर गया।

फत्तू—काकी इन सभोंसे कौन लड़ता। इजलासपर जाकर जो सच्ची बात है वह कह दूंगा।

मंगरू—पुलिसके सामने जमींदार कोई चीज नहीं।

हरदास—पुलिसके सामने सरकार कोई चीज नहीं।

सलोनी—सच्चाईके सामने जमींदार, सरकार कोई चीज नहीं।

मंगरू—सच बोलनेमें निबाह नहीं है।

हरदास—सच्चेकी गर्दन सभी जगह मारी जाती है।

सलोनी—अपना धर्म तो नहीं बिगड़ता। तुम सब कायर हो। तुम्हारा मुंह देखना पाप है। मेरे सामनेसे हट जाओ।

(*प्रस्थान*)

दूसरा दृश्य

(स्थान—सबलसिंहका कमरा, समय—१० बजे दिन ।)

सबल—(घड़ीकी तरफ देखकर) १० बज गये। हलधरने अपना काम पूरा कर लिया। वह ९ बजेतक गंगासे लौट आते थे। कभी इतनी देर न होती थी। अब राजेश्वरी फिर मेरी हुई। चाहें ओढ़ूं, बिछाऊं या गलेका हार बनाऊं। प्रेमके हाथों यह दिन देखनेकी नौबत आयेगी, इसकी मुझे जरा भी शंका न थी। भाईकी हत्याके कल्पनामात्रसे ही रोएं खड़े हो जाते हैं। इस कुलका सर्वनाश होनेवाला है। कुछ ऐसे ही लक्षण दिखाई देते हैं। कितना उदार, कितना सच्चा! मुझसे कितना प्रेम, कितनी श्रद्धा थी! पर हो ही क्या सकता था। एक म्यानमें दो तलवारें कैसे रह सकती थीं। संसारमें प्रेम ही वह वस्तु है जिसके हिस्से नहीं हो सकते। यह अनौचित्यकी पराकाष्ठा थी कि मेरा छोटा भाई जिसे मैंने सदैव अपना पुत्र समझा मेरे साथ यह पैशाचिक व्यवहार करे। कोई देवता भी यह अमर्य्यादा नहीं कर सकता था। यह घोर

अपमान! इसका परिणाम और क्या होता? यही आपत्ति-धर्म था। इसके लिये पछताना व्यर्थ है। (एक क्षणके बाद) जी नहीं मानता, वही बातें याद आती हैं। मैंने कंचनकी हत्या क्यों कराई? मुझे स्वयं अपने प्राण देने चाहिये थे। मैं तो दुनियाका सुख भोग चुका था। स्त्री, पुत्र, सबका सुख पा चुका था। उसे तो अभी दुनियाकी हवातक न लगी थी। उपासना और आराधना ही उसका एकमात्र जीवनाधार थी। मैंने बड़ा अत्याचार किया।

(अचल सिंहका प्रवेश)

अचल—बाबूजी, अबतक चाचाजी गंगास्नान करके नहीं आये।

सबल—हां देर तो हुई। अबतक तो आ जाते थे।

अचल—किसीको भेजिये जाकर देख आये।

सबल—किसीसे मिलने चले गये होंगे।

अचल—मुझे तो न जाने क्यों डर लग रहा है। आजकल गंगाजी बढ़ रही हैं।

(सबल सिह कुछ जवाब नहीं देते।)

अचल—वह तैरने दूर निकल जाते थे।

(सबल चुप रहते हैं।)

अचल—आज जब वह नहाने जाते थे तो न जाने क्यों

मुझे देखकर उनकी आँखें भर गई थीं। मुझे प्यार करके कहा था 'ईश्वर तुम्हें चिरञ्जीवि करें।' इस तरह तो कभी आशीष नहीं देते थे।

(सबल रो पड़ते हैं और वहाँसे उठकर बाहर बरामदेमें चले जाते हैं, अचल कंचन सिंहके कमरेकी ओर जाता है।)

सबल—(मनमें) अब पछतानेसे क्या फायदा। जो कुछ होना था हो चुका। मालूम हो गया कि कामके आवेगमें बुद्धि, विद्या, विवेक सब साथ छोड़ देते हैं। यही भावी थी, यही होनहार था, यही विधाताकी इच्छा थी। राजेश्वरी, तुझे ईश्वरने क्यों इतनी रूप गुण-शीला बनाया? पहले पहल जब मैंने तुझसे बात की थी, तूने मेरा तिरस्कार क्यों न किया, मुझे कटु शब्द क्यों न सुनाये? मुझे कुत्तेकी भाँति दुत्कार क्यों न दिया? मैं अपनेको बड़ा सत्यवादी समझा करता था। पर पहले ही झोंकेमें उखड़ गया, जड़से उखड़ गया। मुलम्मेको मैं असली रंग समझ रहा था। पहली आंचमें मुलम्मा उड़ गया। अपनी जान बचानेके लिये मैंने कितनी घोर धूर्ततासे काम लिया। मेरी लज्जा, मेरा आत्माभिमान, सबकी क्षति हो गई! ईश्वर करे हलधर अपना वार न कर सका हो और मैं कञ्चनको जीता जागता आते देखूँ। मैं राजेश्वरीसे सदैवके लिये नाता तोड़ लूंगा। उसका मुंहतक न देखूंगा। दिलपर जो

कुछ बीतेगी झेल लूंगा।

(अधीर होकर बरामदेमें निकल आते हैं और रास्तेकी और टकटकी लगाकर देखते हैं।

ज्ञानीका प्रवेश)

ज्ञानी—अभी बाबूजी नहीं आये। ११ बज गये। भोजन ठण्ढा हो रहा है। कुछ कह नहीं गये, कबतक आयेंगे?

सबल—(कमरेमें आकर) मुझसे तो कुछ नहीं कहा।

ज्ञानी—तो आप चलकर भोजन कर लीजिये।

सबल—उन्हें भी आ जाने दो। तबतक तुम लोग भोजन करो।

ज्ञानी—हरज ही क्या है आप चलकर खा लें। उनका भोजन अलग रखवा दूंगी। दोपहर तो हुआ।

सबल—(मनमें) आजतक कभी ऐसा नहीं हुआ कि मैंने घरपर अकेले भोजन किया हो। ऐसे भोजन करनेपर धिक्कार है। भाईका वध कराके मैं भोजन करने जाऊं और स्वादिष्ट पदार्थोंका आनन्द उठाऊं। ऐसे भोजन करनेपर लानत है। (प्रगट) अकेले मुझसे भोजन न किया जायगा।

ज्ञानी—तो किसीको गंगाजी भेज दो। पता लगाये कि क्या बात है। कहां चले गये। मुझे तो याद नहीं आता कि उन्होंने कभी इतनी देर लगाई हो। जरा जाकर उनके कमरेमें

देखूं मामूली कपड़े पहनकर गये हैं या अचकन पाजामा भी पहना है।

(*जाती है और एक क्षणमें लौट आती है।*)

ज्ञानी—कपड़े को साधारण ही पहन कर गये हैं, पर कमरा न जाने क्यों भायँ भायँ कर रहा है, वहां खड़े होते एक भयसा लगता था। ऐसी शंका होती है कि वह अपनी मसनदपर बैठे हुए हैं पर दिखाई नहीं देते। न जाने क्यों मेरे तो रोएं खड़े हो गये और रोना आ गया। किसीको भेजकर पता लगवाइये।

(*सबल दोनों हाथोंसे मुंह छिपाकर रोने लगता है।*)

ज्ञानी—हाय, यह आप क्या करते हैं! इस तरह जी छोटा न कीजिये। वह अबोध बालक थोड़े ही हैं। आते ही होंगे।

सबल—(रोते हुए) आह ज्ञानी! अब वह घर न आयेंगे अब हम उनका मुंह फिर न देखेंगे।

ज्ञानी—किसीने कोई बुरी खबर कही है क्या? (सिसकियां लेती है।)

सबल—(मनमें) अब मनमें बात नहीं रह सकती। किसी तरह नहीं। वह आप ही बाहर निकली पड़ती है। ज्ञानीसे मुझे इतना प्रेम कभी न हुआ था। मेरा मन उसकी ओर खिंचा जाता है। (प्रगट) जो कुछ किया है मैंने ही किया है। मैं ही

विषकी गाठ हूं। मैंने ईर्षाके वश होकर..........यह अनर्थ किया है। ज्ञानी मैं पापी हूँ, राक्षस हूं, मेरे हाथ अपने भाईके खूनसे रंगे हुए हैं, मेरे सिरपर भाईका खून सवार है। मेरी आत्माकी जगह अब केवल कालिमाकी रेखा है! हृदयके स्थान-पर केवल पैशाचिक निर्दयता। मैंने तुम्हारे साथ दगाकी है। तुम और सारा संसार मुझे एक विचारशील, उदार पुण्यात्मा पुरुष समझते थे, पर मैं महान पापी, नराधम, धूर्त हूँ। मैंने अपने असली स्वरूपको सदैव तुमसे छिपाया। देवताके रूपमें मैं राक्षस था। मैं तुम्हारा पति बनने योग्य न था। मैंने एक पतिपरायण स्त्रीको कपटचालोंसे निकाला, उसे लाकर शहरमें रखा। कंचन सिंहको भी मैंने वहाँ दो तीन बार बैठे देखा। बस! उसी क्षणसे मैं ईर्षाकी आगमें जलने लगा और अन्तमें मैंने एक हत्यारेके हाथों......रोकर भैयाको कैसे पाऊँ? ज्ञानी, इन तिरस्कारके नेत्रोंसे न देखो। मैं ईश्वरसे कहता हूं तुम कल मेरा मुंह न देखोगी। मैं अपनी आत्माको कलुषित करनेके लिये अब और नहीं जीना चाहता। मैं अपने पापोंका प्रायश्चित एक ही दिनमें समाप्त कर दूंगा। मैंने तुम्हारे साथ दगा की, क्षमा करना।

ज्ञानी—(मनमें) भगवन् पुरुष इतने ईर्षालु, इतने विश्वास-घाती, इतने क्रूर, वज्रहृदय, होते हैं! आह! अगर मैंने स्वामी चेतनदासकी बातपर विश्वास किया होता तो यह नौबत न

आने पाती। पर मैंने तो उनकी बातोंपर ध्यान ही नहीं दिया। यह उसी अश्रद्धाका दण्ड है। (प्रगट) मैं आपको इससे ज्यादा विचारशील समझती थी। किसी दूसरेके मुँहसे यह बातें सुनकर मैं कभी विश्वास न करती।

सबल—ज्ञानी मुझे सच्चे दिलसे क्षमा करो। मैं स्वयं इतना दुखी हूं कि उसपर एक जौका बोझ भी मेरी कमर तोड़ देगा। मेरी बुद्धि इस समय भ्रष्ट हो गई है। न जाने क्या कर बैठूं। मैं आपेमें नहीं हूँ। तरह-तरहके आवेग मनमें उठते हैं। मुझमें उनको दबानेका सामर्थ नहीं है। कंचनके नामसे एक धर्मशाला और ठाकुरद्वारा अवश्य बनवाना। मैं तुमसे यह अनुरोध करता हूं। यह मेरी अन्तिम प्रार्थना है। विधाताकी यह वीभत्स लीला, यह पैशाचिक तांडव जल्द समाप्त होनेवाला है। कचनकी यही जीवन-लालसा थी। इन्हीं लालसाओंपर उसने जीवनके सब आनन्दों, सभी पार्थिव सुखोंको अर्पण कर दिया था। अपनी लालसाओंको पुरा होते देखकर उसकी आत्मा प्रसन्न होगी और इस कुटिल निर्दय आघातको क्षमा कर देगी।

(अचलसिंहका प्रवेश)

ज्ञानी—(आंखें पोंछकर) बेटा, क्या अभी तुमने भी भोजन नहीं किया?

अचल—अभी चचाजी तो आये ही नहीं। आज उनके

कमरेमें जाते हुए न जाने क्यों भय लगता है। ऐसा मालूम होता है कि वह कहीं छिपे बैठे हैं और दिखाई नहीं देते। उनकी छाया कमरेमें छिपी हुई जान पड़ती है।

सबल—(मनमें) इसे देखकर चित्त कातर हो रहा है। इसे फूलते-फलते देखना मेरे जीवनकी सबसे बड़ी लालसा थी। कैसा चतुर, सुशील, हंसमुख लड़का है। चेहरेसे प्रतिभा टपकी पड़ती है। मनमें क्या क्या इरादे थे। इसे जर्मनी भेजना चाहता था। संसारयात्रा कराके इसकी शिक्षाको समाप्त करना चाहता था। इसकी शक्तियोंका पूरा विकास करना चाहता था पर सारी आशाएं धूलमें मिल गईं (अचलको गोदमें लेकर) बेटा, तुम जाकर भोजन कर लो मैं तुम्हारे चचाजीको देखने जाता हूँ।

अचल—आप लोग आ जायंगे तो साथही मैं भी खाऊंगा। अभी भूख नहीं है।

सबल—और जो मैं शामतक न आऊं ?

अचल—आधी राततक आपकी राह देखकर तब खा लूंगा। मगर आप ऐसा प्रश्न क्यों करते हैं ?

सबल—कुछ नहीं योंही। अच्छा बताओ, मैं आज मर जाऊं तो तुम क्या करोगे ?

ज्ञानी—कैसा अशगुन मुंहसे निकालते हो।

अचल—(सबलसिंहकी गर्दनमें हाथ डालकर) आप तो अभी जवान हैं, स्वस्थ हैं, ऐसी बातें क्यों सोचते हैं ?

सबल—कुछ नहीं, तुम्हारी परीक्षा करना चाहता हूँ।

अचल—(सबलकी गोदमें सिर रखकर) नहीं कोई और ही कारण है। (रोकर) बाबूजी मुझसे छिपाइये न, बतलाइये आप क्यों इतने उदास हैं, अम्मां क्यों रो रही हैं ? मुझे भय लग रहा है। जिधर देखता हूँ उधर ही बेरौनकी सी मालूम होती है, जैसे पिंजरेमेंसे चिड़िया उड़ गई हो।

कई सिपाही और चौकीदार बन्दूकें और लाठियाँ लिये हातेमें घुस आते हैं, और थानेदार तथा इन्सपेक्टर और सुपरिन्टेन्डेन्ट घोड़ोंसे उतरकर बरामदेमें खड़े हो जाते हैं, ज्ञानी भीतर चली जाती है, अचल और सबल बाहर निकल आते हैं।)

इन्सपेक्टर—ठाकुर साहब, आपकी खानातलाशी होगी। यह वारण्ट है।

सबल—शौकसे लीजिये।

सुपरिण्टेण्डेण्ट—हम तुम्हारा रियासत छीन लेगा। हम तुमको रियासत दिया है, तब तुम इतना बड़ा आदमी बना है और मोटरमें बैठा घूमता है। तुम हमारा बनाया हुआ है। हम तुमको अपने कामके लिये रियासत दिया है और तुम सरकारसे

दुशमनी करता है। तुम दोस्त बनकर तलवार मारना चाहता है। दगाबाज है। हमारे साथ पोलो खेलता है, क्लबमें बैठता है, दावत खाता है और हमीसे दुशमनी रखता है। यह रियासत तुमको किसने दिया ?

सबल—(सरोष होकर) मुगल बादशाहोंने। हमारे खानदानमें २५ पुश्तोंसे यह रियासत चली आती है।

सुपरिण्टेन्डेण्ट—झूठ बोलता है। मुगल लोग जिसको चाहता था जागीर देता था, जिससे नाराज हो जाता था उससे जागीर छीन लेता था। जागीरदार मौरूसी नहीं होता था। तुम्हारा बुजुर्ग लोग मुगल बादशाहोंसे ऐसा ही बदखाही करता जैसा तुम हमारे साथ कर रहा है तो जागीर छिन गया होता। हम तुमको असामियोंसे लगान वसूल करनेके लिये कमीसन देता है और तुम हमारा जड़ खोदना चाहता है। गाँवमें पञ्चायत बनाता है, लोगोंको ताड़ी शराब पीनेसे रोकता है,हमारा रसद बेगार बन्द करता है। हमारा गुलाम होकर हमको आंखें दिखाता है। जिस बर्तनमें पानी पीता है उसीमें छेद करता है। सरकार चाहे तो एक घड़ीमें तुमको मिट्टीमें मिला दे सकता है।

(दोनों हाथोंसे चुटकी बजाता है।)

सबल—आप जो काम करते हैं वह काम कीजिये और अपनी राह लीजिये। मैं आपसे सिविक्स और पालिटिक्सके

लेक्चर नहीं सुनना चाहता।

सुपरि०—हम न रहे तो तुम एक दिन भी अपनी रियासत-पर काबू नहीं पा सकता।

सबल—मैं आपसे डिसकशन (बहस) नहीं करना चाहता पर यह समझ रखिये कि अगर मान लिया जाय सरकारने ही हमको बनाया तो उसने अपनी रक्षा और स्वार्थसिद्धिके ही लिये यह पालिसी कायम की। जमींदारोंकी बदौलत सरकार-का राज कायम है। जब-जब सरकारपर कोई सङ्कट पड़ा है जमींदारोंने ही उसकी मदद की है। अगर आपका खियाल है कि जमींदारोंको मिटाकर आप राज्य कर सकते हैं तो भूल है। आपकी हस्ती जमींदारोंपर निर्भर है।

सुपरि०—हमने अभी किसानोंके हमलेसे तुमको बचाया नहीं तो तुम्हारा निशान भी न रहता।

सबल—मैं आपसे बहस नहीं करना चाहता।

सुपरि०—हम तुमसे चाहता है कि जब रैयतके दिलमें बद-खाही पैदा हो तो तुम हमारा मदद करे। सरकारसे पहले वही लोग बदखाही करेगा जिसके पास कुछ जायदाद नहीं है, जिसका सरकारसे कोई कनेकशन (सम्बन्ध) नहीं है। हम ऐसे आद-मियोंका तोड़ करनेके लिये ऐसे लोगोंको मजबूत करना चाहता है जो जायदादवाला है और जिसका हस्ती सरकारपर है। हम

तुमसे रैयतको दबानेका काम लेना चाहता है।

सबल—और लोग आपको इस काममें मदद दे सकते हैं, मैं नहीं दे सकता। मैं रैयतका मित्र बनकर रहना चाहता हूँ, शत्रु बनकर नहीं। अगर रैयतको गुलामीमें जकड़े और अन्धकारमें डाले रखनेके लिये जमींदारोंकी सृष्टिकी गई है तो मैं इस अत्याचारका पुरस्कार न लूँगा चाहे वह रियासत ही क्यों न हो। मैं अपने देश-बन्धुवोंके मानसिक और आत्मिक विकासका इच्छुक हूँ। दूसरोंको मूर्ख और अशक्त रखकर अपना ऐश्वर्य्य नहीं चाहता।

सुपरि०—तुम सरकारसे बगावत करता है।

सबल—अगर इसे बगावत कहा जाता है तो मैं बागी ही हूँ।

सुपरि०—हां यही बगावत है। देहातोंमें पंचायत खोलना बगावत है, लोगोंको शराब पीनेसे रोकना बगावत है, लोगोंको अदालतोंमें जानेसे रोकना बगावत है, सरकारी आदमियोंका रसद बेगार बन्द करना बगावत है।

सबल—तो फिर मैं बागी हूँ।

अचल—मैं भी बागी हूँ।

सुपरि०—गुस्ताख लड़का।

इन्स०—हजूर कमरेमें चलें, वहां मैंने बहुतसे कागजात

जमा कर रखे हैं।

सुपरि०—चलो।

इन्स०—देखिये यह पंचायतोंकी फिहरिस्त है और पंचोंके नाम हैं।

सुप०—बहुत कामकी चीज है।

इन्स०—यह पंचायतोंपर एक मजमून है।

सुप०—बहुत कामकी चीज है।

इन्स०—यह कौमके लीडरोंकी तस्वीरोंका अल्बम है।

सुप०—बहुत कामका चीज है।

इन्स०—यह चन्द किताबें हैं, मैजिनीके मजामीन, वीर हारडीका हिन्दुस्तानका सफरनामा, भक्त प्रहलादका वृत्तान्त, टाल्स्टायकी कहानियां।

सुप०—सब बड़े कामका चीज है।

इन्स०—यह मिसमेरिजिमकी किताब है।

सुप०—ओह, यह बड़े कामका चीज है।

इन्स०—यह दवाइयोंका बक्स है।

सुप०—देहातियोंको बसमें करनेके लिये! यह भी बहुत कामका चीज है।

इन्स०—यह मैजिक लालटेन है।

सुप०—बहुत ही कामका चीज है।

इन्स०—यह लेन देनकी बही है।

सुप०—(*Most Important*) बड़े कामका चीज। इतना सबूत काफी है। अब चलना चाहिये।

एक कानिस्टेबल—हजूर, बगीचेमें एक अखाड़ा भी है।

सुप०—बहुत बड़ा सबूत है।

दूसरा कान्स०—हजूर, अखाड़ेके आगे एक गऊशाला भी है। कई गायें-भैंसे बंधी हुई हैं।

सुप०—दूध पीता है जिसमें बगावत करनेके लिये ताकत हो जाय। बहुत बड़ा सबूत है। वेल सबलसिंह हम तुमको गिरफ्तार करता है।

सबल—आपको अधिकार है।

(चेतनदासका प्रवेश)

इन्स०—आइये स्वामीजी; तशरीफ लाइये।

चेतन—मैं जमानत देता हूँ।

इन्स०—आप! यह क्योंकर!

सबल—मैं जमानत नहीं देना चाहता। मुझे गिरफ्तार कीजिये।

चेतन—नहीं, मैं जमानत दे रहा हूँ।

सबल—स्वामीजी, आप दयाके स्वरूप हैं, पर मुझे क्षमा कीजियेगा, मैं जमानत नहीं देना चाहता।

चेतन—ईश्वरकी इच्छा है कि मैं तुम्हारी जमानत करूं।

सुप०—वेल इन्सपेक्टर, आपकी क्या राय है? जमानत लेनी चाहिये या नहीं?

इन्स०—हजूर स्वामीजी बड़े मोतबर, सरकारके बड़े खैर-ख्वाह हैं। इनकी जमानत मंजूर कर लेनेमें कोई हर्ज नहीं है।

सुप०—हम पांच हजारसे कम न लेगा।

चेतन—मैं स्वीकार करता हूं।

सबल—स्वामीजी! मेरे सिद्धान्त भङ्ग हो रहे हैं।

चेतन—ईश्वरकी यही इच्छा है।

(पुलिसके कर्मचारियोंका प्रस्थान। ज्ञानी अन्दरसे निकलकर चेतनदासके पैरोंपर गिर पड़ती हैं)

चेतन—माई तेरा कल्याण हो।

ज्ञानी—आपने आज मेरा उद्धार कर दिया।

चेतन—सब कुछ ईश्वर करता है।

(प्रस्थान)

तृतीय दृश्य

—:❀:—

(स्थान—स्वामी चेतनदासकी कुटी, समय—संध्या)

चेतनदास—(मनमें) यह चाल मुझे खूब सूझी। पुलिस-वाले अधिकसे अधिक कोई अभियोग चलाते। सबलसिंह ऐसे काँटोंसे डरनेवाला पुरुष नहीं है। पहले मैंने समझा था उस चालसे यहां उसका खूब अपमान होगा। पर यह अनुमान ठीक न निकला। दो घण्टे पहले शहरमें सबलकी जितनी प्रतिष्ठा थी, अब उससे सतगुनी है। अधिकारियोंकी दृष्टिमें चाहे वह गिर गया हो पर नगरनिवासियोंकी दृष्टिमें अब वह देव-तुल्य है। यह काम हलधर ही पूरा करेगा। मुझे उसके पीछेका रास्ता साफ़ करना चाहिये।

(ज्ञानीका प्रवेश)

ज्ञानी—महाराज आप उस समय इतनी जल्द चले आये कि मुझे आपसे कुछ कहनेका अवसर ही न मिला। आप यदि सहाय न होते तो आज मैं कहींकी न रहती। पुलिसवाले किसी

दूसरे व्यक्तिकी जमानत न लेते। आपके योगबलने उन्हें परास्त कर दिया।

चेतन—माई, यह सब ईश्वरकी महिमा है। मैं तो केवल उसका तुच्छ सेवक हूँ।

ज्ञानी—आपके सम्मुख इस समय मैं बहुत निर्लज्ज बनकर आई हूं। मैं अपराधिनी हूँ, मेरा अपराध क्षमा कीजिये। आप ने मेरे पतिदेवके विषयमें जो बातें कही थीं वह एक-एक अक्षर सच निकलीं। मैंने आपपर अविश्वास किया। मुझसे यह घोर अपराध हुआ। मैं अपने पतिको देव-तुल्य समझती थी। मुझे अनुमान हुआ कि आपको किसीने भ्रममें डाल दिया है। मैं नहीं जानती थी कि आप अन्तर्यामी हैं। मेरा अपराध क्षमा कीजिये।

चेतन—तुझे मालूम नहीं है, आज तेरे पतिने कैसा पैशाचिक काम कर डाला है? मुझे इसके पहले तुझसे कहनेका अवसर नहीं प्राप्त हुआ।

ज्ञानी—नहीं महाराज, मुझे मालूम है। उन्होंने स्वयं मुझसे सारा वृत्तान्त कह सुनाया। भगवन्, यदि मैंने पहले ही आपकी चेतावनीपर ध्यान दिया होता तो आज इस हत्याकाण्डकी नौबत न आती। यह सब मेरी अश्रद्धाका दुष्परिणाम है। मैंने आप जैसे महात्मा पुरुषका अविश्वास किया, उसीका यह दण्ड

है। अब मेरा उद्धार आपके सिवा और कौन कर सकता है। आपकी दासी हूँ, आपकी चेरी हूँ। मेरे अवगुणोंको न देखिये। अपनी विशाल दयासे मेरा बेड़ा पार लगाइये।

चेतन—अब मेरे वशकी बात नहीं। मैंने तेरे कल्याणके लिये, तेरी मनोकामनाओंको पूरा करनेके लिये बड़े-बड़े अनुष्ठान किये थे। मुझे निश्चय था कि तेरा मनोरथ सिद्ध होगा। पर इस पापाभिनयने मेरे समस्त अनुष्ठानोंको विफल कर दिया। मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि यह कुकर्म तेरे कुलका सर्वनाश कर देगा।

ज्ञानी—भगवन्, मुझे भी यही शंका हो रही है। मुझे भय है कि मेरे पतिदेव स्वयं पश्चात्तापके आवेशमें अपना प्राणान्त न कर दें। उन्हें इस समय अपनी दुष्कृत्तिपर अत्यन्त ग्लानि हो रही है। आज वह बैठे-बैठे देरतक रोते रहे। इस दुख और निराशाकी दशामें उन्होंने प्राणोंका अन्त कर दिया तो कुलका सर्वनाश हो जायगा। इस सर्वनाशसे मेरी रक्षा आपके सिवा और कौन कर सकता है। आप जैसा दयालु स्वामी पाकर अब किसकी शरण जाऊँ? ऐसा कोई यत्न कीजिये कि उनका चित्त शांत हो जाय। मैं अपने देवरका जितना आदर और प्रेम करती थी वह मेरा हृदय ही जानता है। मेरे पति भी भाईको पुत्रके समान समझते थे। वैमनस्यका लेश भी न था। पर अब तो

जो कुछ होना था हो चुका। इसका शोक जीवन पर्य्यन्त रहेगा। अब कुलकी रक्षा कीजिये। मेरी आपसे यही याचना है।

चेतनदास—पापका दण्ड ईश्वरीय नियम है। उसे कौन भङ्ग करेगा।

ज्ञानी—योगीजन चाहें तो ईश्वरीय नियमोंको भी झुका सकते हैं।

चेतन—इसका तुझे विश्वास है?

ज्ञानी—हां महाराज मुझे पूरा विश्वास है।

चेतन—श्रद्धा है?

ज्ञानी—हां महाराज पूरी श्रद्धा है।

चेतन—भक्तको अपने गुरुके सामने अपना तन, मन, धन, सभी समर्पण करना पड़ता है। यही अर्थ, धर्म, काम और मोक्षके प्राप्त करनेका एकमात्र साधन है। भक्त गुरूकी बातोंपर, उपदेशोंपर, व्यवहारोंपर कोई शंका नहीं करता। वह अपने गुरूको ईश्वर-तुल्य समझता है। जैसे कोई रोगी अपनेको वैद्यके हाथोंमें छोड़ देता है, उसी भांति भक्त भी अपने शरीरको अपनी बुद्धिको और आत्माको गुरूके हाथोंमें छोड़ देता है। तुम अपना कल्याण चाहती है तो तुझे भक्तोंके धर्मका पालन करना पड़ेगा।

ज्ञानी—महाराज मैं अपना तन मन धन सब आपके चरणों पर अर्पण करती हूँ।

चेतन—शिष्यका अपने गुरूके साथ आत्मिक सम्बन्ध होता है। उसके और सभी सम्बन्ध पार्थिव होते हैं। आत्मिक सम्बन्धके सामने पार्थिव सम्बन्धोंका कुछ भी मूल्य नहीं होता। मोक्षके सामने सांसारिक सुखोंका कुछ भी मूल्य नहीं है। मोक्ष-पद-प्राप्ति ही मानव जीवनका उद्देश्य है। इसी उद्देश्यको पूरा करनेके लिये प्राणीको ममत्वका त्याग करना चाहिये। पिता, माता, पति, पत्नी, पुत्र, पुत्री, शत्रु, मित्र यह सभी सम्बन्ध पार्थिव हैं। यह सब मोक्षमार्गकी बाधाएं हैं। इनसे निवृत्त होकर ही मोक्षपद प्राप्त हो सकता है। केवल गुरूकी कृपादृष्टि ही उस महान पदपर पहुँचा सकती है। तू अभीतक भ्रांतिमें पड़ी हुई है। तू अपने पति और पुत्र, धन और सम्पत्तिकोही जीवन सर्वस्व समझ रही है। यही भ्रांति तेरे दुख और शोक-का मूल कारण है। जिस दिन तुझे इस भ्रांतिसे निवृत्ति होगी उसी दिन तुझे मोक्षमार्ग दिखाई देने लगेगा। तब इन सांसा-रिक सुखोंसे तेरा मन आप ही आप हट जायगा। तुझे इनकी असारता प्रगट होने लगेगी। मेरा पहला उपदेश यह है कि गुरू ही तेरा सर्वस्व है। मैं ही तेरा सब कुछ हूँ।

ज्ञानी—महाराज, आपकी अमृतवाणीसे मेरे चित्तको बड़ी

शान्ति मिल रही है।

चेतन—मैं तेरा सर्वस्व हूं। मैं तेरी सम्पत्ति हूँ, तेरी प्रतिष्ठा हूँ, तेरा पति हूँ, तेरा पुत्र हूँ, तेरी माता हूँ, तेरा पिता हूँ, तेरा स्वामी हूं, तेरा सेवक हूँ, तेरा दान हूँ, तेरा व्रत हूँ। हाँ, मैं तेरा स्वामी हूँ और तेरा ईश्वर हूँ। तू राधिका है मैं तेरा कन्हैया हूँ, तू सती है मैं तेरा शिव हूं, तू पत्नी है, मैं तेरा पति हूँ, तू प्रकृति है, मैं पुरुष हूं, तू जीव है, मैं आत्मा हूं, तू स्वर है, मैं उसका लालित्य हूँ, तू पुष्प है, मैं उसका सुगन्ध हूँ।

ज्ञानी—भगवान, मैं आपके चरणोंकी रज हूँ। आपकी सुधा वर्षासे मेरी आत्मा तृप्त हो गई।

चेतन—तेरा पति तेरा शत्रु है, जो तुझे अपने कुकृत्योंका भागी बनाकर तेरी आत्माका सर्वनाश कर रहा है।

ज्ञानी—(मनमें) वास्तवमें उनके पीछे मेरी आत्मा कलुषित हो रही है। उनके लिये मैं अपनी मुक्ति क्यो बिगाड़ूं। अब उन्होंने अधर्म पथपर पग रखा है। मैं उनकी सहगामिनो क्यों बनूं ? (प्रगट) स्वामीजी, अब मैं आपकी ही शरण आई हूँ, मुझे उबारिये।

चेतन—प्रिये, हम और तुम एक हैं, कोई चिन्ता मत करो। ईश्वरने तुम्हें मंझधारमें डूबनेसे बचा लिया। वह देखो सामने ताकपर बोतल है। उसमें महाप्रसाद रखा हुआ है। उसे उतार

कर अपने कोमल हाथोंसे मुझे पिलाओ और प्रसाद स्वरूप स्वयं पान करो। तुम्हारा अन्तःकरण आलोकमय हो जायगा। सांसारिकताकी कालिमा एक क्षणमें कट जायगी और भक्तिका उज्वल प्रकाश प्रस्फुटित हो जायगा। यह वह सोमरस है जो ऋषिगण पान करके योगबल प्राप्त किया करते थे।

(ज्ञानी बोतल उतारकर चेतनदासके कमण्डलमें उंडेलती है, चेतनदास पी जाते हैं)

चेतन—यह प्रसाद है, तुम भी पान करो।

ज्ञानी—भगवन्, मुझे क्षमा कीजिये।

चेतन—प्रिये, यह तुम्हारी पहली परीक्षा है।

ज्ञानी—(कमण्डल मुंहसे लगाकर पीती है। तुरत उसे अपने शरीरमें एक विशेष स्फूर्तिका अनुभव होता है।) स्वामिन् यह तो कोई अलौकिक वस्तु है।

चेतन—प्रिये, यह ऋषियोंका पेय पदार्थ है। इसे पीकर वह चिरकाल तक तरुण बने रहते थे। उनकी शक्तियां कभी क्षीण न होती थीं। थोड़ासा और दो। आज बहुत दिनोंके बाद यह शुभ अवसर प्राप्त हुआ है।

(ज्ञानी बोतल उठाकर कमण्डलमें उँडेलती है। चेतन-दास पी जाते हैं। ज्ञानी स्वयं थोड़ासा निकालकर पीती है)

चेतन—(ज्ञानीके हाथोंको पकड़कर) प्रिये, तुम्हारे हाथ कितने कोमल हैं, ऐसा जान पड़ता है मानों फूलकी पंखड़ियाँ हैं।

(ज्ञानी झिझककर हाथ खींच लेती है)

प्रिये, झिझको नहीं, यह वासना जनित प्रेम नहीं है। यह शुद्ध, पवित्र प्रेम है। यह तुम्हारी दूसरी परीक्षा है।

ज्ञानी—मेरे हृदयमें बड़े वेगसे धड़कन हो रही है।

चेतन—यह धड़कन नहीं है, विमल प्रेमकी तरङ्गे हैं जो वक्ष के किनारोंसे टकरा रही हैं। तुम्हारा शरीर फूलकी भाँति कोमल है। उस वेगका सहन नहीं कर सकता। इन हाथोंके स्पर्शसे मुझे वह आनन्द मिल रहा है जिसमें चन्द्रका निर्मल प्रकाश, पुष्पोंका मनोहर सुगन्ध, समीरके शीतल मन्द झोंके और जल-प्रवाहका मधुर गान, सभी समाविष्ट हो गये हैं।

ज्ञानी—मुझे चक्कर सा आ रहा है। जान पड़ता है लहरोंमें बही जाती हूँ।

चेतन—थोड़ासा सोमरस और निकालो। सञ्जीवनी है।

(ज्ञानी बोतलसे कमण्डलमें उँडेलती है, चेतनदास पी जाता है, ज्ञानी भी दो तीन घूँट पीती है।)

चेतन—आज जीवन सफल हो गया। ऐसे सुखके एक क्षण-पर समग्र जीवन भेंट कर सकता हूँ।

(ज्ञानीके गलेमें बाहें डालकर आलिङ्गन करना चाहता है, ज्ञानी झिझक कर पीछे हट जाती है।)

चेतन--प्रिये, यह भक्ति मार्गकी तीसरी परीक्षा है!

(ज्ञानी अलग खड़ी होकर रोती है)

चेतन—प्रिये..................

ज्ञानी--(उच्च स्वरसे) कोचवान गाड़ी लावो।

चेतन--इतनी अधीर क्यों हो रही हो? क्या मोक्षपदके निकट पहुंचकर फिर उसी मायावी संसारमें लिप्त होना चाहती हो? यह तुम्हारे लिये कल्याणकारी न होगा।

ज्ञानी—मुझे मोक्षपद प्राप्त हो या न हो, यह ज्ञान अवश्य प्राप्त हो गया कि तुम धूर्त, कुटिल, भ्रष्ट, दुष्ट, पापी हो। तुम्हारे इस भेषका अपमान नहीं करना चाहती, पर यह समझ रखो कि तुम सरला स्त्रियोंको इस भांति दगा देकर, अपनी आत्माको नर्ककी ओर ले जा रहे हो। तुमने मेरे शरीरको अपने कलुषित हाथोंसे स्पर्श करके सदाके लिये विकृत कर दिया। तुम्हारे मनोविकारोंके सम्पर्कसे मेरी आत्मा सदाके लिये दूषित हो गई। तुमने मेरे व्रतकी हत्या कर डाली। अब मैं अपनेहीको अपना मुंह नहीं दिखा सकती। सतीत्व जैसी अमूल्य वस्तु खोकर मुझे ज्ञात हुआ कि मानव-चरित्रका कितना पतन हो सकता है। अगर तुम्हारे हृदयमें

मनुष्यत्वका कुछ भी अंश शेष है तो मैं उसीको सम्बोधित करके विनय करती हूँ कि अब अपनी आत्मापर दया करो और इस दुष्टाचरणको त्यागकर सद्वृत्तियोंका आवाहन करो।

(कुटीसे बाहर निकलकर गाड़ीमें बैठ जाती है)

कोचवान—किधर ले चलूं ?

ज्ञानी—सीधे घर चलो।

चतुर्थ दृश्य

(स्थान—राजेश्वरीका मकान, समय—१० बजे रात।)

राजेश्वरी—(मनमें) मेरे ही लिये जीवनका निर्वाह करना क्यों इतना कठिन हो रहा है। संसारमें इतने आदमी पड़े हुए हैं। सब अपने-अपने धन्धोंमें लगे हुए हैं। मैं ही क्यों इस चक्करमें डाली गई हूँ। मेरा क्या दोष है? मैंने कभी अच्छा खाने-पहनने या आरामसे रहनेकी इच्छा की जिसके बदलेमें मुझे यह दण्ड मिला हो? मैं जबरदस्ती इस कारागारमें बन्द की गई हूँ। यह सब बिलासकी चीजें जबरदस्ती मेरे गले मढ़ी गई हैं। एक धनी पुरुष मुझे अपने इशारोंपर नचा रहा है। मेरा दोष इतना ही है कि मैं रूपवती हूँ और निर्बल हूँ। इसी अपराधकी यह सजा मुझे मिल रही है। जिसे ईश्वर धन दे, उसे इतना सामर्थ्य भी दे कि धनकी रक्षा कर सके। निर्बल प्राणियोंको रत्न देना उनपर अन्याय करना है।

हा! कंचनसिंहपर आज न जाने क्या बीती। सबलसिंहने अवश्य ही उनको मार डाला होगा। मैंने उनपर कभी क्रोध

चढ़ते नहीं देखा था। क्रोधमें तो मानों उनपर भूत सवार हो जाता है। मरदोंको उत्तेजित कर देना कितना सरल है। उनकी नाड़ियोंमें रक्तकी जगह रोष और ईर्षाका प्रवाह होता है। ईर्षाकी ही मिट्टीसे उनकी सृष्टि हुई है। यह सब विधाताकी बिषम लीला है।

(*गाती है*)

दयानिधि तेरी गति लखि न परी।

(*सबलसिहका प्रवेश*)

राजेश्वरी—आइये, आपकी ही बाट जो रही थी। उधर ही मन लगा हुआ था। आपकी बातें याद करके शंका और भयसे चित्त बहुत व्याकुल हो रहा था। पूछते डरती हूं......

सबल—(मलिन स्वरसे) जिस बातकी तुम्हें शंका थी वह हो गई।

राजे०—अपने ही हाथों?

सबल—नहीं। मैंने क्रोधके आवेगमें चाहे मुंहसे जो बक डाला हो, पर अपने भाईपर मेरे हाथ नहीं उठ सके। पर इससे मैं अपने पापका समर्थन नहीं करना चाहता। मैंने स्वयं हत्या की और उसका सारा भार मुझपर है। पुरुष कड़ेसे कड़ा आघात सह सकता है। बड़ीसे बड़ी मुसीबत झेल सकता है, पर यह चोट नहीं सह सकता। यही उसका मर्मस्थान है।

एक तालेमें दो कुञ्जियाँ साथ-साथ चली जायं, एक म्यानमें साथ दो तलवारें रहें, एक कुल्हाड़ीमें साथ दो बेंट लगें, पर एक स्त्रीके दो चाहनेवाले नहीं रह सकते, असम्भव है।

राजे०—एक पुरुषको चाहनेवाली तो कई स्त्रियाँ होती हैं।

सबल—यह उनके अपङ्ग होनेके कारण हैं। एक ही भाव दोनोंके मनमें उठते हैं। पुरुष शक्तिशाली है, वह अपने क्रोधको व्यक्त कर सकता है। स्त्री मनमें ऐंठकर रह जाती है।

राजे०—क्या आप समझते थे कि मैं कंचनसिंहको मुँह लगा रही हूँ। उन्हें केवल यहाँ बैठे देखकर आपको इतना उबलना न चाहिये था।

सबल—तुम्हारे मुँहसे यह तिरस्कार कुछ शोभा नहीं देता। तुमने अगर सिरेसे ही उसे यहां न घुसने दिया होता तो आज यह नौबत न आती। तुम अपनेको इस इलजामसे मुक्त नहीं कर सकती।

राजे०—एक तो आपने मुझपर सन्देह करके मेरा अपमान किया, अब आप इस हत्याका भार भी मुझपर रखना चाहते हैं। मैंने आपके साथ ऐसा कोई व्यवहार नहीं किया था कि आप इतना अविश्वास करते।

सबल—राजेश्वरी, इन बातोंसे दिल न जलाओ। मैं दुखी हूं, मुझे तसकीन दो, मैं घायल हूँ, मेरे घावपर मरहम रखो। मैंने

वह रत्न हाथसे खो दिया जिसका जोड़ अब संसारमें मुझे न मिलेगा। कंचन आदर्श भाई था। मेरा इशारा उसके लिये हुक्म था। मैंने जरा सा इशारा कर दिया होता तो वह भूलकर भी इधर पग न रखता। पर मैं अन्धा हो रहा था, उन्मत्त हो रहा था। मेरे हृदयकी जो दशा हो रही है वह तुम देख सकती तो कदाचित् तुम्हें मुझपर दया आती। ईश्वरके लिये मेरे घावों पर नमक न छिड़को। अब तुम्हीं मेरे जीवनका आधार हो। तुम्हारे लिये मैंने इतना बड़ा बलिदान किया है। अब तुम मुझे पहलेसे कहीं अधिक प्रिय हो। मैंने पहले सोचा था केवल तुम्हारे दर्शनोंसे, तुम्हारी मीठी बातोंको सुननेसे, तुम्हारी तिरछी चितवनोंसे, मैं तृप्त हो जाऊँगा। मैं केवल तुम्हारा सहवास चाहता था। पर अब मुझे अनुभव हो रहा है कि मैं गुड़ खाना और गुलगुलोंसे परहेज करना चाहता था। मैं भरे प्यालेको उछालकर भी चाहता था कि उसका पानी न छलके। नदीमें जाकर भी चाहता था कि दामन न भीगे। पर अब मैं तुमको पूर्णरूपसे चाहता हूं। मैं तुम्हारा सर्वस्व चाहता हूँ। मेरी विकल आत्माके लिये सन्तोषका केवल यही एक आधार है। अपने कोमल हाथोंको मेरी दहकती हुई छातीपर रखकर शीतल कर दो।

राजे०—मुझे अब आपके समीप बैठते हुए भय होता है।

करूंगा। पर राजेश्वरी, मुझे तुमसे इस निर्दयताकी आशा न थी। सौंदर्य्य और दयामें विरोध है, इसका मुझे अनुमान न था। मगर इसमें तुम्हारा दोष नहीं है। यह अवस्था ही ऐसी है। हत्यारेपर कौन दया करेगा? जिस प्राणीने सगे भाईको ईर्षा और दम्भके वश होकर वध करा दिया वह इसी योग्य है कि चारों ओर उसे धिक्कार मिले। उसे कहीं मुंह दिखानेका ठिकाना न रहे। उसके पुत्र और स्त्री भी उसकी ओरसे आंखें फेर लें, उसके मुंहमें कालिमा पोत दी जाय और उसे हाथीके पैरोंसे कुचलवा दिया जाय। उसके पापका यही दंड है। राजेश्वरी, मनुष्य कितना दीन, कितना परवश प्राणी है। अभी एक सप्ताह पहले मेरा जीवन कितना सुखमय था। अपनी नौकामें बैठा हुआ धीमी-धीमी लहरोंपर बहता, समीरके शीतल, मन्द तरङ्गोंका आनन्द उठाता चला जाता था। क्या जानता था कि एक ही क्षणमें वह मंद तरंगें इतनी भयङ्कर हो जायंगी, शीतल झोंके इतने प्रबल हो जायंगे कि नावको उलट देंगे। सुख और दुख, हर्ष और शोकमें उससे कहीं कम अन्तर है जितना हम समझते हैं। आंखोंका एक जरासा इशारा, मुंहका एक जरासा शब्द, हर्षको शोक और सुखको दुख बना सकता है। लेकिन हम यह सब जानते हुए भी सुखपर लौ लगाये रहते हैं। यहां तक कि फांसीपर चढ़नेसे एक क्षण पहले तक हमें सुखकी

लालसा घेरे रहती है। ठीक वही दशा मेरी है। जानता हूं कि चन्द घण्टोंका और मेहमान हूं, निश्चय है कि फिर ये आंखें सूर्य्य और आकाशको न देखेंगी पर तुम्हारे प्रेमकी लालसा हृदयसे नहीं निकलती।

राजे०—(मनमें) इस समय यह वास्तवमें बहुत दुःखी हैं। इन्हें जितना दण्ड मिलना चाहिये था उससे ज्यादा मिल गया। भाईके शोकमें इन्होंने आत्मघात करनेकी ठानी है। मेरा जीवन तो नष्ट हो ही गया अब इन्हें मौतके मुंहमें झोंकनेकी चेष्टा क्यों करूं? इनकी दशा देखकर दया आती है। मेरे मनके घातकभाव लुप्त हो रहे हैं। (प्रगट) आप इतने निराश क्यों हो रहे हैं। संसारमें ऐसी बातें आये दिन होती रहती हैं। अब दिलको संभालिये। ईश्वरने आपको पुत्र दिया है, सती स्त्री दी है। क्या आप उन्हें मंझधारमें छोड़ देंगे। मेरे अवलम्ब भी आप ही हैं। मुझे द्वार-द्वार ठोकर खानेके लिये छोड़ दीजियेगा। इस शोकको दिलसे निकाल डालिये।

सबल—(खुश होकर) तुम भूल जाओगी कि मैं पापी हत्यारा हूँ?

राजे०—आप बार-बार इसकी चर्चा क्यों करते हैं?

सबल—तुम भूल जाओगी कि इसने अपने भाईको मरवाया है?

राजे०—(भयभीत होकर) प्रेम दोषोंपर ध्यान नहीं देता। वह गुणों ही पर मुग्ध होता है। आज मैं अन्धी हो जाऊं तो क्या आप मुझे त्याग देंगे।

सबल—प्रिये, ईश्वर न करे, पर मैं तुमसे सच्चे दिलसे कहता हूँ कि कालकी कोई गति, विधाताकी कोई पिशाचलीला, तापोंका कोई प्रकोप मेरे हृदयसे तुम्हारे प्रेमको नहीं निकाल सकता, हां, नहीं निकाल सकता।

(*गाता है*)

दफ्न करने ले चले थे जब मेरे घरसे मुझे
काश तुम भी झांक लेते रौजने दरसे मुझे।
सांस पूरी हो चुकी, दुनियासे रुखसत हो चुका
तुम अब आये हो उठाने मेरे बिस्तरसे मुझे।
क्यों उठाता है मुझे मेरी तमन्नाको निकाल
तेरे दरतक खींच लाई थी वही घरसे मुझे।
हिज्रकी शब कुछ यही मूनिस था मेरा, ऐ कज़ा
एक जरा रो लेने दे मिल मिलके बिस्तरसे मुझे।

राजे०—मेरे दिलमें आपका वही प्रेम है।

सबल—तुम मेरी हो जाओगी ?

राजे०—और अब किसकी हूं ?

सबल—तुम पूर्णरूपसे मेरी हो जाओगी ?

राजे०—आपके सिवा अब मेरा कौन है ?

सबल—तो प्रिये, मैं अभी मौतको कुछ दिनोंके लिये द्वारसे टाल दूंगा। अभी न मरूंगा। पर हम अब यहां नहीं रह सकते। हमें कहीं बाहर चलना पड़ेगा जहां अपना कोई परिचित प्राणी न हो। चलो आबू चलें, जी चाहे काश्मीर चलो, दो-चार महीने रहेंगे, फिर जैसी अवस्था होगी वैसा करेंगे। पर इस नगरमें मैं नहीं रह सकता। यहांकी एक-एक पत्ती मेरी दुश्मन है।

राजे०—घरके लोगोंको किसपर छोड़ियेगा ?

सबल—ईश्वरपर ! अब मालूम हो गया कि जो कुछ करता है ईश्वर करता है। मनुष्यके किये कुछ नहीं हो सकता।

राजे०—यह समस्या कठिन है। मैं आपके साथ बाहर नहीं जा सकती।

सबल—प्रेम तो स्थानके बन्धनोंमें नहीं रहता।

राजे०—इसका यह कारण नहीं। अभी आपका चित्त अस्थिर है, न जाने क्या रंग पकड़े। वहां परदेशमें कौन अपना हितैषी होगा, कौन विपत्तिमें अपना सहायक होगा। मैं गवांरिन, परदेश करना क्या जानूं। ऐसा ही है तो आप कुछ दिनोंके लिये बाहर चले जायं।

सबल—प्रिये, यहांसे जाकर फिर आना नहीं चाहता,

किसीसे बताना भी नहीं चाहता कि मैं कहां जा रहा हूं। मैं तुम्हारे सिवा और सारे संसारके लिये मर जाना चाहता हूं।

(*गाता है।*)

किसीको देके दिल कोई नवा संजे फुगां क्यों हो।
न हो जब दिलही सीनेमें तो फिर मुंहमें ज़बां क्यों हो।
वफ़ा कैसी, कहांका इश्क़, जब सिर फोड़ना ठहरा,
तो फिर ऐ संग दिल तेरा ही संगे आस्तां क्यों हो।
क़फ़समें मुझसे रूदादे चमन कहते न डर हरदम,
गिरी है जिस पै कल बिजली वह मेरा आशियां क्यों हो।
यह फ़ितना आदमीकी खान: वीरानीको क्या कम है,
हुए तुम दोस्त जिसके उसका दुश्मन आसमां क्यों हो।
कहा तुमने कि क्यों हो ग़ैरके मिलनेमें रुसवाई,
बजा कहते हो, सच कहते हो, फिर कहियो कि हां क्यों हो।

राजे०—(मनमें) यहां हूं तो कभी न कभी नसीब जागेंगे ही। मालूम नही वह (हलधर) आजकल कहां हैं, कैसे हैं, क्या करते हैं, मुझे अपने मनमें क्या समझ रहे हैं। कुछ भी हो जब मैं जाकर सारी राम कहानी सुनाऊंगी तो उन्हें मेरे निरपराध होनेका विश्वास हो जायगा। इनके साथ जाना अपना सर्वनाश कर लेना है। मैं इनकी रक्षा करना चाहती हूँ, पर अपना सत खोकर नहीं, इनको बचाना चाहती हूँ, पर अपनेको डुबाकर

नहीं। अगर मैं इस काममें सफल न हो सकूं तो मेरा दोष नहीं है। (प्रगट) मैं आपके घरको उजाड़नेका अपराध अपने सिर नहीं लेना चाहती।

सबल—प्रिये,मेरा घर मेरे रहनेसे ही उजड़ेगा, मेरे अंतर्धान होनेसे वह बच जायगा। इसमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं है।

राजे०—फिर अब मैं आपसे डरती हूँ, आप शक्की आदमी हैं। न जाने किस वक्त आपको मुझपर शक हो जाय। जब अपने जरासी शकपर...........

सबल—(शोकातुर होकर) राजेश्वरी, उसकी चर्चा न करो। उसका प्रायश्चित्त कुछ हो सकता है तो वह यही है कि अब शक और भ्रमको अपने पास फटकने भी न दूं। इस बलिदानसे मैंने समस्त शंकाओंको जीत लिया है। अब फिर भ्रममें पड़ूं तो मैं मनुष्य नहीं पशु हूँगा।

राजे०—आप मेरे सतीत्वकी रक्षा करेंगे? आपने मुझे वचन दिया था कि मैं केवल तुम्हारा सहवास चाहता हूँ।

सबल--प्रिये, प्रेमको बिना पाये संतोष नहीं होता। जबतक मैं गृहस्थीके बन्धनोंमें जकड़ा था, जबतक भाई, पुत्र, बहिनका मेरे प्रेमके एक अंशपर अधिकार था तबतक मैं तुम्हें न पूरा प्रेम दे सकता था और न तुमसे सर्वस्व मांगनेका साहस कर सकता था। पर अब मैं संसारमें अकेला हूं, मेरा सर्वस्व तुम्हारे

अर्पण है। प्रेम अपना पूरा मूल्य चाहता है, आधेपर संतुष्ट नहीं हो सकता।

राजे०—मैं अपने सतको नहीं खो सकती।

सबल—प्रिये प्रेमके आगे सत, व्रत, नियम, धर्म सब उस तिनकेके समान हैं जो हवासे उड़ जाते हैं। प्रेम पवन नहीं, आँधी है। उसके सामने मान-मर्य्याद, शर्म-हयाकी कोई हस्ती नहीं।

राजे०—यह प्रेम परमात्माकी देन है। उसे आप धन और रोबसे नहीं पा सकते।

सबल—राजेश्वरी, इन बातोंसे मेरा हृदय चूर-चूर हुआ जाता है। मैं ईश्वरको साक्षी देकर कहता हूं कि मुझे तुमसे जितना अटल प्रेम है उसे मैं शब्दोंमें प्रगट नहीं कर सकता। मेरा सत्यानास हो जाय अगर धन और सम्पत्तिका ध्यान भी मुझे आया हो। मैं यह मानता हूं कि मैंने तुम्हें पानेके लिये बेजा दबावसे काम लिया पर इसका कारण यही था कि मेरे पास और कोई साधन न था। मैं विरहकी आगमें जल रहा था, मेरा हृदय फुंका जाता था, ऐसी अवस्थामें यदि मैं धर्म अधर्मका विचार न करके किसी व्यक्तिके भरे हुए पानीके डोलकी ओर लपका तो तुम्हें उसको क्षम्य समझना चाहिये।

राजे०—वह डोल किसी भक्तने अपने इष्टदेवको चढ़ानेके

लिये एक हाथसे भरा था। जिसे आप प्रेम कहते हैं वह काम-लिप्सा थी। आपने अपनी लालसाको शान्त करनेके लिये एक बसे-बसाये घरको उजाड़ दिया, उसके प्राणियोंको तितर-बितर कर दिया। यह सब अनर्थ आपने अधिकारके बलपर किया। पर याद रखिये ईश्वर भी आपको इस पापका दण्ड भोगनेसे नहीं बचा सकता। आपने मुझसे उस बातकी आशा रखी जो कुलटाएं ही कर सकती हैं। मेरी यह इज्जत आपने की। आंख-की पुतली निकल जाय तो उसमें सुरमा क्या शोभा देगा? पौधेकी जड़ काटकर फिर आप उसे दूध और शहदसे सींचें तो क्या फायदा। स्त्रीका सत हरकर आप उसे विलास और भोगमें डुबा ही दें तो क्या होता है। मैं अगर यह घोर अपमान चुप-चाप सह लेती तो मेरी आत्माका पतन हो जाता। मैं यहां उस अपमानका बदला लेने आई। हां, आप चौंकें नहीं, मैं मनमें यही संकल्प करके आई थी।

(*ज्ञानीका प्रवेश*)

ज्ञानी—देवी, तुझे धन्य है। तेरे पैरों पर शीश नवाती हूँ।

सबल—ज्ञानी! तुम यहां?

ज्ञानी—क्षमा कीजिये। मैं किसी और विचारसे नहीं आई। आपको घरपर न देखकर मेरा चित्त व्याकुल हो गया।

सबल—यहांका पता कैसे मालूम हुआ?

ज्ञानी—कोचवानकी खुशामद करनेसे।

सबल—राजेश्वरी, तुमने मेरी आँखें खोल दीं। मैं भ्रममें पड़ा हुआ था। तुम्हारा संकल्प पूरा होगा। तुम सती हो। तुम्हारी प्रतिज्ञा पूरी होगी। मैं पापी हूँ, मुझे क्षमा करना......(नीचेकी ओर जाता है)

ज्ञानी—मैं भी चलती हूं। राजेश्वरी, तुम्हारे दर्शन पाकर कृतार्थ हो गई। (धीरेसे) बहिन, किसी तरह इनकी जान बचाओ। तुम्हीं इनकी रक्षा कर सकती हो (राजेश्वरीके पैरों पर गिर पड़ती है)

राजे०—रानीजी, ईश्वरने चाहा तो सब कुशल होगा।

ज्ञानी—तुम्हारे आशीर्वादका भरोसा है।

(*प्रस्थान*)

पांचवां दृश्य

(स्थान—गंगाके करारपर एक बड़ा पुराना मकान, समय—१२ बजे रात, हलधर और उनके साथी डाकू बैठे हुए हैं।)

हलधर—अब समय आ गया, मुझे चलना चाहिये।

एक डाकू रंगी—हमलोग भी तैयार हो जायँ न? शिकारी आदमी है, कहीं पिस्तौल चला बैठे तो।

हलधर—देखी जायगी। मैं जाऊंगा अकेले।

(कंचनका प्रवेश)

हलधर—अरे, आप अभी तक सोये नहीं?

कंचन—तुम लोग भैयाको मारनेपर तैयार हो, मुझे नींद कैसे आये।

हलधर—मुझे आपकी बातें सुन कर अचरज होती है। आप ऐसे पापी आदमीकी रक्षा करना चाहते हैं जो अपने भाई-की जान लेनेपर तुल जाय।

कंचल—तुम नहीं जानते, वह मेरे भाई नहीं, मेरे पिताके तुल्य हैं। उन्होंने भी सदैव मुझे अपना पुत्र समझा है। उन्होंने

मेरे प्रति जो कुछ किया उचित किया। उसके सिवा मेरे विश्वासघातका और कोई दण्ड न था। उन्होंने वही किया जो मैं आप करने जाता था। अपराध सब मेरा है। तुमने मुझपर दया की है। इतनी दया और करो। इसके बदलेमें तुम जो कुछ कहो करनेको तैयार हूं। मैं अपनी सारी कमाई जो २० हजारसे कम नहीं है तुम्हें भेंट कर दूंगा। मैंने यह रुपये एक धर्मशाला और देवालय बनवानेके लिये संचित कर रखे थे। पर भैयाके प्राणोंका मूल्य धर्मशाला और देवालयसे कहीं अधिक है।

हलधर—ठाकुर साहब ऐसा कभी न होगा। मैंने धनके लोभसे यह भेष नहीं लिया है। मैं अपने अपमानका बदला लेना चाहता हूँ। मेरा मर्य्याद इतना सस्ता नहीं है।

कंचन—मेरे यहाँ जितनी दस्तावेजें हैं वह सब तुम्हें दे दूँगा।

हलधर—आप व्यर्थ ही मुझे लोभ दिखा रहे हैं। मेरी इज्जत बिगड़ गई। मेरे कुलमें दाग लग गया। बाप-दादोंके मुँह में कालिख लग गया। इज्जतका बदला जान है, धन नहीं। जबतक सबलसिंहकी लाशको अपनी आंखोंसे तड़पते न देखूँगा मेरे हृदयकी ज्वाला न शान्त होगी।

कंचन—तो फिर सबेरे तक मुझे भी जीता न पावोगे।

(*प्रस्थान*)

हलधर—भाईपर जान देते हैं।

रंगी—तुम भी तो हकनाहककी जिद कर रहे हो। २० हजार नगद मिल रहा है। दस्तावेज भी इतनेकी ही होगी। इतना धन तो ऐसा ही भाग जागे तो हाथ लग सकता है। आधा तुम ले लो। आधा हम लोगोंको दे दो। २० हजारमें तो ऐसी-ऐसी बीस औरतें मिल जायंगी।

हलधर—कैसी बेगैरतोंकी सी बात करते हो। स्त्री चाहे सुन्दर हो, चाहे कुरूप, कुल मरजादकी देवी है। मरजाद रुपयों-पर नहीं बिकती।

रंगी—ऐसा ही है तो उसीको क्यों नहीं मार डालते। न रहे बांस न बजे बांसुरी।

हलधर—उसे क्या मारूं। स्त्रीपर हाथ उठानेमें क्या जवां मरदी है।

रङ्गी—तो क्या उसे फिर रखोगे?

हलधर—मुझे क्या तुमने ऐसा बेगैरत समझ लिया है। घर-में रखनेकी बात ही क्या, अब उसका मुंह भी नहीं देख सकता। वह कुलटा है, हरजाई है। मैंने पता लगा लिया है। वह अपने आप घरसे निकल खड़ी हुई। मैंने कबका उसे दिलसे निकाल दिया। अब उसकी याद भी नहीं करता। उसकी याद आते ही शरीरमें ज्वाला उठने लगती है। अगर उसे मारकर कलेजा

ठण्डा हो सकता तो इतने दिनों चिंता और क्रोधकी आगमें जलता ही क्यों।

रंगी—मैं तो रुपयोंका इतना बड़ा ढेर कभी हाथसे न जाने देता। मान-मर्य्याद सब ढकोसला है। दुनियामें ऐसी बातें आये दिन होती रहती हैं। लोग औरतको घरसे निकाल देते हैं। बस।

हलधर—क्या कायरोंकीसी बातें करते हो। रामचन्द्रने सीताजीके लिये लङ्काका राज बिधन्स कर दिया। द्रोपदीकी मानहानि करनेके लिये पांडवोंने कौरवोंका निर्बन्स कर दिया। जिस आदमीके दिलमें इतना अपमान होनेपर भी क्रोध न आये, वह मरने-मारनेपर तैयार न हो जाय, उसका खून न खौलने लगे, वह मर्द नहीं हिजड़ा है। हमारी इतनी दुर्गति क्यों हो रही है? जिसे देखो वही हमें चार गालियां सुनाता है, ठोकर मारता है। क्या अहलकार, क्या जमींदार सभी कुत्तोंसे नीच समझते हैं। इसका कारन यही है कि हम बेहया हो गये हैं। अपनी चमड़ीको प्यार करने लगे हैं। हममें भी गैरत होती, अपने मान-अपमानका विचार होता तो मजाल थी कि कोई हमें तिरछी आंखोंसे देख सकता। दूसरे देशोंमें सुनते हैं गालियोंपर लोग मरने-मारनेको तैयार हो जाते हैं। वहां कोई किसीको गाली नहीं दे सकता। किसी देवताका अपमान कर

दो तो जान न बचे। यहांतक कि कोई किसीको लासखुन नहीं कह सकता नहीं तो खूनकी नदो बहने लगे। यहां क्या है, लात खाते हैं, जूते खाते हैं, घिनौनी गालियां सुनते हैं, धर्मका नाश अपनी आंखोंसे देखते हैं, पर कानोंपर जूं नहीं रेंगती, खून जरा भी गर्म नहीं होता। चमड़ीके पीछे सब तरहकी दुर्गत सहते हैं। जान इतनी प्यारी हो गई है। मैं ऐसे जीनेसे मौतको हजार दर्जे अच्छा समझता हूँ। बस यही समझ लो कि जो आदमी प्रानको जितना ही प्यारा समझता है वह उतना ही नीच है। जो औरत हमारे घरमें रहती थी, हमसे हंसती थी, हमसे बोलती थी, हमारे खाटपर सोती थी वह अब......(क्रोधसे उन्मत्त होकर) तुमलोग लौटनेतक यहीं रहो। कंचनसिंहको देखते रहना।

(*चला जाता है*)

छठा दृश्य

(स्थान—सबलसिंहका कमरा, समय—१ बजे रात)

सबल—(ज्ञानीसे) अब जाकर सो रहो। रात कम है।

ज्ञानी—आप लेटें, मैं चली जाऊंगी। अभी नींद नहीं आती।

सबल—तुम अपने दिलमें मुझे बहुत नीच समझ रही होगी?

ज्ञानी—मैं आपको अपना इष्ट देव समझती हूँ।

सबल—क्या इतना पतित हो जानेपर भी?

ज्ञानी—मैली वस्तुओंके मिलनेसे गंगाका माहात्म्य कम नहीं होता।

सबल—मैं इस योग्य भी नहीं हूं कि तुम्हें स्पर्श कर सकूं। पर मेरे हृदयमें इस समय तुमसे गले मिलनेकी प्रबल उत्कण्ठा है। याद ही नहीं आता कि कभी मेरा मन इतना अधीर हुआ हो। जी चाहता है तुम्हें प्रिये कहूं, आलिङ्गन करूं, पर हिम्मत नहीं पड़ती। अपनी ही आंखोंमें इतना गिर गया हूं।

(ज्ञानी रोती हुई जाने लगती है, सबल रास्तेमें खड़ा हो जाता है)

प्रिये, इतनी निर्दयता न करो। मेरा हृदय टुकड़े २ हुआ जाता है। (रास्तेसे हटकर) जाओ। मुझे तुम्हें रोकनेका कोई अधिकार नहीं है। मैं पतित हूं, पापी हूँ, दुष्टाचारी हूँ। न जाने क्यों पिछले दिनोंकी याद आ गई, जब मेरे और तुम्हारे बीचमें यह विच्छेद न था, जब हम तुम प्रेम-सरोवरके तटपर विहार करते थे, उसकी तरंगोंके साथ झूमते थे। वह कैसे आनन्दके दिन थे। अब वह दिन फिर न आयेंगे। जाओ, न रोकूँगा, पर मुझे बिलकुल नजरोंसे न गिरा दिया हो तो एक बार प्रेमकी चितवनसे मेरी तरफ देख लो। मेरा सन्तप्त हृदय उस प्रेमकी फुहारसे तृप्त हो जायगा। इतना भी नहीं कर सकती? न सही। मैं तो तुमसे कुछ कहनेके योग्य ही नहीं हूं। तुम्हारे सम्मुख खड़े होते, तुम्हें यह काला मुँह दिखाते, मुझे लज्जा आनी चाहिये थी। पर मेरी आत्माका पतन हो गया है। हां, तुम्हें मेरी एक बात अवश्य माननी पड़ेगी, उसे मैं जबरदस्ती मनवाऊँगा, जबतक न मानोगी जाने न दूंगा। मुझे एक बार अपने चरणोंपर सिर झुकाने दो।

(ज्ञानी रोती हुई अन्दरके द्वारकी तरफ बढ़ती है)

सबल—क्या मैं अब इस योग्य भी नहीं रहा? हां, मैं अब

घृणित प्राणी हूँ; जिसकी आत्माका अपहरण हो चुका है। पूजी जानेवाली प्रतिमा टूटकर पत्थरका टुकड़ा हो जाती है, उसे किसी खण्डहरमें फेंक दिया जाता है। मैं वही टूटी हुई प्रतिमा हूँ और इसी योग्य हूँ कि ठुकरा दिया जाऊँ। तुमसे कुछ कहनेका, तुम्हारी दया-याचना करनेके योग्य मेरा मुंह ही नहीं रहा। जाओ। हम तुम बहुत दिनोंतक साथ रहे। अगर मेरे किसी व्यवहारसे, किसी शब्दसे, किसी आक्षेपसे तुम्हें दुःख हुआ हो तो क्षमा करना। मुझसा अभागा संसारमें न होगा जो तुम जैसी देवी पाकर उसकी कद्र न कर सका।

(ज्ञानी हाथ जोड़कर सजल नेत्रोंसे ताकती है, कंठसे शब्द नहीं निकलता)

(सबल तुरत मेज़परसे पिस्तौल उठाकर बाहर निकल जाता है)

ज्ञानी—(मनमें) हताश होकर चले गये। मं तस्कीन दे सकती, उन्हें प्रेमके बन्धनसे रोक सकती तो शायद न जाते। मैं किस मुंहसे कहूं कि यह अभागिनी पतिता तुम्हारे चरणोंका स्पर्श करने योग्य नहीं है। वह समझते हैं मैं उनका तिरस्कारकर रही हूं, उनसे घृणा कर रही हूं। उनके इरादेमें अगर कुछ कम-जोरी थी तो वह मैंने पूरी कर दो। इस यज्ञकी पूर्णाहुति मुझे करनी पड़ी। हा विधाता, तेरी लीला अपरम्पार है। जिस पुरुष पर इस समय मुझे अपना प्राण अर्पण करना चाहिये था मैं आज

उसकी घातिका हो रही हूं। हा अर्थलोलुपता! तूने मेरा सर्व-नाश कर दिया। मैंने सन्तान-लालसाके पीछे कुलमें कलङ्क लगा दिया, कुलको धूलमें मिला दिया। पूर्व जन्ममें न जाने मैंने कौनसा पाप किया था। चेतनदास, तुमने मेरी सोनेकी लङ्का दहन कर दी। मैंने तुम्हें देवता समझकर तुम्हारी आराधना की थी। तुम राक्षस निकले। जिस खूखारको मैंने बाग समझा था वह बीहड़ बन निकला। मैंने कमलका फूल तोड़नेके लिये पैर बढ़ाये थे दलदलमें फंस गई, जहांसे अब निकलना दुस्तर है। पतिदेवने चलते समय मेज़परसे कुछ उठाया था। न जाने कौन सी चीज़ थी। कालीघटा छाई हुई है। हाथको हाथ नहीं सूझता। वह कहां गये। भगवन्, कहां जाऊँ? किससे पूछूं, क्या करूँ? कैसे उनकी प्राण रक्षा करूँ? हो न हो राजेश्वरी-के पास गये। वहीं इस लीलाका अन्त होगा। उसके प्रेममें वह विह्वल हो रहे हैं। अभी उनकी आशा वहां लगी हुई है। मृग-तृष्णा है। वह नीच जातिकी स्त्री है पर सती है। अकेले इस अन्धेरी रातमें वहां कैसे पहुँचूंगी। कुछ ही हो यहाँ नहीं रहा जाता। बग्घीपर गई थी। रास्ता कुछ-कुछ याद है। ईश्वरके भरोसेपर चलती हूँ। या तो वहां पहुंच ही जाऊँगी या इसी टोहमें प्राण दे दूँगी। एक बार मुझे उनके दर्शन हो जाते तो जीवन सफल हो जाता। मैं उनके चरणोंपर प्राण त्याग देती।

अब यही अन्तिम लालसा है। दयानिधि, मेरी यह अभिलाषा पूरी करो। हा, जननी धरती, तुम क्यों मुझे अपनी गोदमें नहीं ले लेती ? दीपकका ज्वाला-शिखर क्यों मेरे शरीरको भस्म नहीं कर डालता ! यह भयंकर अन्धकार क्यों किसी जल-जन्तुकी भांति मुझे अपने उदरमें शरण नहीं देता !

(प्रस्थान)

सातवां दृश्य

(स्थान—सबल सिंहका मकान, समय—२॥ बजे रात, सबल सिंह अपने बागमें हौज़के किनारे बैठे हुए हैं ।)

सबल—(मनमें) इस जिन्दगी पर धिक्कार है । चारों तरफ अन्धेरा है, कहीं प्रकाशकी झलक तक नहीं । सारे मंसूबे, सारे इरादे ख़ाकमें मिल गये । अपने जीवनको आदर्श बनाना चाहता था, अपने कुलको मर्यादाके शिखरपर पहुँचाना चाहता था, देश और राष्ट्रकी सेवा करना चाहता था, समग्र देशमें अपनी कीर्ति फैलाना चाहता था । देशको उन्नतिके परमस्थानपर देखना चाहता था । उन बड़े-बड़े इरादोंका कैसा करुणाजनक अन्त हो रहा है । फले फूले वृक्षकी जड़में कितनी बेदरदीसे आरा चलाया जा रहा है । कामलोलुप होकर मैंने अपनी जिन्दगी तबाह कर दी । मेरी दशा उस मांझीकीसी है जो नावको बोझनेके बाद शराब पी ले और नशेमें नावको भंवरमें डाल दे । भाईकी हत्या करके भी अभीष्ट न पूरा हुआ । जिसके लिये इस पाप कुण्डमें कूदा वह भी अब मुझसे घृणा करती है ।

कितनी घोर निर्दयता है। हाय! मैं क्या जानता था कि राजेश्वरी मनमें मेरे अनिष्टका दृढ़ संकल्प करके यहां आई है। मैं क्या जानता था कि वह मेरे साथ त्रिया चरित्र खेल रही है। हां, एक अमूल्य अनुभव प्राप्त हुआ। स्त्री अपने सतीत्वकी रक्षा करनेके लिये, अपने अपमानका बदला लेनेके लिये, कितना भयङ्कर रूप धारण कर सकती है। गऊ कितनी सीधी होती है पर किसीको अपने बछड़ेके पास आते देखकर कितनी सतर्क हो जाती है। सती स्त्रियां भी अपने व्रतपर आघात होते देखकर जानपर खेल जाती हैं। कैसे प्रेममें सनी हुई बातें करती थी। जान पड़ता था प्रेमके हाथों बिक गई हो। ऐसी सुन्दरी, ऐसी सरला, ऐसी मृदु प्रकृति, ऐसी विनयशीला, ऐसी कोमल हृदया रमणियाँ भी छल-कौशलमें इतनी निपुण हो सकती हैं!

उसकी निठुरता मैं सह सकता था। किन्तु ज्ञानीकी घृणा नहीं सही जाती, उसकी उपेक्षासूचक दृष्टिके सम्मुख खड़ा नहीं हो सकता। जिस स्त्रीका अबतक आराध्य देव था, जिसकी मुझपर अखण्ड भक्ति थी, जिसका सर्वस्व मुझपर अर्पण था, वही स्त्री अब मुझे इतना नीच और पतित समझ रही है। ऐसे जीनेपर धिक्कार है।

एक बार प्यारे अचलको भी देख लूं। बेटा, तुम्हारे प्रति मेरे दिलमें बड़े-बड़े अरमान थे। मैं तुम्हारा चरित्र आदर्श

बनाना चाहता था पर कोई अरमान न निकला। अब न जाने तुम्हारे ऊपर क्या पड़ेगी। ईश्वर तुम्हारी रक्षा करें !

लोग कहते हैं प्राण बड़ी प्रिय वस्तु है। उसे देते हुए बड़ा कष्ट होता है। मुझे तो जरा भी शंका, जरा भी भय नहीं है। मुझे तो प्राण देना खेल सा मालूम हो रहा है। वास्तवमें जीवन ही खेल है, विधाताका क्रीड़ाक्षेत्र ! (पिस्तौल निकालकर) हां दोनों गोलियां हैं; काम हो जायगा। मेरे मरनेकी सूचना जब राजेश्वरीको मिलेगी तो एक क्षणके लिये उसे शोक तो होगा ही, चाहे फिर हर्ष हो। आंखोंमें आंसू भर आयेंगे। अभी मुझे पापी, अत्याचारी, विषयी समझ रही है, सब ऐब ही ऐब दिखाई दे रहे हैं। मरनेपर कुछ तो गुणोंकी याद आयेगी। मेरी कोई बात तो उसके कलेजेमें चुटकियां लेगी। इतना तो जरूर ही कहेगी कि उसे मुझसे सच्चा प्रेम था। शहरमें मेरी सार्वजनिक सेवाओंकी प्रशंसा होगी। लेकिन कहीं यह रहस्य खुल गया तो मेरी सारी कीर्तिपर पानी फिर जायगा। यह ऐब सारे गुणोंको छिपा लेगा, जैसे सुफेद चादरपर काला धब्बा, या सर्वाङ्ग सुन्दर चित्रपर एक छींटा। बेचारी ज्ञानी तो यह समाचार पाते ही मूर्च्छित होकर गिर पड़ेगी, फिर शायद कभी न सचेत हो। यह उसके लिये वज्राघात होगा। चाहे वह मुझसे कितनी ही घृणा करे, मुझे कितना ही दुरात्मा समझे पर

उसे मुझसे प्रेम है, अटल प्रेम है; वह मेरा अकल्याण नहीं देख सकती। जबसे मैंने उसे अपना वृत्तान्त सुनाया है वह कितनी चिन्तित, कितनी सशंक हो गई है। प्रेमके सिवा और कोई शक्ति न थी जो उसे राजेश्वरीके घर खींच ले जाती।

(हलधर चारदीवारी कूदकर बागमें आता है और धीरे धीरे इधर-उधर ताकता हुआ सबलके कमरेकी तरफ जाता है)

हलधर—(मनमें) यहां किसीकी आवाज़ आ रही है, (भाला संभालकर) यहां कौन बैठा हुआ है। अरे! यह तो सबल सिंह ही है। साफ़ उसीकी आवाज है। इस वक्त यहां बैठा क्या कर रहा है। अच्छा है यहीं काम तमाम कर दूंगा। कमरेमें न जाना पड़ेगा। इसी हौजमें फेंक दूंगा। सुनूं क्या कह रहा है।

सबल—बस, अब बहुत सोच चुका। मन इस तरह बहाना ढूंढ़ रहा है। ईश्वर तुम दयाके सागर हो, क्षमाकी मूर्त्ति हो। मुझे क्षमा करना, अपनी दीनवत्सलतासे मुझे वञ्चित न करना। कहां निशाना लगाऊँ। सिरमें लगानेसे तुरत अचेत हो जाऊँगा। कुछ न मालूम होगा प्राण कैसे निकलते हैं। सुनता हूँ प्राण निकलनेमें कष्ट नहीं होता। बस, छातीपर निशाना मारूँ।

(पिस्तौलका मुँह छातीकी तरफ फेरता है। सहसा हलधर भाला फेंककर झपटता है और सबल सिंहके

(हाथसे पिस्तौल छीन लेता है)

सबल—(अचम्भेसे) कौन ?

हलधर—मैं हूँ हलधर।

सबल—तुम्हारा काम तो मैं हीं किये देता था। तुम हत्या-से बच जाते। उठा लो पिस्तौल।

हलधर—आपके ऊपर मुझे दया आती है।

सबल—मैं पापी हूं। कपटी हूँ। मेरे ही हाथों तुम्हारा घर सत्यानास हुआ। मैंने तुम्हारा अपमान किया, तुम्हारी इज्जत लूटी, अपने सगे भाईका वध कराया। मैं दयाके योग्य नहीं हूँ।

हलधर—कंचन सिंहको मैंने नहीं मारा।

सबल—(उछलकर) सच कहते हो ?

हलधर—वह आप ही गंगामें कूदने जा रहे थे। मुझे उनपर भी दया आ गई। मैंने समझा था आप मेरा सर्वनाश करके भोग-विलासमें मस्त हैं। तब मैं आपके खूनका प्यासा हो गया था। पर अब देखता हूँ तो आप अपने कियेपर लज्जित हैं, पछता रहे हैं, इतने दुःखी हैं कि प्राणतक देनेको तैयार हैं। ऐसा आदमी दयाके योग्य है। उसपर क्या हाथ उठाऊँ।

सबल—(हलधरके पैरोंपर गिरकर) तुमने कंचनकी जान बचा ली। इसके लिये मैं मरते दमतक तुम्हारा यश मानूंगा। मैं न जानता था कि तुम्हारा हृदय इतना कोमल और उदार है।

तुम पुण्यात्मा हो, देवता हो। मुझे ले चलो। कंचनको देख लूँ। हलधर, मेरे पास अगर कुबेरका धन होता तो तुम्हारी भेंट कर देता। तुमने मेरे कुलको सर्वनाशसे बचा लिया।

हलधर—मैं सवेरे उन्हें साथ लाऊँगा।

सबल—नहीं, मैं इसी वक्त तुम्हारे साथ चलूंगा। अब सब्र नहीं है।

हलधर—चलिये।

(दोनों फाटक खोल कर चले जाते हैं)

पंचम अंक

पहला दृश्य

(स्थान—डाकुओंका मकान, समय—२॥ बजे रात, हलधर डाकुओंके मकानके सामने बैठा हुआ है।)

हलधर—(मनमें) दोनों भाई कैसे टूटकर गले मिले हैं। मैं न जानता था कि बड़े आदमियोंमें भाई-भाईमें भी इतना प्रेम होता है। दोनोंके आंसू ही नहीं थमते थे। बड़ी कुशल हुई कि मैं मौकेसे पहुँच गया। नहीं तो वंशका अन्त हो जाता। मुझे तो दोनों भाइयोंसे ऐसा प्रेम हो गया है मानों मेरे अपने भाई हैं। मगर आज तो मैंने उन्हें बचा लिया। कौन कह सकता है कि वह फिर एक दूसरेके दुश्मन न हो जायंगे। रोगकी जड़ तो मनमें जमी हुई है। उसको काटे बिना रोगीकी जान कैसे बचेगी। राजेश्वरीके रहते हुए इनके मनकी मैल न मिटेगी। दो चार दिनमें इनमें फिर अनबन हो जायगी। इस अभागिनीने मेरे कुलमें दाग लगायी। अब इस कुलका सत्यानास कर रही है। उसे मौत भी नहीं आ जाती। जबतक जियेगी मुझे कल-

क्षित करती रहेगी। बिरादरीमें कहीं मुंह दिखाने लायक नहीं नहीं रहा। सब लोग मुझे बिरादरीसे निकाल देंगे। हुक्का-पानी बन्द कर देंगे। हेठी और बदनामी होगी वह घाटेमें। यह तो यहां महलमें रानी बनी बैठी अपने कुकर्मका आनन्द उठाया करे और मैं इसके कारण बदनामी उठाऊं? अबतक उसको मारने-का जी न चाहता था। औरतपर हाथ उठाना नीचताका काम समझता था। पर अब वह नीचता करनी पड़ेगी। उसके किये बिना खेल बिगड़ जायगा।

(चेतनदासका प्रवेश)

चेतनदास—यहां कौन बैठा हुआ है?

हलधर—मैं हूं हलधर।

चेतन—खूब मिले। बताओ सबलसिंहका क्या हाल हुआ? वध कर डाला?

हलधर—नहीं, उन्हें मरनेसे बचा लिया।

चेतन—(खुश होकर) बहुत अच्छा किया। मुझे यह सुन-कर बड़ी खुशी हुई। सबलसिंह कहां हैं?

हलधर—मेरे घर।

चेतन—ज्ञानी जानती है कि वह जिन्दा हैं?

हलधर—नहीं, उसे अबतक इसकी खबर नहीं मिली।

चेतन—तो उसे जल्द खबर दो नहीं तो उससे भेंट न होगी।

वह घरमें नहीं है। न जाने कहाँ गई? उसे यह खबर मिल जायगी तो कदाचित् उसकी जान बच जाय। मैं उसीकी टोहमें जा रहा हूँ। इस अन्धेरी रातमें कहां खोजूं ?

(प्रस्थान)

हलधर—(मनमें) यह डायन न जाने कितनी जानें लेकर संतुष्ट होगी। ज्ञानी देवी है। उसने सबल सिंहको कमरेमें न देखा होगा। समझी होगी वह गंगामें डूब मरे। कौन जाने इसी इरादेसे वह भी घरसे निकल खड़ी हुई हो। चलकर अपने आदमियोंको उसका पता लगानेके लिये दौड़ा दूं। उसकी जान मुफ्तमें चली जायगी। क्या दिल्लगी है कि रानी तो मारी-मारी फिरे और कुलटा महलमें सुखकी नींद सोये।

(अचल दूसरी ओरसे हवाई बन्दूक लिये आता है)

हलधर—कौन ?

अचल—अचल सिंह कुंवर सबल सिंहका पुत्र।

हलधर—अच्छा, तुम खूब आ गये। पर अंधेरी रातमें तुम्हें डर नहीं लगा ?

अचल—डर किस बातका ? मुझे डर नहीं लगता। बाबूजीने मुझे बताया है कि डरना पाप है।

हलधर—जाते कहाँ हो ?

अचल—कहीं नहीं।

हलधर—तो इतनी रात गये घरसे क्यों निकले ?

अचल—तुम कौन हो ?

हलधर—मेरा नाम हलधर है।

अचल—अच्छा, तुम्हींने माताजीकी जान बचाई थी।

हलधर—जान तो भगवानने बचाई, मैंने तो केवल डाकुओंको भगा दिया था। तुम इतनी रात गये अकेले कहां जा रहे हो ?

अचल—किसीसे कहोगे तो नहीं ?

हलधर—नहीं, किसीसे न कहूँगा।

अचल—तुम बहादुर आदमी हो। मुझे तुम्हारे ऊपर विश्वास है। तुमसे कहनेमें शर्म नहीं है। यहां कोई वेश्या है। उसने चाचाजीको और बाबूजीको विष देकर मार डाला है। अम्मांजीने शोकसे प्राण त्याग दिये। वह स्त्री थीं क्या कर सकती थीं। अब मैं उसी वेश्याके घर जा रहा हूँ। इसी वक्त बन्दूकसे उसका सिर उड़ा दूंगा। (बन्दूक तानकर दिखाता है)

हलधर—तुमसे किसने कहा ?

अचल—मिश्राइनने। चाचाजी कलसे घरपर नहीं हैं। बाबूजी भी १० बजे रातसे नहीं हैं। न घरमें अम्मांका पता है। मिश्राइन सब हाल जानती हैं।

हलधर—तुमने वेश्याका घर देखा है ?

अचल—नहीं, घर तो नहीं देखा है।

हलधर—तो उसे मारोगे कैसे?

अचल—किसीसे पूछ लूंगा।

हलधर—तुम्हारे चाचाजी और बाबूजी तो मेरे घरमें हैं।

अचल—झूठ कहते हो। दिखा दोगे?

हलधर—कुछ इनाम दो तो दिखा दूं।

अचल—चलो, क्या दिखाओगे। वह लोग अब स्वर्गमें होंगे। हां, राजेश्वरीका घर दिखा दो तो जो कहो वह दूं।

हलधर—अच्छा मेरे साथ आओ मगर बन्दूक ले लूंगा।

(दोनों घरमें जाते हैं,सबलसिंह और कञ्चन चकित होकर अचलको देखते है, अचल दौड़कर बापकी गरदनसे चिमट जाता है)

हलधर—(मनमें) अब यहां नहीं रह सकता। फिर तीनों रोने लगे। बाहर चलूं। कैसा होनहार बालक है। (बाहर आकर मनमें) यह बच्चातक उसे बेश्या कहता है। वेश्या है हीं। सारी दुनिया यही कहती होगी। अब तो और भी गुल खिलेगा। अगर दोनों भाइयोंने उसे त्याग दिया तो पेटके लिये उसे अपनी लाज बेचनी पड़ेगी। ऐसी हयदार नहीं है कि जहर खाकर मर जाय। जिसे मैं देवी समझता था वह ऐसी कुलकलङ्किनी निकली! तूने मेरे साथ ऐसा छल किया! अब

दुनियाको कौन मुंह दिखाऊं। सबकी एक ही दवा है। न बाँस रहे न बाँसुरी बजे। तेरे जीनेसे सबकी हानि है। किसीका लाभ नहीं। तेरे मरनेसे सबका लाभ है, किसीकी हानि नहीं। उससे कुछ पूछना व्यर्थ है। रोयेगी, गिड़गिड़ायेगी, पैरों पड़ेगी। जिसने लाज बेच दी वह अपनी जान बचानेके लिये सभी तरह-की चालें चल सकती है। कहेगी मुझे सबलसिंह जबरदस्ती निकाल लाये, मैं तो आती न थी। न जाने क्या-क्या बहाने करेगी। उससे सवाल-जवाब करनेकी जरूरत नहीं। चलते ही काम तमाम कर दूँगा...............

(हथियार सँभालकर चल खड़ा होता है)

दूसरा दृश्य

(स्थान—शहरकी एक गली, समय—३ बजे रात, इन्स्पेक्टर और थानेदारकी चेतनदाससे मुठभेड़।)

इन्स्पेक्टर—महाराज, खूब मिले। मैं तो आपके ही दौलतखानेकी तरफ जा रहा था। लाइये दूधके धुले हुए पूरे एक हजार कमीकी गुञ्जाइश नहीं, बेशीकी हद नहीं।

थानेदार—आपने जमानत न कर ली होती तो उधर भी हजार-पांच सौपर हाथ साफ करता।

चेतनदास—इस वक्त मैं दूसरी फिक्रमें हूं। फिर कभी आना।

इन्स्पेक्टर—जनाब, हम आपके गुलाम नहीं हैं जो बार-बार सलाम करनेको हाजिर हों। आपने आजका वादा किया था। वादा पूरा कीजिये। कील व कालकी जरूरत नहीं।

चेतन—कह दिया मैं इस समय दूसरी चिन्तामें हूँ। फिर इस सम्बन्धमें बातें होंगी।

इन्स०—आपका क्या एतबार, इसी वक्तकी गाड़ीसे हरद्वार-की राह लें। पुलिसके मुआमिले नक़द होते हैं।

एक सिपाही—लाओ नगद नारायन निकालो। पुलुससे ई फेरफार न चल पइ है। तुमरे ऐसे साधुनका इहाँ रोज चराइत हैं।

इन्स्पेक्टर—आप हैं किस गुमानमें। यह चालें अपने भोले भाले चेले चापड़ोंके लिये रहने दीजिये जिन्हें आप नजात देते हैं। हमारी नजातके लिये आपके रुपये काफी हैं। उससे हम फरिश्तोंको भी राहपर लगा लेंगे। दारोगाजी, वह शेर आपको याद है।

दारोगाजी—हां, ऐ ज़र तू ख़ुदा नई, बलेकिन बख़ुदा
हाशा रब्बी व क़ाज़िउल हाजाती।

इन्स्पेक्टर—मतलब यह है कि रुपया ख़ुदा नहीं है लेकिन ख़ुदाके दो सबसे बड़े औसाफ उसमें मौजूद हैं। परवरिश करना और इन्सानकी जरूरतोंको रफ़ा करना।

चेतनदास—कल किसी वक्त़ आइयेगा।

इन्स्पेक्टर—(रास्तेमें खड़े होकर) कल आनेवालेपर लानत है। एक भले आदमीकी इज्ज़त खाकमें मिलवाकर अब आप यों झांसा देना चाहते हैं। कहीं साहब बहादुर ताड़ जाते तो नौकरीके लाले पड़ जाते ।

चेतनदास—रास्तेसे हटो (आगे बढ़ना चाहता है)

इन्स्पेक्टर—(हाथ पकड़कर) इधर आइये, इस सीना-जोरीसे काम न चलेगा।

(चेतनदास हाथ झटककर छुड़ा लेता है और इन्स्पेक्टरको जोरसे धक्का मारकर गिरा देता है)

दारोगा—गिरफ्तार कर लो। रहज़न है।

चेतन—अगर कोई मेरे निकट आया तो गर्दन उड़ा दूँगा।

(दारोगा पिस्तौल उठाता है, लेकिन पिस्तौल नहीं चलती, चेतनदास उसके हाथसे पिस्तौल छीनकर उसकी छातीपर निशाना लगाता है)

दारोगा—स्वामीजी खुदाके वास्ते रहम कीजिये। ताज़ीस्त आपका गुलाम रहूँगा।

चेतनदास—मुझे तुझ जैसे दुष्टोंकी गुलामीकी जरूरत नहीं। (दोनों सिपाही भाग जाते हैं। थानेदार चेतनदासके पैरोंपर गिर पड़ता है) बोल कितना रुपये लेगा।

थानेदार—महाराज, मेरी जां बख्श दीजिये। जिन्दा रहूँगा तो आपके एकबालसे बहुत रुपये मिलेंगे।

चेतनदास—अभी गरीबोंको सतानेकी इच्छा बनी हुई है। तुझे मार क्यों न डालूं। कमसे कम एक अत्याचारीका भार तो पृथ्वीपर कम हो जाय।

थानेदार—नहीं महाराज, खुदाके लिये रहम कीजिये। बाल बच्चे दाने बगैर मर जायंगे। अब कभी किसीको न सताऊँगा। अगर एक कौड़ी भी रिश्वत लूं तो मेरे अस्लमें फर्क समझियेगा। कभी हरामके मालके करीब न जाऊंगा।

चेतन—अच्छा तुम इस इन्स्पेक्टरके सिरपर पचास जूते गिनकर लगावो तो छोड़ दूं।

थाने०—महाराज, वह मेरे अफ़सर हैं। मैं उनकी शानमें ऐसी बेअदबी क्योंकर कर सकता हूँ। रिपोर्ट कर दें तो बर्खास्त हो जाऊं।

चेतन—तो फिर आंखें बन्द कर लो और खुदाको याद करो, घोड़ा गिरता है।

थाने०—हजूर जरा ठहर जायं, हुक्मकी तामील करता हूं। कितने जूते लगाऊं?

चेतन—५० से कम न ज्यादा।

थाने०—इतने जूते पड़ेंगे तो चांद खुल जायगी। नाल लगी हुई है।

चेतन—कोई परवा नहीं। उतार लो जूते।

(थानेदार जूते पैरसे निकालकर इन्स्पेक्टरके सिरपर लगाता है, इन्स्पेक्टर चौंककर उठ बैठता है, दूसरा जूता फिर पड़ता है)

इन्स्पेक्टर—शैतान कहींका, मलऊन।

थाने०—मैं क्या करूं? बैठ जाइये ५० लगा लूं। इतनी इनायत कीजिये! जान तो बचे।

(इन्स्पेक्टर उठकर थानेदारसे हाथापाई करने लगता है, दोनों एक दूसरेको गालियां देते हैं, दांत काटते हैं)

चेतनदास—जो जीतेगा उसे इनाम दूंगा। मेरी कुटीपर आना। खूब लड़ो, देखें कौन बाजी ले जाता है।

(प्रस्थान)

इन्स०—तुम्हारी इतनी मजाल! बर्खास्त न करा दिया तो कहना।

थाने०—क्या करता, सीनेपर पिस्तौलका निशान लगाये तो खड़ा था।

इन्स०—यहां कोई सिपाही तो नहीं है?

थाने०—वह दोनों तो पहले ही भाग गये।

इन्स०—अच्छा, खैरियत चाहो तो चुपकेसे बैठ जाओ और मुझे गिनकर सौ जूते लगाने दो, वरना कहे देता हूँ कि सुबहको तुम थानेमें न रहोगे। पगड़ी उतार लो।

थाने०—मैंने तो आपकी पगड़ी नहीं उतारी थी।

इन्स०—उस बदमाश साधुको यह सूझी ही नहीं।

थाने०—आप तो दूसरे ही हाथपर उठ खड़े हुए थे?

इन्स०—खबरदार, जो यह कलमा फिर मुँहसे निकला।

दोके दस तो तुम्हें जरूर लगाऊंगा। बाकी फी पापोश एक रुपयेके हिसाबसे माफ़ कर सकता हूँ।

(दोनों सिपाही आ जाते हैं, दारोगा सिरपर साफा रख लेता है, इन्सपेक्टर क्रोधपूर्ण नेत्रोंसे उसे देखता है और सब गश्तपर निकल जाते हैं)

तृतीय दृश्य

(स्थान—राजेश्वरीका कमरा, समय—३ बजे रात, फानूस जल रही है, राजेश्वरी पानदान खोले फर्शपर बैठी है।)

राजेश्वरी—(मनमें) मेरे मनकी सारी अभिलाषाएं पूरी हो गईं। जो प्रण करके घरसे निकली थी वह पूरा हो गया। जीवन सफल हो गया। अब जीवनमें कौनसा सुख रखा है। विधाताकी लीला विचित्र है। संसारके और प्राणियोंका जीवन धर्म्मसे सफल होता है। अहिंसा ही सबकी मोक्षदाता है। मेरा जीवन अधर्मसे सफल हुआ, हिंसासे ही मेरा मोक्ष हो रहा है। अब कौन मुँह लेकर मधुवन जाऊँ, मैं कितनी ही पतिव्रता बनूँ, किसे विश्वास आयेगा? मैंने यहाँ कैसे अपना धर्म निबाहा, इसे कौन मानेगा।

हाय! किसकी होकर रहूँगी। हलधरका क्या ठिकाना। न जाने कितनी जानें ली होंगी, कितनोंका घर लूटा होगा, कितनोंके खूनसे हाथ रंगे होंगे, क्या-क्या कुकर्म किये होंगे।

वह अगर मुझे पतिता और कुलटा समझते हैं तो मैं भी उन्हें नीच और अधम समझती हूं। वह मेरी सूरत न देखना चाहते हों तो मैं उनकी परछाईं भी अपने ऊपर नहीं पड़ने देना चाहती। अब उनसे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं। मैं अनाथा हूं, अभागिनी हूँ, संसारमें कोई मेरा नहीं है।

(कोई किवाड़ खटखटाता है, लालटेन लेकर नीचे जाती है, और किवाड़ खोलती है ज्ञानीका प्रवेश)

ज्ञानी—बहिन क्षमा करना, 'तुम्हें असमय कष्ट दिया। मेरे स्वामीजी यहाँ हैं या नहीं। मुझे एक बार उनके दर्शन कर लेने दो।

राजे०—रानी जी, सत्य कहती हूं वह यहाँ नहीं आये।

ज्ञानी—यहाँ नहीं आये!

राजे०—न! जबसे गये हैं फिर नहीं आये।

ज्ञानी—घरपर भी नहीं हैं। अब किधर जाऊँ। भगवन्, उनकी रक्षा करना। बहिन, अब मुझे उनके दर्शन न होंगे। उन्होंने कोई भयङ्कर काम कर डाला। शंकासे मेरा हृदय काँप रहा है। तुमसे उन्हें प्रेम था। शायद वह एक बार फिर आयें। उनसे कह देना ज्ञानी तुम्हारे पदरजको शीशपर चढ़ानेके लिये आई थी। निराश होकर चली गई। उनसे कह देना वह अभागिनी, भ्रष्टा, तुम्हारे प्रेमके योग्य नहीं रही।

(हीरेकी कनी खा लेती है)

राजे०—रानीजी आप देवी हैं, वह पतित हो गये हों पर आपका चरित्र उज्ज्वल रत्न है। आप क्यों क्षोभ करती हैं।

ज्ञानी—बहिन, कभी यह घमण्ड था, पर अब नहीं है।

(उसका मुख पीला होने लगता है और पैर लड़खड़ाते हैं)

राजे०—रानीजी कैसा जी है ?

ज्ञानी—कलेजेमें आग सी लगी हुई है। थोड़ासा ठंढा पानी दो। मगर नहीं, रहने दो। जबान सूखी जाती है। कंठमें कांटे पड़ गये हैं। आत्मगौरवसे बढ़कर कोई चीज नहीं। उसे खोकर जिये तो क्या जिये।

राजे०—आपने कुछ खा तो नहीं लिया ?

ज्ञानी—तुम आज ही यहांसे चली जाव। अपने पतिके चरणोंपर गिरकर अपना अपराध क्षमा करा लो। वह वीरात्मा हैं। एक बार मुझे डाकुओंसे बचाया था। तुम्हारे ऊपर दया करेंगे। ईश्वर इस समय उनसे मेरी भेंट करवा देते तो मैं उनसे शपथ खाकर कहती, इस देवीके साथ तुमने बड़ा अन्याय किया है। वह ऐसी पवित्र है जैसे फूलकी पंखड़ियोंपर पड़ी हुई ओसकी बूंदें या प्रभात कालकी निर्मल किरणें। मैं सिद्ध करती कि इसकी आत्मा पवित्र है..........

(पीड़ासे विकल होकर बैठ जाती है)

राजेश्वरी—(मनमें) इन्होंने अवश्य कुछ खा लिया। आंखें पथराई जाती हैं, पसीना निकल रहा है। निराशा और लज्जाने अन्तमें इनकी जान ही लेकर छोड़ी; मैं इनकी प्राणघातिका हूं। मेरे ही करण इस देवीको जान जा रही है। इसे मर्य्याद-पालन कहते हैं। एक मैं हूँ कि कष्ट और अपमान भोगनेके लिये बैठी हूँ। नहीं, देवी, मुझे भी साथ लेती चलो। तुम्हारे साथ मेरी भी लाज रह जायगी। तुम्हें ईश्वरने क्या नहीं दिया। दूध, पूत, मान, महातम सभी कुछ तो है। पर केवल पतिके पतित हो जानेके कारण तुम अपने प्राण त्याग रही हो। तो मैं जिसका आंसू पोंछनेवाला भी कोई नहीं कौनसा सुख भोगनेके लिये बैठी रहूँ।

ज्ञानी—(सचेत होकर) पानी, पानी।

राजे०—(कटोरेमें पानी देती हुई) पी लीजिये।

ज्ञानी—(राजेश्वरीको ध्यानसे देखकर) नहीं रहने दो। पतिदेवके दर्शन कैसे पाऊँ। मेरे मरनेका हाल सुनकर उन्हें बहुत दुःख होगा। राजेश्वरी, उन्हें मुझसे बहुत प्रेम है। इधर वह मुझसे इतने लज्जित थे कि मेरी तरफ सीधी आंखसे ताक भी न सकते थे। (फिर अचेत हो जाती है)

राजे०—(मनमें) भगवन्, अब यह शोक देखा नहीं जाता। कोई और स्त्री होती तो मेरे खूनकी प्यासी हो जाती। इस

देवीके हृदयमें कितनी दया है। मुझे इतनी नीचो समझती है कि मेरे हाथका पानी भी नहीं पीती, पर व्यवहारमें कितनी भलमन्साहत है। मैं ऐसी दयाकी मूरतकी घातिका हूँ। मेरा क्या अन्त होगा !

ज्ञानी—हाय, पुत्रलालसा ! तूने मेरा सर्वनाश कर दिया। राजेश्वरी, साधुओंका भेस देखकर धोखेमें न आ जाना। (आंखें बन्द कर लेती है)

राजे०—कभी किसी साधुने इसे जटकर रास्ता लिया होगा। वही सुध आ रही है। तुम तो चली, मेरे लिये कौन रास्ता है। वह डाकू ही हो गये हैं। अबतक सबल सिंहके भयसे इधर न आते थे। अब वह मुझे कब जीना छोड़ेंगे। न जाने क्या-क्या दुर्गति करें। मैं जीना भी तो नहीं चाहती। मन, अब संसारकी मायामोह छोड़ो। संसारमें तुम्हारे लिये अब जगह नहीं है। हा ! यही करना था तो पहले ही क्यों न किया। तीन प्राणियोंकी जान लेकर तब यह सूझी। कदाचित् तब मुझे मौतसे इतना डर न लगता। अब तो जमराजका ध्यान आते ही रोयें खड़े हो जाते हैं। पर यहां की दुर्दशासे वहांकी दुर्दशा तो अच्छी। कोई हसनेवाला तो न होगा।

(रस्सीका फन्दा बनाकर छतसे लटका देती है)

बस, एक झटकेमें काम तमाम हो जायगा। इतनीसी जानके

लिये आदमी कैसे-कैसे जतन करता है। (गलेमें फन्दा डालती है) दिल कांपता है। जरासा फन्दा खींच लूं और बस। दम घुटने लगेगा। तड़प-तड़पकर जान निकलेगी। (भयसे कांप उठती है) मुझे इतना डर क्यों लगता है। मैं अपनेको इतनी कायर न समझती थी। सासके एक तानेपर, पतिकी एक कड़ी बातपर, स्त्रियां प्राण दे देती हैं। लड़कियां अपने विवाहकी चिन्तासे मातापिताको बचानेके लिये प्राण दे देती हैं। पहले स्त्रियां पतिके साथ सती हो जाती थीं। डर क्या है? जो भगवान यहां हैं वही भगवान वहां हैं। मैंने कोई पाप नहीं किया है। एक आदमी मेरा धर्म बिगाड़ना चाहता था। मैं और किसी तरह उससे न बच सकती थी। मैंने कौशलसे अपने धर्मकी रक्षा की। यह पाप नहीं किया। मैं भोग-विलासके लोभसे यहां नहीं आई। संसार चाहे मेरी कितनी ही निन्दा करे, ईश्वर सब जानते हैं। उनसे डरनेका कोई काम नहीं।

(फन्दा *खींच लेती है*)

(*तलवार लिये हलधरका प्रवेश*)

हलधर—(आश्चर्यसे) अरे! यहां तो इसने फांसी लगा रखी है (तलवारसे तुरत रस्सी काट देता है और राजेश्वरीको सँभालकर फर्शपर लिटा देता है)

राजेश्वरी—(सचेत होकर) वही तलवार मेरी गर्दनपर

क्यों नहीं चला देते ?

हलधर—जो आप ही मर रही है उसे क्या मारूं।

राजे०—अभी इतनी दया है ?

हलधर—वह तुम्हारी लाजकी तरह बाजारमें बेचनेकी चीज नहीं है।

ज्ञानी—कौन कहता है कि इसने अपनी लाज बेच दी। यह आज भी उतनी ही पवित्र है जितनी अपने घर थी। उसने अपनी लाज बेचनेके लिये इस मार्गपर पग नहीं रखा, बल्कि अपनी लाजकी रक्षा करनेके लिये। अपनी लाजकी रक्षाके लिये इसने मेरे कुलका सर्वनाश कर दिया। इसीलिये इसने यह कपटभेष धारण किया। एक सम्पन्न पुरुषसे बचनेका इसके सिवा और कौनसा उपाय था। तुम उसपर लांछन लगाकर बड़ा अन्याय कर रहे हो। उसने तुम्हारे कुलको कलङ्कित नहीं किया बल्कि उसे उज्ज्वल कर दिया। ऐसी बिरला ही कोई स्त्री ऐसी अवस्थामें अपने व्रतपर अटल रह सकती थी। वह चाहती तो आजीवन सुख भोग करती, पर इसने धर्मको स्वाद-लिप्साकी भेंट नहीं चढ़ाया......आह ! अब नहीं बोला जाता। बहुत सी बातें मनमें थीं......सिरमें चक्कर आ रहा है......स्वामीके दर्शन न कर सकी.........

(बेहोश हो जाती है)

हलधर—ज्ञानी हैं क्या ?

राजे०—सबलका दर्शन पानेकी आशासे यहाँ आई थीं, किन्तु बिचारीकी लालसा मनमें रही जाती है। न जाने उनकी क्या गत हुई ?

हलधर—मैं अभी उन्हें लाता हूं।

राजे०—क्या अभी वह......

हलधर—हाँ, उन्होंने प्राण देना चाहा था, पिस्तौलका निशाना छातीपर लगा लिया था, पर मैं पहुँच गया और उनके हाथसे पिस्तौल छीन ली। दोनों भाई वहीं हैं। तुम इनके मुँहपर पानीके छींटे देती रहना। गुलाबजल तो रखा ही होगा, उसे इनके मुँहमें टपकाना, मैं अभी आता हूँ।

(*जल्दीसे चला जाता है*)

राजे०—(मनमें) मैं समझती थी इनका स्वरूप बदल गया होगा। दया नामको भी न रही होगी। नित्य डाका मारते होंगे, आचरन भ्रष्ट हो गया होगा। पर इनकी आंखोंमें तो दयाकी जोत झलकती हुई दिखाई देती है। न जाने कैसे दोनों भाइयों-की जान बचा ली। कोई दूसरा होता तो उनकी घातमें लगा रहता और अवसर पाते ही प्राण ले लेता। पर इन्होंने उन्हें मौतके मुँहमेंसे निकाल लिया। क्या ईश्वरकी लीला है कि एक हाथसे विष पिलाते हैं और दूसरे हाथसे अमृत। मुझीको कौन

बचाता। सोचता कि मर रही है मरने दो। शायद यह मुझे मारनेके ही लिये यहां तलवार लेकर आये होंगे। मुझे इस दशामें देखकर दया आ गई। पर इनकी दयापर मेरा जी झुंझला रहा है। मेरी यह बदनामी, यह जगहंसाई बिलकुल निष्फल हो गई। इसमें जरूर ईश्वरका हाथ है। सबल सिंहके परोपकारने उन्हें बचाया। कंचनसिंहकी भक्तिने उनकी रक्षा की। पर इस देवीकी जान व्यर्थ जा रही है। इसका दोष मेरी गरदनपर है। इस एक देवीपर कई सबलसिंह भेंट किये जा सकते हैं। (ज्ञानी-को ध्यानसे देखकर) आंखें पथरा गईं. सांस उखड़ गई, पतिके दर्शन न कर सकेंगी, मनकी कामना मनमेंही रह गई। (गुलाब-के छींटे देकर) छन भर और........

ज्ञानी—(आंखें खोलकर) क्या वह आ गये? कहाँ हैं, जरा मुझे उनके पैर दिखा दो।

राजे०—(सजल नयन होकर) आते ही होंगे, अब देर नहीं है। गुलाबजल पिलाऊं ?

ज्ञानी—(निराशासे) न आयेंगे, कह देना तुम्हारे चरणोंकी याद......मूर्च्छित हो जाती है।

(चेतनदासका प्रवेश)

राजे०—यह समय भिक्षा मांगनेका नहीं है। आप यहां कैसे चले आये ?

चेतन—इस समय न आता तो जीवनपर्यन्त पछताता। क्षमादान मांगने आया हूं।

राजे०—किससे?

चेतन—जो इस समय प्राण त्याग रही है।

ज्ञानी—(आंखें खोलकर) क्या वह आ गये? कोई अचलको मेरी गोदमें क्यों नहीं रख देता।

चेतन—देवी, सबके सब आ रहे हैं। तुम ज़रा यह जड़ी मुंहमें रख लो। भगवान चाहेंगे तो सब कल्याण होगा।

ज्ञानी—कल्याण अब मेरे मरनेमें ही है।

चेतन—मेरे अपराध क्षमा करो।

(ज्ञानीके पैरोंपर गिर पड़ता है)

ज्ञानी—यह भेष त्याग दो। भगवान तुमपर दया करें।

(उनके मुंहसे खून निकलता है और प्राण निकल जाते हैं, अन्तिम शब्द उनके मुंहसे यही निकलता है "अचल तू अमर हो।")

राजे०—अन्त हो गया (रोती है) मनकी अभिलाषा मनमें ले गई। पति और पुत्रसे भेंट न हो सकी।

चेतन—देवी थी।

(सबलसिंह, कंचन सिंह, अचल, हलधर सब आते हैं)

राजे०—स्वामीजी, कुछ अपनी सिद्धि दिखाइये। एक पल

अरके लिये सचेत हो जातीं तो उनकी आत्मा शांत हो जाती।

चेतन—अब ब्रह्मा भी आयें तो कुछ नहीं कर सकते।

(अचल रोता हुआ मांके शवसे लिपट जाता है, सबलको ज्ञानीकी तरफ देखनेकी भी हिम्मत नहीं पड़ती)

राजे०—आप लोग एक पलभर पहले आ जाते तो इनकी मनोकामना पूरी हो जाती। आपकी ही रट लगाये हुए थीं। अन्तिम शब्द जो उनके मुंहसे निकला वह अचल सिंहका नाम था।

सबल—यह मेरी दुष्टताका दंड है। हलधर, अगर तुमने मेरी प्राणरक्षा न की होती तो मुझे यह शोक न सहना पड़ता। ईश्वर बड़े न्यायी हैं। मेरे कर्मों का इससे उचित दण्ड हो ही नहीं सकता था। मैं तुम्हारे घरका सर्वनाश करना चाहता था। विधाताने मेरे घरका सर्वनाश कर दिया। आज मेरी आंखें खुल गईं। मुझे विदित हो रहा है कि ऐश्वर्य्य और सम्पत्ति जिसपर मानव-समाज मिटा हुआ है, जिसकी आराधना और भक्तिमें हम अपनी आत्माओंको भी भेंट कर देते हैं वास्तवमें एक प्रचण्ड ज्वाला है जो मनुष्यके हृदयको जलाकर भस्म कर देती है। यह समस्त पृथ्वी किन प्राणियोंके पापभारसे दबी हुई है? वह कौनसे लोग हैं जो दुर्व्यसनोंके पीछे नाना प्रकारके पापाचार कर रहे हैं? वेश्याओंकी अट्टालिकाएं किन लोगोंके दमसे रौनक

पर हैं? किनके घरोंकी महिलाएं रो-रोकर अपना जीवनक्षेप कर रही हैं? किनकी बन्दूकोंसे जंगलके जानवरोंकी जान संकटमें पड़ी रहती है? किन लोगोंकी महत्वाकांक्षाओंको पूरा करनेके लिये आये दिन समरभूमि रक्तमयी होती रहती है? किनके सुखभोगके लिये गरीबोंको आये दिन बेगारें भरनी पड़ती हैं? यह वही लोग हैं जिनके पास ऐश्वर्य है, सम्पत्ति है, प्रभुता है, बल है। उन्हींके भारसे पृथ्वी दबी हुई है, उन्हींके नखोंसे ससार पीड़ित हो रहा है। सम्पत्ति ही पापका मूल है, इसीसे कुवासनाएं जागृत होती हैं, इसीसे दुर्व्यसनोंकी सृष्टि होती है। गरीब आदमी अगर पाप करता है तो क्षुधाकी तृप्तिके लिये। धनी पुरुष पाप करता है अपनी कुवृत्तियों, और कुवासनाओंकी पूर्त्तिके लिये। मैं इसी व्याधिका मारा हुआ हूँ। विधाताने मुझे निर्धन बनाया होता, मैं भी अपनी जीविकाके लिये पसीना बहाता होता, अपने बाल बच्चोंके उदर-पालनके लिये मजूरी करता होता तो मुझे यह दिन न देखना पड़ता, यों रक्तके आंसू न रोने पड़ते। धनीजन पुण्य भी करते हैं, दान भी करते हैं, दुखी आदमियोंपर दया भी करते हैं। देश-में बड़ी-बड़ी धर्मशालाएं, सैकड़ों पाठशालाएं, चिकित्सालय, तालाब, कूएं उनकी कीर्तिके स्तम्भ रूप खड़े हैं, उनके दानसे सदाव्रत चलते हैं, अनाथों और विधवाओंका पालन होता है,

साधुओं और अतिथियोंका सत्कार होता है, कितने ही विशाल मन्दिर सजे हुए हैं; विद्याकी उन्नति हो रही है लेकिन उनकी अपकीतियोंके सामने उनकी सुकीर्तियां अंधेरी रातमें जुगुनूकी चमकके समान हैं, जो अन्धकारको और भी गहन बना देती हैं। पापकी कालिमा दान और दयासे नहीं धुलती। नहीं मेरा तो यह अनुभव है कि धनी जन कभी पवित्र भावोंसे प्रेरित हो ही नहीं सकते। उनकी दानशीलता, उनकी भक्ति, उनकी उदारता, उनकी दीनवत्सलता वास्तवमें उनके स्वार्थको सिद्ध करनेका साधन मात्र है। इसी टट्टीकी आड़में वह शिकार खेलते हैं। हाय! तुम लोग मनमें सोचते होगे यह रोने और विलाप करनेका समय है; धन और सम्पदाकी निन्दा करनेका नहीं। मगर मैं क्या करूँ, आंसुओंकी अपेक्षाइ न जले हुए शब्दोंसे इन फफोलोंके फोड़नेसे, मेरे चित्तको अधिक शांति मिल रही है। मेरे शोक, हृदयदाह और आत्मग्लानिका प्रवाह केवल लोचनों द्वारा नहीं हो सकता, उसके लिये ज्यादा चौड़े, ज्यादा स्थूल मार्गकी जरूरत है। हाय! इस देवीमें अनेक गुण थे। मुझे याद नहीं आता कि, इसने कभी एक अप्रिय शब्द भी मुझसे कहा हो, वह मेरे प्रेममें मग्न थी। आमोद और विलाससे उसे लेशमात्र भी प्रेम न था। वह संन्यासियोंका जीवन व्यतीत करती थी। मेरे प्रति उसके हृदयमें कितनी श्रद्धा थी, कितनी शुभका-

मना। जबतक जीयी मेरे लिये जीयी और जब मुझे सत्पथसे हटते देखा तो यह शोक उसके लिये असह्य हो गया। हाय ! मैं जानता कि वह ऐसा घातक संकल्प कर लेगी तो अपने आत्म-पतनका वृत्तान्त उससे न कहता। पर उसकी सहृदयता और सहानुभूतिके रसास्वादनसे मैं अपनेको रोक न सका। उसकी वह क्षमा, वह आत्मकृपा कभी न भूलेगी जो इस वृत्तान्तको सुनकर उसके उदास मुखपर झलकने लगी। रोष या क्रोधका लेशमात्र भी चिह्न न था। वह दयामूर्ति सदाके लिये मेरे हृदय-गृहको उजाड़ कर अदृश्य हो गई। नहीं, मैंने उसे पटक कर चूर चूर कर दिया। (रोता है) हा ! उसकी याद अब मेरे दिलसे कभी न निकलेगी।

चतुर्थ दृश्य

(स्थान—गुलाबीका मकान, समय—१० बजे रात।)

गुलाबी—अब किसके बलपर कूदूँ। पास जो जमा-पूँजी थी वह निकल गई। तीन चार दिनके अन्दर क्यासे क्या हो गया। बना-बनाया घर उजड़ गया। जो राजा थे वह रङ्क हो गये। जिस देवीकी बदौलत इतनी उम्र सुखसे कटी वह संसारसे उठ गयीं। अब वहाँ पेटकी रोटियोंके सिवा और क्या रखा है। न उधर ही कुछ रहा, न इधर ही कुछ रहा। दोनों लोकसे गई। उस कलमुँहें साधुका कहीं पता नहीं। न जाने कहाँ लोप हो गया। रंगा हुआ सियार था। मैं भी उसके छलमें आ गई। अब किसके बलपर कूदूं। बेटा-बहू योंही बात न पूछते थे, अब तो एक बूंद पानीको तरसूँगी। अब किस दावेसे कहूँगी, मेरे नहानेके लिये पानी रख दे, मेरी साड़ी छांट दे, मेरा बदन दाब दे। किस दावेपर धौंस जमाऊँगी। सब रुपयेके मीत हैं। दोनों जानते थे अम्माके पास धन है। इसीलिये डरते थे, मानते

थे, जिस कल चाहती थी उठाती थी, जिस कल चाहती थी बैठाती थी। उस धूर्त साधुको पाऊँ तो सैकड़ों गालियाँ सुनाऊँ, मुँह नोच लूँ। अब तो मेरी दशा उस बिल्लीकी सी है जिसके पंजे कट गये हों, उस बिच्छूकीसी जिसका डङ्क टूट गया हो, उस रानीकी सी जिसे राजाने आँखोंसे गिरा दिया हो।

चम्पा—अम्माँ चलो, रसोई तैयार है।

गुलाबी—चलो बेटी, चलती हूं। आज मुझे ठाकुर साहबके घरसे आनेमें देर हो गई। तुम्हें बैठनेका कष्ट हुआ।

चम्पा—(मनमें) अम्माँ आज इतने प्यारसे क्यों बातें कर रही हैं; सीधी बात मुंहसे निकलती ही न थी। (प्रगट) कुछ कष्ट नहीं हुआ, अम्माँ, कौन अभी तो ९ बजे हैं।

गुलाबी—भृगुनाथने भोजन कर लिया है न ?

चम्पा—(मनमें) कल तक तो अम्माँ पहले ही खा लेती थीं बेटेको पूछती तक न थीं, आज क्यों इतनी खातिर कर रही हैं (प्रगट) तुम चलकर खालो, हम लोगोंको तो सारी रात पड़ी है।

(गुलाबी रसोईमें जाकर अपने हाथोंसे पानी निकालती है।)

चम्पा—तुम बैठो अम्माँ, मैं पानी रख देती हूं।

गुलाबी—नहीं बेटी, मटका भरा है, तुम्हारी आस्तीन भीग जायगी।

चम्पा—(पंखा झलने लगती है) नमक तो ज्यादा नहीं हो

गया ?

गुलाबी—पंखा रख दो बेटी, आज गरमी नहीं है। दालमें जरा नमक ज्यादा हो गया है, लाओ थोड़ा सा पानी मिलाकर खा लूँ।

चम्पा—मैं बहुत अन्दाजसे छोड़ती हूँ मगर कभी-कभी कम बेस हो ही जाता है।

गुलाबी—बेटी, नमकका अन्दाज्ञ बुढ़ापेतक ठीक नहीं होता, कभी-कभी धोखा हो ही जाता है।

(भृगु आता है)

आओ बेटा, खाना खा लो, देर हो रही है। क्या हुआ कञ्चन सिंहके यहाँ जवाब मिल गया ?

भृगु—(मनमें) आज अम्माकी बातोंमें कुछ प्यार भरा हुआ जान पड़ता है। (प्रकट) नहीं अम्मां, सच पूछो तो आज ही मेरी नौकरी लगी है। ठाकुरद्वारा बनवानेके लिये मसाला जुटाना मेरा काम तय हुआ है।

गुलाबी—बेटा, यह धरमका काम है, हाथ-पांव संभाल कर रहना।

भृगु—दस्तूरी तो छोड़ता नहीं, और कहीं हाथ मारनेकी गुञ्जाइश नहीं। ठाकुरजी सीधे दे दें तो उङ्गली क्यों टेढ़ी करनी पड़े।

(भोजन करने बैठता है)

चम्पा—(भृगुसे) कुछ और लेना हो तो लेलो, मैं जाती हूँ अम्माँका बिछावन बिछाने।

गुलाबी—रहने दो बेटी, मैं आप बिछा लूंगी।

भृगु—(चम्पासे) यह आज दालमें नमक क्यों झोंक दिया। नित्य यही काम करती हो फिर भी तमीज नहीं आती।

चम्पा—ज्यादा हो गया, हाथ ही तो है।

भृगु— शर्म नहीं आती ऊपरसे हेंकड़ी करती हो।

गुलाबी—जाने दो बेटा, अन्दाज न मिला होगा। मैं तो रसोई बनाते-बनाते बुड्ढी हो गई लेकिन कभी-कभी निमक घट बढ़ जाता ही है।

भृगु—(मनमें) अम्मां आज क्यों इतनी मुलायम हो गई हैं। शायद ठाकुरोंका पतन देखके इनकी आंखें खुल गई हैं। यह अगर इसी तरह प्यारसे बातें करें तो हमलोग तो इनके चरण धो-धोकर पियें। (प्रगट) मैं तो किसी तरह खा लूंगा पर तुम तो न खा सकोगी।

गुलाबी—खा लिया बेटा, एक दिन जरा नमक ज्यादा ही सही। देखो बेटी, खा-पीकर आरामसे सो रहना, मेरा बदन दाबने मत आना। रात अधिक गई है।

चम्पा—(मनमें) आज तो ऐसा जी चाहता है कि इनके

चरण धोकर पीऊं। इसी तरह रोज रहें तो फिर यह घर स्वर्ग हो जाय। (प्रगट) जरा बदन दबा देनेसे कौन बड़ी रात निकल जायगी।

गुलाबी—(मनमें) आज कितने प्रेमसे बहू मेरी सेवा कर रही है, नहीं तो जरा-जरा सी बातपर नाक-भौं सिकोड़ा करती थी। (प्रगट) जी चाहे तो थोड़ी देरके लिये आजाना, तुम्हें प्रेमसागर सुनाऊंगी।

(चेतनदासका प्रवेश)

गुलाबी—(आश्चर्य्यसे) महाराज ! आप कहां चले गये थे ? मैं दिनमें कई बार आपकी कुटीपर गई।

चेतनदास—आज मैं एक कार्य्यवश बाहर चला गया था। अब एक महान् तीर्थपर जानेका विचार है। अपना धन ले लो, गिन लेना, कुछ न कुछ अधिक ही होगा। मैं वह मन्त्र भूल गया जिससे धन दूना हो जाता था।

गुलाबी—(चेतनदासके पैरोंपर गिरकर) महाराज, बैठ जाइये, आपने यहां तक आनेका कष्ट किया है, कुछ भोजन कर लीजिये। कृतार्थ हो जाऊंगी।

चेतन—नहीं माताजी, मुझे विलम्ब होगा। मुझे आज्ञा दो और मेरी यह बात ध्यानसे सुनो। आगे किसी साधु महात्माको अपना धन दूना करनेके लिये मत देना नहीं तो धोखा खाओगी।

(चम्पा और भृगु आकर चेतनदासके चरण छूते हैं)

माता, तेरे पुत्र और बधू बहुत सुशील दीखते हैं। परमात्मा इनकी रक्षा करें। तू भूल जा कि मेरे पास धन है। धनके बलसे नहीं, प्रेमके बलसे अपने घरमें शासन कर।

(चेतनदासका प्रस्थान)

पांचवां दृश्य

(स्थान—स्वामी चेतनदासकी कुटी, समय—रात, चेतनदास गङ्गा-तटपर बैठे हैं।)

चेतनदास—(आपही आप) मैं हत्यारा हूँ, पापी हूँ, धूर्त्त हूँ। मैंने सरल प्राणियोंको ठगनेके लिये यह भेष बनाया है। मैंने इसीलिये योगकी क्रियाएं सीखीं, इसीलिये हिप्नाटिज्म सीखा। मेरा लोग कितना सम्मान, कितनी प्रतिष्ठा करते हैं। पुरुष मुझसे धन मांगते हैं, स्त्रियां मुझसे सन्तान मांगती हैं। मैं ईश्वर नहीं कि सबकी मुरादें पूरी कर सकूं तिसपर भी लोग मेरा पिण्ड नहीं छोड़ते।

मैंने कितने घर तबाह किये, कितनी सती स्त्रियोंको जालमें फंसाया, कितने निश्छल पुरुषोंको चकमा दिया। यह सब स्वांग केवल सुखभोगके लिये, मुझपर धिक्कार है!

पहले मेरा जीवन कितना पवित्र था। मेरे आदर्श कितने ऊंचे थे। मैं संसारसे विरक्त होगया था। पर स्वार्थी संसारने

मुझे खींच लिया। मेरी इतनी मान-प्रतिष्ठा थी कि मैं पाखण्डी हो गया, नरसे पिशाच हो गया। हां,मैं पिशाच हो गया।

हा! मेरे कुकर्म मुझे चारों ओरसे घेरे हुए हैं। उनके स्वरूप कितने भयङ्कर हैं। वह मुझे निगल जायंगे। भगवन्,मुझे बचाओ। वह सब अपने मुँह खोले मेरी ओर लपके चले आते हैं।

(आंखें बन्द कर लेते हैं)

ज्ञानी! ईश्वरके लिये मुझे छोड़ दो। कितना विकराल स्वरूप है। तेरे मुखसे ज्वाला निकल रही है। तेरी आंखोंसे आगकी लपटें आ रही हैं। मैं जल जाऊँगा, झुलस जाऊँगा। भस्म हो जाऊँगा। तू कैसी सुन्दरी थी। कैसी कोमलांगी थी! तेरा यह रौद्र रूप नहीं, तू वह सती नहीं,वह कमलकोसी आंखें, वह पुष्पकेसे कपोल कहाँ हैं। नहीं, यह मेरे अधर्मों का, मेरे दुष्कर्मों का मूर्तिमान स्वरूप है, मेरे दुष्कर्मों ने यह पैशाचिक रूप धारण किया है। यह मेरे ही पापोंकी ज्वाला है। क्या मैं अपने ही पापोंकी आगमें जलूँगा? अपने ही बनाये हुए नर्कमें पड़ूंगा?

(आंखें बन्द करके हाथोंसे हटानेकी चेष्टा करके)

नहीं, मैं ईश्वरकी शपथ खाता हूँ, अब कभी ऐसे कर्म न करूँगा। मुझे प्राण दान दे। आह, कोई विनय नहीं सुनता। ईश्वर मेरी क्या गति होगी। मैं इस पिशाचिनीके मुखका ग्रास

बना जा रहा हूँ। यह दयाशून्य, हृदयशून्य राक्षसी मुझे निगल जायगी। भगवन्! कहां जाऊँ, कहां भागूँ। अरे रे......जल।

(दौड़कर नदीमें कूद पड़ता है, और एक बार फिर ऊपर आकर नीचे डूब जाता है)

छठा दृश्य

(स्थान—मधुबन, समय—सावनका महीना, पूजा उत्सव, ब्रह्मभोज, राजेश्वरी और सलोनी गांवकी अन्य स्त्रियोंके साथ गहने-कपड़े पहने पूजा करने जा रही ।)

गीत—

जय जगदीश्वरी मात सरस्वती,
सरनागत प्रतिपालनहारी ।
चन्द जोतसा बदन बिराजे,
सीस मुकुट माला गलधारी—जय०
बीना बाम अङ्गमें सोहै,
सामगीत धुन मधुर पियारी—जय०
श्वेत बसन्न कमलासन सुन्दर,
सङ्ग सखी अरु हंस सवारी—जय०

सलोनी—(देवीकी पूजा करके राजेश्वरीसे) आ तेरे गलेमें माला डाल दूँ, तेरे माथेपर भी टीका लगा दूँ । तू भी हमारी

देवी है। मैं जीती रही तो इस गांवमें तेरा मन्दिर बनवाकर छोड़ूंगी।

एक वृद्धा—साच्छात् देवी है। इसके कारन हमारे भाग जाग गये, नहीं तो बेगार भरने, और रो-रोकर दिन काटनेके सिवा और क्या था।

सलोनी—(राजेश्वरीसे) क्यों बेटी, तूने वह विद्या कहां पढ़ी थी। धन्न है तेरे माई-बापको जिनके कोखसे तूने जन्म लिया। मैं तुझे नित्य कोसती थी, कुलकलङ्किनी कहती थी। क्या जानती थी कि तू वहां सबके भाग संवार रही है।

राजेश्वरी—काकी मैंने तो कुछ नहीं किया। जो कुछ हुआ ईश्वरकी दयासे हुआ। ठाकुर सबलसिंह देवता हैं। मैं तो उनसे अपने अपमानका बदला लेने गई थी। मनमें ठान लिया था कि उनके कुलका सर्वनाश करके छोड़ूंगी। अगर तुम्हारे भतीजेने उनकी जान न बचा ली होती तो आज कोई कुलमें पानी देने-वाला भी न रहता।

सलोनी—ईश्वरकी लीला अपार है।

राजेश्वरी—ज्ञानीदेवीने अपने प्राण देकर हम सभोंको उबार लिया। इस शोकने ठाकुर साहबको विरक्त कर दिया। कोई दूसर समझता बलासे मर गई, दूसरा ब्याह कर लेंगे, संसारमें कौन लड़कियोंकी कमी है। लेकिन उनके मनमें दया और धर्मकं

जोत चमक रही थी। ग्लानि उत्पन्न हुई कि मैंने इस कुमार्गपर पैर न रखा होता तो यह देवी क्यों लज्जा और शोकसे आत्म-हत्या करती। उनके मनने कहा, तुम्हीं हत्यारे हो, तुम्हींने इस-की गरदनपर छुरी चलाई है। इसी ग्लानिकी दशामें उनको विदित हुआ कि इन सारी विपत्तियोंका मूल कारन मेरी संपत्ति है। यह न होती तो मेरा मन इतना चंचल न होता। ऐसी सम्पत्ति ही को क्यों न त्याग दूं जिससे ऐसे-ऐसे अनर्थ होते हैं। मैं तो बखानूंगी उस दुधमुंहे अचलसिंहको जो ठाकुर साहबके मुंहसे बात निकलते ही सब कोठी, महल, बाग-बगीचा त्यागनेपर तैयार हो गया। उनके छोटे भाई कञ्चनसिंह पहले हीसे भगवत-भजनमें मगन रहते थे। उनकी अभिलाषा एक ठाकुरद्वारा और एक धर्मशाला बनवाने की थी। राजभवन खाली हो गया। उसीको धर्मशाला बनायेंगे। घरमें सब मिला-कर कोई पचास साठ हजार नगद रुपये थे। हवागाड़ी, फिटिन, घोड़े, लकड़ीके सामान, झाड़-फन्नूस, पलंग, मसहरी, कालीन, दरी, इन सब चीजोंके बेचनेसे पचीस हजार मिल गये, दस हजारके ज्ञानीदेवीके गहने थे। वह भी बेच दिये गये। इस तरह सब जोड़कर एक लाख रुपये ठाकुरद्वाराके लिये जमा हो गये। ठाकुरद्वारेके पास ही ज्ञानीदेवीके नामका एक पक्का तालाब बनेगा। जब कोई लोभ ही न रह गया तो जमींदारी

रखकर क्या करते। सब जमीन असामियोंके नाम दर्ज कराके तीरथयात्रा करने चले गये।

सलोनी—और अचल सिंह कहां गया। मैं तो उसे देख लेती तो छातीसे लगा लेती। लड़का नहीं है भगवानका अवतार है।

एक स्त्री—उसके चरन धोकर पीना चाहिये।

राजे०—गुरुकुलमें पढ़ने चला गया। कोई नौकर भी साथ नहीं लिया। अब अकेले कंचनसिंह रह गये हैं। वह ठाकुरद्वारा बनवा रहे हैं।

सलोनी—अच्छा अब चलो, अभी १० मनकी पूरियां बेलनी हैं।

(सब स्त्रियाँ गाती हुई लौटती हैं, लक्ष्मीकी स्तुति करती हुई जाती हैं)

फत्तू—चलो, चलो, कड़ाहकी तैयारी करो। रात हुई जाती है। हलधर देखो, देर न हो, मैं जाता हूं मौलूद सरीफका इन्तजाम करने। फरस और सामियाना आ गया।

हलधर—तुम उधर थे इधर थानेदार आये थे ठाकुर सबलसिंहकी खोजमें। कहते थे इनके नाम वारण्ट है। मैंने कह दिया उन्हें जाकर अब स्वर्गधाममें तलास करो। मगर यह तो आनेका बहाना था। असलमें आये थे नजर लेने। मैंने कहा,

नजर तो देते नहीं, हाँ हजारों रुपये खैरात हो रहे हैं तुम्हारा जी चाहे तुम भी ले लो। मैंने तो समझा था कि यह सुनकर अपनासा मुँह लेके चला जायगा लेकिन इस महकमेवालोंको हया नहीं होती, तुरन्त हाथ फैला दिये। आखिर मैंने २५) हाथ पर रख दिये।

फत्तू—कुछ बोला तो नहीं ?

हलधर—बोलता क्या, चुपकेसे चला गया।

फत्तू—गानेवाले आ गये ?

हलधर—हां, चौपालमें बैठे हैं, बुलाता हूं।

मँगरू—(गाँवकी ओरसे आकर) हलधर भैया, सबकी सलाह है कि तुम्हारा बिमान सजाकर निकाला जाय, वहाँसे लौटनेपर गाना-बजाना हो।

हरदास—तुम्हारी बदौलत सब कुछ हुआ है, तुम्हारा कुछ तो महाराम होना चाहिये।

हलधर—मैंने कुछ नहीं किया। सब भगवानकी इच्छा है। जरा गानेवालोंको बुला लो।

(*हरदास जाता है*)

मँगरू—भैया, अब तो जमींदारको मालगुजारी न देनी पड़ेगी ?

हलधर—अब तो हम आप ही जमींदार हैं, मालगुजारी

सरकारको देंगे।

मँगरू—तुमने कागद-पत्तर देख लिये हैं? रजिस्टरी हो गई है न?

हलधर—मेरे सामने ही हो गई थी।

(हलधर किसी कामसे चला जाता है, हरदास गानेवालोंको बुला लाता है, वह सब साज़ मिलाने लगते हैं)

मँगरू—(हरदाससे) इसमें हलधरका कौन एहसान है। इनका बस होता तो सब अपने ही नाम चढ़वा लेते।

हरदास—एहसान किसीका नहीं है। ईश्वरकी जो इच्छा होती है वही होता है। लेकिन यह तो समझ रहे हैं कि मैं ही सबका ठाकुर हूं। जमीनपर पाँव ही नहीं रखते। चन्देके रुपये ले लिये लेकिन हमसे कोई सलाहतक नहीं लेते। फत्तू और यह दोनों जो जी चाहता है करते हैं।

मँगरू—दोनों खासी रकम बना लेंगे। दो हजार चन्दा उतरा है। खरच वाजिबी ही वाजिबी हो रहा है।

(गाना होता है)

जगदीश सकल जगतका तू ही अधार है

भूमि, नीर, अगिन, पवन, सूरज, चन्द, शैल, गगन,
तेरा किया चौदह भुवनका पसार है। जगदीश०

सुर, नर, पशु, जीव-जन्तु, जल थल चर हैं अनंत,

तेरी रचनाका नहीं अन्त पार है। जगदीश०

करुनानिधि, बिश्वभरण, शरणागत तापहरण,
सच चित सुख रूप सदा निरविकार है। जगदीश०

निरगुन सब गुन निधान निगमागम करत गान,
सेवक नमन करत बार बार है। जगदीश०

ड्रॉप